I.S.S.N. 0975-6531

₹50/-

वैचारिकी

मार्च-अप्रैल, मई-जून 2021 (संयुक्तांक) * भाग 37 - अंक 2-3

माधोदास मूंधड़ा स्मृति विशेषांक

25 फरवरी 1918 - 1 अप्रैल 1999

• वैचारिकी •

मार्च-अप्रैल • मई-जून 2021 (संयुक्तांक) भाग 37 - अंक 2-3

बाएं से राजस्थान से पधारे वरिष्ठ कवि एवं
दामोदरदासजी डागा, माधोदासजी मूंधड़ा।

इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ इंजीनियर्स द्वारा अंतरराष्ट्रीय
संगोष्ठी में माधोदासजी मूंधड़ा का अभिनंदन।

भा. सं. संसद की सप्तस्वर संगोष्ठी में मूंधड़ाजी द्वारा
सांगीतिक प्रस्तुति। तानपुरा पर रमणलालजी बिन्नाणी।

बाएं से-लक्ष्मीनिवासजी बिड़ला,
सीतारामजी सेकसरिया एवं मूंधड़ाजी।

माधोदासजी मूंधड़ा द्वारा सांगीतिक प्रस्तुति।
तानपुरा पर रमणलालजी बिन्नाणी।

बाएं से-श्रीमती रविप्रभा बर्मन, श्री बिमल लाठ, संगीताचार्य
प्रो. ज्ञानप्रकाश घोष पद्मश्री (भारतीय संगीत पर वक्तव्य देते
हुए), श्री माधोदास मूंधड़ा, श्री परमानन्द चूड़ीवाल।

वैचारिकी

भारतीय विद्या मन्दिर की द्वैमासिक शोध प्रधान पत्रिका

वर दे, वीणावादिनि वर दे !
प्रिय स्वतंत्र-रव अमृत-मंत्र नव भारत में भर दे !
काट अंध-उर के बंधन-स्तर बहा जननि, ज्योतिर्मय निर्झर;
कलुष-भेद-तम हर प्रकाश भर जगमग जग कर दे!
वर दे, वीणावादिनि वर दे!

अध्यक्ष

डॉ. बिट्ठलदास मूंधड़ा

सम्पादक

डॉ. बाबूलाल शर्मा

प्रबंध सम्पादक

शंकरलाल सोमानी

कार्यालय
भारतीय विद्या मंदिर
12/1, नेली सेनगुप्ता सरणी
कोलकाता-700 087
दूरभाष : 033-71001614
मो. : 09830559364
ई-मेल : bvm.vaichariki@gmail.com
Website : www.bharatiyavidyamandir.org

सदस्यता शुल्क
वार्षिक 300/- रुपये
द्वैवार्षिक 600/- रुपये

भुगतान
Payee's Name:
BHARATIYA VIDYA MANDIR
Current A/c No. : 32030320176
Bank : STATE BANK OF INDIA
Branch: New Market
IFSC Code No. : SBIN0004662

ISSN 0975-6531 **भाग : 37 अंक : 2-3**

वैचारिकी

धर्म-दर्शन-विज्ञान, साहित्य-लोकसाहित्य, इतिहास-पुरातत्व, कला-लोककला
विश्वविद्यालय अनुदान आयोग से मान्यता प्राप्त

मार्च-जून, 2021 ईस्वी ✷ फाल्गुन कृष्ण 2 वि. सं. 2077 से आषाढ़ कृष्ण 6, 2078 वि. सं. ✷ ₹ 50/-

संस्थापक माधोदास मूंधड़ा स्मृति विशेषांक

अनुक्रम

- **अध्यक्षीय** 3
- **सम्पादकीय** 6
- **पूज्य पिताश्री : मेरी स्मृति में** डॉ. बिठ्ठलदास मूंधड़ा 11
- **एक व्यवसायी के सामाजिक सरोकार** कमलेश कृष्ण 20
- **मेरे भाई साब : माधोदासजी मूंधड़ा** विजय कुमार बर्मन 25
- **ऐसे थे मेरे माधोदासजी** लक्ष्मीनिवास झुंझुनवाला 30
- **मैं, संसद एवं माधोदास जी** नरनारायण हरलालका 34
- **माधोदासजी के प्रति प्रणति** डॉ. प्रतिभा अग्रवाल 37
- **श्री माधोदास जी मूंधड़ा** काशीप्रसाद खेरिया 40
- **श्रद्धेय माधोदासजी** अरुण चूड़ीवाल 41
- **आदरणीय माधोदासजी : कुछ संस्मरण** के. एल. बैद 43
- **मेरे पितातुल्य : माधोदास जी मूँधड़ा** विजय कुमार दम्माणी 45
- **एक अद्वितीय व्यक्तित्व : स्व. माधोदासजी मूंधड़ा** राम मोहन लाखोटिया 47
- **बड़ा दिल रखते थे पूज्य भाईजी** मनमोहन बागड़ी 49
- **स्व. माधोदासजी की स्मृति को हार्दिक नमन** जोधराज लड्ढा 50
- **मेरे मार्गदर्शक माधोदासजी** घनश्याम दास दम्मानी 52
- **माधोदासजी : एक सुलझा हुआ व्यक्तित्व** रघुनाथदास सोमानी 54
- **तपः - पुंज : मेरे पिताश्री** कुसुम जाजू 55
- **मेरे प्रेय : बाबू माधोदासजी मूंधड़ा** शंकरलाल सोमानी 57
- **Most respected MadhoDasji Mundhra** Apurba Mukherjee 59
- **Shri Madho Das Mundhra - As I Knew Him** Sukumar Dutt 63
- **श्री माधोदासजी मूंधड़ा द्वारा लिखित पुस्तकों के अग्रलेख** 66
  रसो वै सः (1992)
- **भारतीय तत्त्व चिंतन : एक में अनेक** (1998)
  सुखी जीवन (1999)
- **सम्पादकीय का शेष ... राजस्थान दिवस पर हार्दिक शुभकामनाएं** 83

■ प्रकाशित सामग्री के उपयोग हेतु लेखक-प्रकाशक की अनुमति आवश्यक।
■ प्रकाशित लेखादि में अभिव्यक्त विचारों से प्रकाशक-सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है।
■ समस्त विवादों के लिए न्यायालय क्षेत्र कोलकाता।

अध्यक्षीय

होली की रामा-स्यामा

28 मार्च को होली है। इस त्यौहार के मूल स्वरूप को जानने की जिज्ञासा थी। इस सम्बन्ध में प्राप्त जानकारी इस प्रकार है-- इस पर्व का प्राचीनतम नाम वासन्ती नव सस्येष्टि है, अर्थात वसन्त ऋतु के नये अनाजों से किया हुआ यज्ञ। 'होली' होलक का अपभ्रंश है। यथाः - तृणाग्निं भ्रष्टार्थ पक्वशमी धान्य होलकः (शब्द कल्पद्रुम कोष), अर्धपक्वशमी धान्यैस्तृण भ्रष्टैश्च होलकः। होलकोऽल्त्योपानिलो मेदः कफ दोष श्रमापह (भाव प्रकाश) अर्थात् तिनके की अग्नि में भुने हुए (अधपके) शमो-धान्य (फली वाले अन्न) को होलक कहते हैं, यह होलक वात-पित्त-कफ तथा श्रम के दोषों का शमन करता है। किसी भी अनाज की ऊपरी पर्त को होलिका कहते हैं, जैसे चने का पटपर (पर्त), मटर का पटपर (पर्त), गेहूँ-जौ की गिद्दी से ऊपर वाली पर्त। चना, मटर, गेहूँ-जौ की गिद्दी (गिरी) को प्रह्लाद कहते हैं। होलिका को माता (होली-माता) इसलिए कहते हैं कि वह चनादि का निर्माण करती है (माता निर्माता भवति)। यदि यह होलिका अर्थात ऊपरी पर्त न हो तो चना, मटर, जौ-गेहूँ रूपी प्रह्लाद का जन्म नहीं हो सकता है। जब चना, मटर, जौ-गेहूँ भुनते हैं तो उनकी ऊपरी पटपर या खोल पहले जलता है, इस प्रकार प्रह्लाद (अन्न की गिद्दी) बच जाता है। उस समय प्रसन्नता से जय घोष करते हैं कि होलिका माता की जय अर्थात् होलिका रूपी पटपर (पर्त) ने स्वयं जल कर प्रह्लाद (चना, मटर, जौ-गेहूँ की गिद्दी) को बचा लिया।

अधपके या अधजले अन्न को होलक कहते हैं, इसी कारण इस पर्व का नाम होलकोत्सव (होलिकोत्सव) है, और वसन्त ऋतु में नये अन्न से यज्ञ (येष्ट) आदि करते हैं इसलिए इस पर्व का नाम वासन्ति नव सस्येष्टि है। इसका दूसरा नाम नव सम्वत्सर भी है। प्राचीन काल में आर्यों की यह परम्परा थी कि वे नवान्न को सर्वप्रथम अग्निदेव व पितरों को समर्पित करते थे।

हमारे यहाँ कृषि कर्म या फसलों का क्रम दो वर्गों में बँटा है-- वैशाखी और कार्तिकी। इसी को क्रमशः वासन्ती और शारदीय (रबी और खरीफ) की फसल कहते हैं। फाल्गुन पूर्णमासी वासन्ती फसल का आरंभ है। इस समय चना, मटर, अरहर, जौ-गेहूँ आदि

अनेक नवान्न आरम्भिक रूप में तैयार हो चुके होते हैं। अतः उन्हें देवों व पितरों को अर्पित किया जाता है। कहा गया है-- अग्निवै देवानाम् मुखं अर्थात् अग्नि देवों-पितरों का मुख है, उसमें जो डाला जाएगा वह देवों-पितरों को प्राप्त होगा।

आर्यों में चातुर्मास (प्रत्येक चार मास पर) यज्ञ की परम्परा थी। वेदज्ञों ने चातुर्मास यज्ञ, वर्ष में तीन समय निश्चित किए- फाल्गुन्या पौर्णामास्यां चातुर्मास्यानि प्रयुञ्जीत मुखं वा एतत सम्वत् सरस्य यत् फाल्गुनी पौर्णमासी आषाढ़ी पौर्णमासी कार्तिकी पौर्णमासी च अर्थात् फाल्गुनी पौर्णमासी, आषाढ़ी पौर्णमासी और कार्तिकी पौर्णमासी को जो यज्ञ किये जाते हैं वे चातुर्मास यज्ञ कहे जाते हैं, अथवा आग्रहाण या नव संस्येष्टि।

प्रति वर्ष होली जलाने में जो प्रक्रिया अपनाई जाती है वह सब यज्ञ की प्रक्रिया है, जैसे होली में नारियल व आखत (अक्षत) डालना, परिक्रमा करना आदि। इस प्रक्रिया से सिद्ध होता है कि यह प्रतिवर्ष सामूहिक यज्ञ की परम्परा रही जिसमें चारों वर्ण मिलकर इस होली रूपी विशाल यज्ञ को सम्पन्न करते थे। होलिकोत्सव में गुलरियां बनाकर अपने-अपने घरों में, होली से अग्नि लेकर उन्हें पकाते हैं। सामूहिक बड़े यज्ञ से अग्नि ले जाकर सब अपने-अपने घरों में हवन करते थे जो घर की वायु-शुद्धि के लिए होते थे जबकि सामूहिक यज्ञ बाहरी वायु की शुद्धि के लिये होता था। यह शुद्धि क्यों जरूरी है, कहा है ऋतु सन्धिषु रोगा जायन्तेः अर्थात् ऋतुओं की संधि पर रोग उत्पन्न होते हैं, उनके निवारण के लिए यज्ञ किए जाते थे। होली, हेमन्त तथा वसन्त ऋतु की संधि पर मनाई जाती है। होलिकोत्सव के संबंध में स्वयं को ईश्वर मानने वाले दैत्यराज हिरण्यकशिपु द्वारा अपने विष्णु भक्त पुत्र प्रह्लाद को अपनी बहिन होलिका (जिसे अग्नि में नहीं जलने का वरदान प्राप्त था) के द्वारा जलाने के षड्यंत्र से संबंधित पौराणिक कथा तो सर्वज्ञात है जिसमें होलिका प्रह्लाद को लेकर अग्नि में बैठती है और जल मरती है जबकि विष्णु की कृपा से प्रह्लाद बच जाता है। परंतु वस्तुतः होली का उत्सव यज्ञ का प्रतीक है, देवों पितरों के निमित्त आहुति देने का पर्व है।"

उपर्युक्त विवरण में होली को वासंतिक यज्ञ प्रतिपादित किया गया है, जो तथ्यात्मक लगता है। राजस्थान में होलिकोत्सव का रूप यज्ञात्मक ही है। होली के दिन (फाल्गुन पूर्णिमा) से आठ दिन पूर्व नियत सार्वजनिक स्थान पर शुभ मुहूर्त में 'डाण्डा' रोपा जाकर उसकी पूजा की जाती है, यह प्राचीन काल में यज्ञ के लिए रोपे जाने वाले स्तूप का प्रतीक है। फिर फाल्गुन पूर्णिमा को डाण्डे के इर्द-गिर्द काष्ठादि लगाया जाता है। इसमें महिलाएं घरों में कई दिन पहले तैयार किए गए गोबर के 'बड़कूले' लाकर डालती हैं, होली की पूजा करती हैं। इनमें 'खेरा-खाण्डा' नामक बड़े आकार के बड़कूले विशिष्ट होते हैं। फिर सब लोग डफ या चंग पर धमाल गाते-बजाते इकट्ठे होकर शुभ मुहूर्त में होली जलाते हैं, जिसे होली मंगलाना कहा जाता है। सब लोग होली की परिक्रमा करते हैं। होली में होलिका और प्रह्लाद के प्रतीक स्वरूप दो लकड़ियाँ रखी जाती हैं, होली जला कर इनमें से प्रह्लाद की प्रतीक लकड़ी को बाहर निकाल लिया जाता है और होलिका की प्रतीक लकड़ी को जलने दिया जाता है। सब लोग अपने-अपने नवान्न (जौ, गेहूँ, चना) के गुल्ले(गुच्छे) बना कर लाते हैं जिन्हें होली की अग्नि में भून कर अपने-अपने घर ले जाकर परिवार सहित प्रसाद स्वरूप खाते हैं। होली में जो गोबर के बड़कूले व खेड़ाखाण्डे डाले जाते हैं, उन्हें जली-अधजली अवस्था में सब लोग अपने-अपने घरों में ले जाते हैं। इस अग्नि को शुभ माना जाता है।

नव वर्ष - सृष्टि संवत 1,96,08,53,122 एवं वि.सं. 2078 की हार्दिक शुभकामनाएँ

होली के 15 दिन पश्चात चैत्र शुक्ल एकम जिसे ब्रह्मा द्वारा सृष्टि रचना का दिन माना जाता है, को नववर्ष एवं वासंतिक अथवा वार्षिक नवरात्र का प्रारम्भ होता है। इसबार 13 अप्रैल को हिन्दू पंचाग के नव

विक्रम संवत् 2078 का प्रारम्भ मंगलवार को है, अतः इस संवत्सर का राजा मंगल है। आनन्द नामक यह संवत्सर सुखकारी होगा। ज्योतिषाचार्यों के अनुसार यह नववर्ष अश्विनी नक्षत्र में प्रारम्भ होगा जिसका स्वामी केतु है। इस वर्ष का प्रारम्भ मेष राशि में होगा जिसका स्वामी मंगल है, अतः यह समय शुभ रहेगा। भूमी-भवन प्रोपटी के बजार में तेजी रहेगी। इस वर्ष ग्रहों का राशि परिवर्तन भी शुभ है। मंगल वृष राशि में राहु के साथ है जिससे अंगारक योग बना हुआ है। 5-6 अप्रैल को गुरु का नीच राशि मकर से कुम्भ में आगमन लाभकारी होगा। 13 अप्रैल की रात मंगल, मिथुन राशि में जाएगा जिससे अंगारक योग खत्म होगा। 14 अप्रैल को सूर्य मीन से मंगल की स्वामित्व वाली राशि मेष में जाकर उच्च का हो जाएगा। 16 की रात बुध भी मेष में आ जाएगा। दोनों के इस राशि परिवर्तन से नकारात्मकता दूर होगी, आरोग्यता बढ़ेगी, व्यापार में अच्छे संकेत मिलेंगे। ये सभी योग सबके लिए शुभ रहेंगे। यह नव संवत्सर हम सबके लिए मंगलमय, आनंदमय रहे और शीघ्रातिशीघ्र हम कोरोना महामारी के त्रास से मुक्त हों, यही भावना-कामना है।

नवरात्र एवं गणगौर पर्व पर हार्दिक बधाई

वैक्रमी नववर्ष के प्रारम्भ चैत्र शुक्ला प्रतिपदा (13 अप्रैल) से नवमी (21 अप्रैल) तक वासंती या वार्षिक नवरात्र रहेंगे जिनमें व्रतानुष्ठान से नव देवियों (शैलपुत्री, ब्रह्मचारिणी, चन्द्रघण्टा, कुष्माण्डा, स्कन्दमाता, कात्यायनी, कालरात्री, महागौरी व सिद्धिदात्री) की पूजा-अर्चना होगी। नवरात्र में ही चैत्र शुक्ला तृतीया को, होलिकोत्सव के दूसरे दिन (चैत्र कृष्ण एकम) से कुँवारी लड़कियों द्वारा उत्तम वर की कामना से होली की भस्म से निर्मित पिण्डियों की गौरी (गौर्यादि षोडश मातृकाओं) के प्रतीक स्वरूप की जा रही पूजन का समापन-विसर्जन होता है और गणगौर की वस्त्राभूषणों से सज्जित काष्ठ अथवा धातु प्रतिमा की दौल-यात्रा (सवारी) निकाली जाती है जिसमें सब लोग बड़े उत्साह से सम्मिलित होते हैं। राजस्थान के पूर्व रजवाड़ों से परम्परानुसार अभी भी गणगौर की शाही सवारी पूरे तामझाम से निकाली जाती है। भारतीय विद्या मन्दिर द्वारा प्रकाशित व डॉ. बाबूलाल शर्मा द्वारा लिखित पुस्तक 'गणगौर-गवरजा' में इस त्यौहार के शास्त्रीय एवं लौकिक पक्ष का विशद विवेचन कर गणगौर संबंधी कथा-कहानियों, परम्पराओं, ऐतिहासिक घटनाओं व गीतों का संकलन किया गया है।

श्रीराम जन्मोत्सव की बधाई

चैत्र शुक्ला नवमी (21 अप्रैल) को नवरात्र सम्पन्न होंगे। इसी दिन श्रीराम का जन्मोत्सव होने से इसे रामनवमी कहा जाता है। राष्ट्रीय आदर्श श्रीराम के जन्मोत्सव की हार्दिक बधाई, शुभकामनाएं। गत वर्ष की भाँति उक्त सभी त्यौहार अभी कोरोना-काल में ही पड़ रहे हैं अतः इन्हें मनाने में पूर्ववत सभी सावधानियाँ बरतनी आवश्यक हैं।

मुझे अत्यंत प्रसन्नता है कि सास्थ्य लाभ के पश्चात डॉ. बाबूलाल शर्मा ने 'वैचारिकी' के सम्पादन का भार पुनः संभाल लिया है। शर्माजी के विद्वत्तापूर्ण सम्पादन एवं विद्वान लेखकों व सुधी पाठकों के सहयोग से वैचारिकी ने धर्म-दर्शन, इतिहास-पुरातत्त्व, साहित्य-लोकसाहित्य, कला-लोककला से संबंधित शोध के क्षेत्र में जो विशिष्ट स्थान बनाया है, उससे मैं कृतकार्यता एवं उत्साह का अनुभव कर रहा हूँ। शर्माजी ने वैचारिकी के प्रस्तुत अंक में पूज्य पिताश्री की स्मृति को संजोया है। उनके कर्मठ, शालीन, संस्कारशील, गरिमापूर्ण व्यक्तित्व की स्मृति हमें सदा प्रेरित करती रहेगी। इस विशेषांक के सभी लेखक महानुभावों के प्रति कृतज्ञ हूँ, आभार !

....शेष पृष्ठ 11 पर

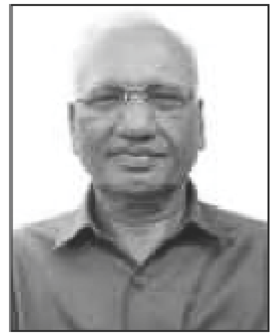

संपादकीय

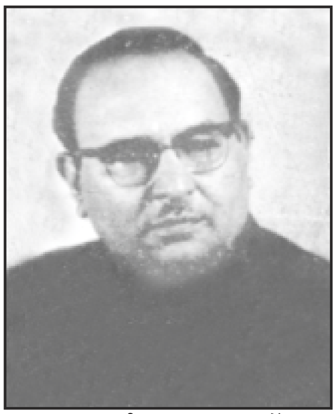
मूंधड़ाजी (युवावस्था में)

भारतीय विद्या मंदिर के संस्थापक श्रद्धेय माधोदासजी मूंधड़ा का जन्म 25 फरवरी 1918 को बीकानेर के पुष्टिमार्गीय वल्लभ सम्प्रदाय के कुलीन वैष्णव परिवार में हुआ था। आपके जीवन पर आपके पूज्य पिताजी स्व. गिरधरदासजी एवं स्नेहमयी माता श्रीमती सूरजदेवी के धार्मिक विचारों की अमिट छाप थी। वे उन्हें अपना प्रेरणा स्रोत मानते थे तथा जीवन के सर्वांगीण विकास का श्रेय उन्हें देते थे। सन् 1939 में कलकत्ता विश्वविद्यालय से वाणिज्य में स्नातक की उपाधि प्राप्त की। वे अपनी वास्तविक, व्यावहारिक एवं धार्मिक शिक्षा का श्रेय नित्य लीलास्थ पूज्य गोस्वामी श्री रणछोड़दासजी महाराज को देते थे, जिनके सान्निध्य का आपको खूब सुअवसर प्राप्त हुआ था।

परिश्रमी एवं स्वावलंबी बनने का मूल मंत्र आपने अपनी औपचारिक शिक्षा पूरी होते ही अंगीकार कर लिया था। स्व. माधोदासजी मूंधड़ा प्रतिभावान, परिश्रमी और दृढ़ निश्चयी थे। तभी तो परंपरागत पारिवारिक व्यवसाय पर निर्भर न रह कर विभिन्न क्षेत्रों में नये व्यवसाय अपने बल पर खड़े करने की आपकी प्रवृत्ति रही और उन व्यवसायों को आपने सफलता पूर्वक उन्नति के शिखर पर पहुंचाया। आर्डर सप्लाई एवं अन्य छोटे-मोटे व्यवसायों से प्रारंभ कर अपने कठोर परिश्रम व सूझबूझ एवं प्रशासनिक क्षमता के बल पर देश-विदेश में वृहत निर्माण कार्यों, प्रदूषण निरोधक यंत्रों के निर्माण,जीओमिलर एण्ड कंपनी के द्वारा कोल माईनिंग से संबंधित एवं अन्यान्य व्यवसायों में संलग्न होकर वे बड़े औद्योगिक प्रतिष्ठानों की स्थापना में सफल हुए। आपके द्वारा संचालित सिम्पलेक्स इन्फ्रास्ट्रक्चर्स लिमिटेड (पूर्व नाम सिम्पलेक्स कंक्रीट पाईल्स इण्डिया लिमिटेड) कलकत्ता की शाखाएं देश के प्रमुख औद्योगिक शहरों दिल्ली, मुंबई, चेन्नई के अलावा विदेशों में भी फैली हुई हैं।

आपको संगीत से बेहद प्रेम था। अस्सी वर्ष की उम्र में भी आप संगीत का नियमित

अभ्यास करते थे। उनका मानना था कि संगीत मनुष्य में जीने की स्पृहा पैदा करता है। इसी तरह अपनी पहचान बनाए रखने के लिए वे संस्कृति का संरक्षण आवश्यक मानते थे, फलस्वरूप उनके द्वारा कलकत्ता महानगर में स्थापित भारतीय संस्कृति संसद का नाम आज अखिल भारतीय स्तर पर है। इस संस्था में देश भर की उच्चकोटि की प्रतिभाएं जो कला, राजनीति, काव्य, दर्शन, धर्म, विज्ञान आदि में प्रख्यात हैं, बराबर आमंत्रित-सम्मानित होती हैं तथा गोष्ठियों के भारतीय स्तर पर आयोजन होते हैं। उनके द्वारा बीकानेर में संचालित संस्था भारतीय विद्या मन्दिर के कारणवश बंद हो जाने पर उसे 2005 में उनके ज्येष्ठ पुत्र डॉ. बिट्ठलदास मूंधड़ा द्वारा कोलकाता में स्थानांतरित कर दिया गया। उनकी अध्यक्षता में यह संस्था 'वैचारिकी' द्वैमासिक शोध-पत्रिका का प्रकाशन कर रही है जो कि पूर्व में भारतीय विद्या मन्दिर शोध प्रतिष्ठान बीकानेर से त्रैमासिक प्रकाशित होती थी। इसी तरह संस्था धर्म-दर्शन, साहित्य-लोकसाहित्य, इतिहास-पुरातत्व व कला विषयक स्तरीय ग्रंथों का प्रकाशन कर रही है। संस्था द्वारा उक्त विषयों को लेकर राष्ट्रीय-अंतरराष्ट्रीय संगोष्ठियों के आयोजन भी समय-समय पर किये जाते हैं तथा औद्योगिक क्षेत्र में युवकों को कौशल विकास का प्रशिक्षण दिया जाता है।

आप एक सफल उद्योगपति के साथ सांस्कृतिक पुरुष, समाज सेवी, साहित्य सेवी, कला प्रेमी और चिंतक के रूप में भी जाने जाते थे। आपमें सामाजिक, परोपकारी एवं परमार्थ कार्यों में निरंतर संलग्न रहने वाले व्यक्तित्व के दर्शन होते थे। आपका दृष्टिकोण सामाजिक क्षेत्र में सेवा कार्य करने की ओर रहा, परंतु सामाजिक संस्थाओं में पद ग्रहण करने की कभी आकांक्षा नहीं रखी। आपके मन में एक बात ज्ञात-अज्ञात रूप में जमी हुई थी कि जो कुछ भी अर्जन किया जाए उसमें से समाज सेवा, शिक्षा, संस्कृति, कला एवं साहित्य के क्षेत्र में भी विनियोग होना चाहिए। लोक कल्याण की दृष्टि से मूंधड़ाजी ने कई ट्रस्टों की स्थापना की जिनके द्वारा विद्यार्थियों को छात्रवृत्ति देकर व निर्धनों, विधवाओं, वृद्धों और साहित्य सेवियों की सहायता की जाती है। साथ ही अकाल व बाढ़-पीड़ितों व गोधन की रक्षार्थ भी सहायता दी जाती है और आदिवासियों व ग्रामोन्नति के विकास कार्यों में भी योगदान दिया जाता है। आपकी दानशीलता के पीछे कोरी भावुकता नहीं, यथार्थ का बोध था। उनकी उदारता के इस बोध के उल्लेखनीय प्रमाणस्वरूप आपके द्वारा संस्कृति, शिक्षा, चिकित्सा तथा समाजसेवा के अन्यान्य क्षेत्रों में **स्थापित-संचालित बहुविध संस्थाएं** इस प्रकार हैं-

कोलकाता में - अग्रणी सांस्कृतिक संस्थान भारतीय संस्कृति संसद (1955), भारतीय संस्कृति संसद ट्रस्ट, श्री चेरिटीबल ट्रस्ट माहेश्वरी सेवा सदन के प्रथम तल्ले का निर्माण तथा भारत रिलीफ सोसाइटी एवं मानव सेवा संघ को बारबार आर्थिक सहयोग। **बीकानेर में -** श्रीमती सूरजदेवी गिरधरदास मूँधड़ा सेटेलाइट हॉस्पिटल, सेठ गिरधरदास मूंधड़ा शिक्षण संस्थान के अन्तर्गत बीकानेर में - भारतीय विद्या मंदिर शोध प्रतिष्ठान, गिरधरदास मूंधड़ा उच्च माध्यमिक विद्यालय, गिरधरदास मूंधड़ा बाल भारती (उच्च प्राथमिक विद्यालय), प्रौढ़ शिक्षा केन्द्र एवं श्री मदन मोहन आयुर्वेदिक निःशुल्क औषधालय, गिरधरदास मूँधड़ा जन सेवा निधि। **मथुरा में -** रामघाट पर मूँधड़ा धर्मशाला। **हरिद्वार में -** महाप्रभु बल्लभाचार्यजी की बैठकों का जीर्णोद्धार।

1990 के दशक में माधोदासजी मूंधड़ा कारोबार से उपराम होकर संगीत-साधना के साथ-साथ अध्ययन-मनन में प्रवृत्त होने लगे थे। इस दौरान विशिष्ट विद्वानों के सान्निध्य से, उनके विचारों के श्रवण से, उनके साथ जिज्ञासा व विचार-विमर्श से उनके भीतर सोये हुए सर्जक को उत्प्रेरणा प्राप्त हुई। परिणामस्वरूप सन् 1992 में मूंधड़ाजी का लेखकीय रूप प्रकट हुआ और उनकी प्रथम कृति **'रसो वै सः'** का प्रकाशन हुआ। यह कृति

उनके दीर्घ चिंतन-मनन से प्राप्त नवनीत है। मूंधड़ाजी भारतीय वैदिक मनीषा द्वारा प्रस्फुटित सिद्धांत "एक सत् को ही विद्वान बहुधा अर्थात अनेक रूपों में कहते हैं" से बहुत प्रभावित थे, इसी से उन्होंने भारतीय विविधता में अंतःसलिला रूप से व्यापक एकत्व की अखंडता को प्रवाहित देखा जिससे **"भारतीय तत्त्व चिंतन : एक में अनेक"** नामक उनकी दूसरी पुस्तक 1998 में प्रकाशित हुई जो उनकी गंभीर, सात्विक व समन्वित चेतना का पुष्ट प्रमाण है। इसी क्रम में आपकी तीसरी पुस्तक **"सुखी जीवन"** 1999 में प्रकाशित हुई जिसमें उनके दीर्घकालीन जीवनानुभव से निर्णीत वास्तविक सुख का हृदयस्पर्शी निरूपण हुआ है।

मूंधड़ाजी की यह विशेषता विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि आप अपनी प्रशंसा सुनकर न तो आह्लादित होते थे और न निंदा सुनकर उद्वेलित होते थे। आप प्रतिक्षण वाणी-संयम और श्रुत-संयम के प्रति जागरूक रहते थे। आप जैसे अर्जन करते थे वैसे ही बिना किसी अपेक्षा के दान भी करते थे। आप जो कुछ भी करते थे उसे केवल अपना कर्तव्य मानकर। परिवार, मित्रों, एवं अपने कर्मचारियों के प्रति आपके मन में गहरी आत्मीयता थी। आप केवल मूंधड़ा परिवार के ही माननीय सदस्य नहीं थे बल्कि सारे समाज के लिए नितांत अपने थे। 1 अप्रैल 1999 को औद्योगिक एवं साहित्यिक जगत के इस पुरोधा मनीषी का गोलोक-गमन हुआ। आज आप हमारे बीच नहीं हैं। समाज में ऐसे व्यक्तित्व की कमी सदैव खलती रहेगी, परंतु आपके प्रेरक कथन, व्यवहार व आचरण हमारा मार्गदर्शन करते रहेंगे। समाज के इस प्रखरपुंज के आदर्शों एवं मार्गदर्शन पर चलकर समाज निरंतर प्रगति के पथ पर अग्रसर हो, आपके प्रति यही सच्ची श्रद्धांजलि है। स्वर्गीय माधोदासजी मूंधड़ा के जन्म शताब्दी वर्ष 2018 में 5-6-7 जनवरी को 'हिन्दीतर प्रांतों एवं विदेशों में हिन्दी भाषा साहित्य : दशा-दिशा' विषय पर त्रिदिवसीय अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन का आयोजन किया गया था। वैचारिकी का सितम्बर-अक्टूबर 2018 अंक इस सम्मेलन को समर्पित था और इसी क्रम में अंक नवम्बर-दिसम्बर 2018 स्व. माधोदासजी जन्म शताब्दी अंक के रूप में प्रकाशित होना था, परंतु अपरिहार्य कारणों से ऐसा नहीं हो सका, अब प्रस्तुत संयुक्तांक (मार्च-अप्रैल, मई-जून 2021) उनकी पूण्य स्मृति को समर्पित है।

श्रद्धेय माधोदासजी शालीन और प्रभावशाली व्यक्तित्व के धनी थे। यह शालीनता और प्रभविष्णुता उनकी संयमित वाणी और बातचीत की शैली में भी रहती थी। उन्होंने अपनी प्रतिभा और परिश्रम के बल पर स्वयं को एक सफल व्यवसायी के रूप में प्रतिष्ठित किया, परन्तु इससे भी अधिक उल्लेखनीय यह है कि उन्होंने अपने पारिवारिक संस्कारों को मुखरित कर स्वयं को एक प्रेरक उदाहरण के रूप में प्रस्तुत किया। भारतीय धर्म-दर्शन, साहित्य-संस्कृति का अध्ययन और उसके प्रति समर्पण उनके व्यक्तित्व का अभिन्न अंग था। प्रस्तुत अंक में उनके व्यक्तित्व की प्रेरक विशेषताओं को उनके संसर्ग में रहे विभिन्न महानुभावों ने अपने लेखों में उद्धृत किया है।

इस क्रम के प्रारंभ में स्व. माधोदासजी के ज्येष्ठ पुत्र डॉ. बिट्ठलदास मूंधड़ा का लेख है जिसे लिखने में उन्हें संकोच था, परंतु मैंने आग्रहपूर्वक उनसे इसलिए लिखवाया कि वे ही पारिवारिक पृष्ठभूमि सहित उनके जीवन व व्यक्तित्व पर समग्रता से प्रकाश डाल सकते हैं और इसी समग्रता के कारण इस लेख को, प्रारंभ में देने का संकोच होते हुए भी सर्वप्रथम देना पड़ा। तदुपरांत श्री कमलेश कृष्ण ने अपने लेख में उनके व्यक्तित्व में समाहित उनकी पारिवारिक विरासत के साथ उनके व्यावसायिक व सामाजिक सरोकारों को, उनसे लिए गए साक्षात्कार के आधार पर निरूपित किया है। श्री विजय कुमार बर्मन, श्री लक्ष्मीनिवास झुंझुनवाला, श्री

नरनारायण हरलालका, डॉ. प्रतिभा अग्रवाल, श्री काशी प्रसाद खेरिया, श्री अरुण चूड़ीवाल व श्री राममोहन लखोटिया का मूँधड़ाजी से संस्थागत एवं पारिवारिक संसर्ग रहा, अतः उनके संस्मरणों में उनके व्यक्तित्व का सांस्कृतिक, साहित्यिक पक्ष बहुत आत्मीय सुघड़ता से उद्‌घाटित हुआ है। श्री जोधराज लड्डा, श्री घनश्याम दास दम्मानी व श्री रघुनाथदास सोमानी के संस्मरणों में उनके सामाजिक व्यावसायिक सरोकार मुखरित है। श्री विजयकुमार दम्मानी, श्री मनमोहन बागड़ी व श्री शंकरलाल सोमानी ने उनके व्यक्तित्व के व्यक्तिशः अनुभूत मार्मिक पक्षों को उद्‌घाटित किया है। 'सिम्पलेक्स' में कार्यरत रहे श्री के. एल. बैद, श्री अपूर्व मुखर्जी व श्री सुकुमार दत्त ने व्यवसाय में उनकी दूरदर्शी व उदार प्रबन्धात्मक-प्रशासनिक शैली का सश्रद्ध स्मरण किया है। माधोदासजी की सुपुत्री श्रीमती कुसुम जाजू साहित्यिक अभिरुचि सम्पन्न हैं। उन्होंने अपनी गहन भावपूर्ण कविता में उनके वटवृक्ष जैसे व्यक्तित्व का स्मरण अत्यंत प्रभावपूर्ण शैली में किया है।

जैसा कि पूर्व में लिखा गया है, श्रद्धेय माधोदासजी के व्यक्तित्व का एक महती पक्ष है उनका धर्म-दर्शन, कला, संस्कृति तथा जीवन की सार्थकता को लेकर किया गया उनका चिंतन व लेखन। फलतः उनकी तीन पुस्तकें - "रसो वै सः" (1992), "भारतीय तत्त्व चिन्तन : एक में अनेक" (1998) और "सुखी जीवन" (1999) उपलब्ध हैं। प्रस्तुत अंक में उक्त तीनों पुस्तकों के प्रारंभ में देश के वरेण्य विद्वानों-रचनाकारों - डॉ. रमेशचन्द्र शर्मा, श्री श्रीधर भाष्कर वर्णेकर 'प्रज्ञाभारती', डॉ. अम्बाशंकर नागर, कविवर कन्हैयालालजी सेठिया (पद्मश्री), डॉ. सत्यव्रत शास्त्री (पद्मभूषण) व श्री जयकिशनदास सादानी द्वारा लिखे गए 'आमुख', 'प्राक्कथन', 'पुरोवाक्' तथा स्वयं लेखक द्वारा लिखे 'आत्म-निवेदन', 'प्रस्तावना' को सम्मिलित किया गया है। इनमें मूँधड़ाजी के चिन्तन-मनन एवं लेखन की सारगर्भित झलक मिल जायेगी।

मेरा उनसे संपर्क बीकानेर में भारतीय विद्या मंदिर शोध प्रतिष्ठान में कार्यरत रहते हुए 1987 में हुआ था। वे जब भी कोलकाता से बीकानेर आते तो उनके निवास स्थान 'श्रीभवन' में अथवा श्रीभवन के सामने स्थित 'मूंधड़ा बगीची' में लगभग 150 वर्षों से विराजमान मूंधड़ा परिवार के आराध्य ठाकुर मदनमोहनलालजी के मंदिर की सीढ़ियों अथवा परिसर में खड़े पुराने नीम के पेड़ तले रखे पाटे (तख्ते) पर बैठकर घंटों विभिन्न विषयों पर चर्चा होती थी। कलकत्ता में ज्योंहीं उनकी पुस्तकें मुद्रित होकर प्रकाशित होती तो वे तत्काल मुझे भिजवा देते थे और फिर जब बीकानेर आते तो उनपर चर्चा की शुरुआत उनके इस वाक्य से होती-- 'शर्माजी! पुस्तक पर आपकी निर्मम टिप्पणी जानना चाहता हूं', और मैं पुस्तक की विशेषताओं के साथ त्रुटियों का भी निःसंकोच उल्लेख करता। अपनी त्रुटियां सुनकर उनके मुखपर एक गहरी मुस्कान फैल जाती और वे कहते - 'अगले संस्करण में इन्हें ठीक करूंगा'। वे इस बात की बहुत परवाह करते थे कि अन्य लोग उनके बारे में क्या सोचते हैं, उनके कृतित्व को लेकर लोगों की क्या प्रतिक्रिया है? वस्तुतः वे मुँहदेखी बात पसंद नहीं करते थे। व्यवसाय, परिवार, समाज, धर्म-दर्शन-संस्कृति से संबंधित कोई भी बात या आचरण करने से पहले वे उसके सहीपन, उसकी सटीकता को लेकर गहन मंथन करते थे और फिर त्रुटिहीन निर्णय लेकर उस पर दृढ़ता से आचरण करते थे।

इस अंक में श्री विजय कुमार बर्मन ने उनसे संबंधित अपने संस्मरणों में उनकी एक प्रणम्य विशेषता का उल्लेख किया है कि 'भारतीय संस्कृति संसद' के विभिन्न कार्यक्रमों के सूत्रधार वे ही होते थे, लेकिन परदे के पीछे रहकर'। तात्पर्य यह कि वे स्वयं बहुत कम मंच पर आते थे, दूसरों को प्रोत्साहन देते रहते थे। वे विभिन्न

आयोजनों में इस तरह भाग लेते थे जैसे वे एक सामान्य दर्शक या सहभागी हों। श्री बर्मन का उक्त कथन अभी भी तब पुष्ट हुआ जब प्रस्तुत अंक में उनसे संबंधित चित्र प्रकाशित करने के उद्देश्य से मैंने भारतीय संस्कृति संसद में 1955 से 1999 के बीच उनकी सक्रियता के 44 वर्षों में हुए आयोजनों से संबंधित सैकड़ों छायाचित्रों को खंगाला, जिनमें उनके मंचस्थ होने से संबंधित कुछ चित्र ही मिले और यहां तक कि दर्शकों के चित्रों में भी अत्यल्प चित्र मिले जिनमें वे दिखाई दे रहे हैं। कहां तो लोग जरा सा कोई काम कर लेते हैं तो उसे खूब बढ़ा-चढ़ाकर प्रचारित कर दिखावा करते हैं कि यह काम उन्होंने किया है अर्थात् 'कर्तृत्व का अभिमान' और कहां हमारे श्रद्धेय माधोदासजी कि बहुत बड़ा और सराहनीय काम करने पर भी उसके कर्त्तापन से दूर। उनकी प्रेरक स्मृति के प्रति अपनी और वैचारिकी परिवार की ओर से सश्रद्ध नमन। अंत में मैं यह लिखना आवश्यक समझ रहा हूं कि जिस तरह उनके पिता सेठ गिरधरदासजी मूंधड़ा ने उन्हें संस्कारित किया था उसी तरह उन्होंने भी अपने ज्येष्ठ पुत्र श्री बिट्ठलदास मूंधड़ा को संस्कारित कर उनको अपना प्रेरक दाय सौंप दिया, जो कि अपने पूज्य पिताजी से प्राप्त दाय को अधिक विस्तृत और समृद्ध करने में लगे हुए हैं।

राजस्थान दिवस (30 मार्च) पर हार्दिक शुभकामनाएं

प्राचीन काल से हमारे इस भू-भाग को विदेशी हिन्दुस्तान या इण्डिया कहते थे, हालांकि सांस्कृतिक ऐक्य के बावजूद राजनीतिक दृष्टि से यह एक देश या राष्ट्र नहीं था, अपितु यहां कई राष्ट्र या देश थे जिन्हें ब्रिटीश काल में रियासत कहा जाता था। 1947 में आजादी के पश्चात सरदार वल्लभ भाई पटेल के अथक प्रयत्नों से ब्रिटिश भारत की 565 रियासतों (प्रिंसली स्टेट्स) का एकीकरण होकर, एक राष्ट्र बना जिसे एक सोची समझी रणनीति के तहत संविधान में हिन्दुस्तान या हिन्दुस्थान न कहकर कहा गया- 'इंडिया दैट इज भारत'। फिर प्रांतों का गठन हुआ। इस क्रम में ब्रिटिश सरकार, प्रशासनिक सुविधा के लिए हिन्दुस्तान के पश्चिमी भाग में जिसे राजपूताना कहती थी, उसकी राजपूत राजाओं द्वारा शासित 19 रियासतों, 3 ठिकानों एवं अंग्रेज सरकार द्वारा सीधे शासित कमीश्नरेट अजमेर-मेरवाड़ा को मिलाकर 'राजस्थान' नाम से प्रांत या राज्य का गठन किया गया। संभवतः 'राजस्थान' नाम ले. कर्नल टॉड के इतिहास ग्रंथ से लिया गया। राजस्थान का गठन 7 चरणों में हुआ। 18 मार्च 1948 को प्रथम चरण में अलवर, भरतपुर, करौली तथा धौलपुर रियासतों और ठिकाना नीमराणा को मिलाकर 'मत्स्य संघ' बना। 25 मार्च 1948 को दूसरे चरण में कोटा, बूंदी, झालावाड़, बांसवाड़ा, टोंक, प्रतापगढ़, शाहपुरा, किशनगढ़ व डूंगरपुर रियासतों और ठिकाना कुशलगढ़ एवं ठिकाना लावा को मिलाकर 'पूर्व राजस्थान' बना। 18 अप्रैल 1948 को तीसरे चरण में उदयपुर रियासत को मिलाकर 'संयुक्त राजस्थान' बना। 30 मार्च 1949 को चौथे चरण में जयपुर, जोधपुर, जैसलमेर तथा बीकानेर रियासतों को मिलाकर 'वृहद राजस्थान' का गठन हुआ जिसमें 15 मई 1949 को पांचवें चरण में मत्स्य संघ को शामिल कर 'संयुक्त वृहद राजस्थान' बना। 26 जनवरी 1950 को छठे चरण में, आबू-देलवाड़ा को छोड़कर सिरोही रियासत को मिलाकर 'राजस्थान संघ' का गठन हुआ। 1 नवम्बर 1956 को 7वें चरण में सिरोही के आबू-देलवाड़ा तथा झालावाड़ का सिरोज क्षेत्र मध्य प्रदेश को देकर उसके सुनेल टप्पा क्षेत्र को 'राजस्थान संघ' में मिलाकर वर्तमान 'राजस्थान' का गठन सम्पन्न हुआ। भारत गणराज्य के क्षेत्रफल की दृष्टि से इस सबसे बड़े राज्य का क्षेत्रफल 3,42,2039 वर्ग किलोमीटर है जिसकी सीमायें दक्षिण-पश्चिम में गुजरात, दक्षिण पूर्व में मध्य प्रदेश, उत्तर में पंजाब, उत्तर-पूर्व में उत्तर प्रदेश और हरियाणा

शेष पृष्ठ 83 पर ......

पृष्ठ 5 से क्रमशः .... अध्यक्षीय का शेष

पूज्य पिताश्री : मेरी स्मृति में

शर्माजी ने कहा कि वैचारिकी का एक विशेषांक पिताजी को समर्पित करना चाहिए तो मैंने कहा कि जैसी आपकी इच्छा, लेकिन इसको आपको बनाना होगा तो उन्होंने इसकी जिम्मेदारी ली और उन्होंने जगह-जगह संबंधित महानुभावों से संपर्क किया और सबके विचार व संस्मरण लिये। फिर वे मुझे बोले कि आपको भी अपने विचार, भाव और उनकी यादें लिखकर देनी हैं। पहले तो मुझे संकोच हुआ लेकिन उनके आग्रह पर लिख रहा हूं।

पूज्य पिताश्री (स्व. माधोदासजी मूंधड़ा) के संबंध में लिखने से पूर्व मूंधड़ा परिवार का परिचय देना उचित रहेगा। बुजुर्गों से सुना है कि मूंधड़ा लोग राजस्थान के बाप शहर (जिला-जोधपुर) व क्षेत्र से करीब 350 वर्ष पहले उठकर बीकानेर में आकर बस गये थे। उस समय राठौड़ राजा जो बीकानेर के शासक थे, वे जगह-जगह से व्यापारियों, सेठ-साहूकारों, कालाकरों, कारीगरों को बुलाकर बुलाकर बीकानेर में बसा रहे थे। उसी क्रम में हमारा परिवार भी बीकानेर में आया और जहां पर बारहगवाड़ है आज बीकानेर में वहां पर उन्होंने अपना डेरा डाला। उन्होंने एक मकान वहां पर खरीदा जो आज भी हमारे परिवार के पास है। फिर जैसे-जैसे परिवार बढ़ा, सबने अलग-अलग जगहों पर मकान बना लिए। बीकानेर में मूंधड़ाओं के बहुत से घर हैं। मूंधड़ा लोग, सुना है कि महाराजा गजसिंह जी के समय (ईस्वी सन् 1746-1787) सुव्यवस्थित रूप से बीकानेर में बस गये थे। इन्होंने बीकानेर में जो मकान खरीदा, उसमें ही बीकानेर महाराजा गजसिंह जी का विवाह हुआ था, क्योंकि महाराजा के ससुराल वाले इसी मकान में आकर ठहरे थे।

पिताजी के परदादाजी मदनगोपालजी लोटा डोरी लेकर ऊंट की सवारी कर बीकानेर से दिल्ली तक आये और फिर रेल से कलकत्ता आ गये। कलकत्ता में उन्होंने कारोबार शुरू किया। वे मुख्यतः ऊनी कपड़े के व्यापार में लग गये थे। एक दुकान ऊनी कपड़ों की आरमेनियम स्ट्रीट में थी और वहीं गद्दी भी थी। मदनगोपालजी की कलकत्ते में श्री राजा बाबू बर्मन (श्री दामोदर दास टंडन) से मित्रता हो गई। कलकत्ता में बड़ाबाजार स्थित प्रसिद्ध पुष्टिमार्गीय मंदिर 'सांवरियाजी' एवं राजा कटरा इन्हीं के परिवार का है। राजा बाबू बहुत बड़े रईस थे। उनके प्रभाव से मदनगोपाल जी पुष्टिमार्ग में दीक्षित हुए। इसके पहले परिवार में पंच-सेवा थी। उस पंच सेवा में श्री मदनमोहनलालजी, राधिकाजी, नरसिंहजी, शालिगरामजी भी विराजते थे। पारिवारिक बंटवारे में इनकी सेवा

मदनगोपालजी के हिस्से में आयी। पुष्टिमार्गी बनने के बाद इन मूर्तियों को पुष्ट किया गया और फिर ये उनकी नित्य सेवा का अंग बन गयी। मदनगोपालजी को कुछ और स्वरूप तथा उनके गुरुचरण की पादुका, महाप्रभुजी की पादुका भी समय-समय पर प्राप्त हुए। एक छोटे से बाल स्वरूप श्रीकृष्ण बीकानेर के पास रेत के एक टीले पर डिब्बा में उनकी बहन को प्राप्त हुआ था जिसे उन्होंने मदनगोपालजी के पास पधरा दिया। ये सब स्वरूप हमारे मंदिर (मूंधड़ा बगिची) बीकानेर में विराजमान हैं।

मदनगोपालजी ने बीकानेर में शहर के बाहर जमीन खरीदी थी और वहां पर मंदिर बनवाया था। दुकान भी बनवायी और वहां पर रहने का स्थान बनवाकर वहीं पर रहने लगे थे। इस मंदिर में भगवान की सेवा क्रमबद्ध रूप से हमारे परिवार में आज तक चालू है। मदनमोहनलालजी, राधिकाजी और अन्य स्वरूप वहां पर विराजमान हैं। मंदिर परिसर में एक प्राचीन महादेवजी का और एक हनुमानजी का मंदिर है। कालान्तर में मदनगोपालजी के पौत्रों में से जमनादासजी एवं गिरधरदासजी ने मंदिर के सामने में ही सड़क के उधर जमीन खरीदी। वहां पर गिरधरदासजी ने एक मकान बनवाया जिसे श्रीभवन के नाम से जानते हैं। मंदिर और उसका विशाल एरिया मूंधड़ा बगिची के नाम से विख्यात है।

मदनगोपालजी के पुत्र नरसिंहदासजी ने 11 वर्ष की उम्र में ही गद्दी में बैठना शुरू कर दिया था। नरसिंहदासजी की औपचारिक शिक्षा चौथी कक्षा ही थी पर वे बहुत ही तीक्ष्ण बुद्धि के व्यक्ति थे जिससे कारोबार बहुत बढ़ा। उन दिनों ब्रिटेन से ऊनी कपड़ों का आयात होता था जिसमें अच्छी कमाई होती थी। इसके साथ ही उन्होंने कितने ही अन्य व्यवसाय भी किये। चंदननगर में Power Generation & Distribution Company बनाई, सोना-चांदी का व्यवसाय किया, बिजली का व्यवसाय किया। आमदनी इतनी अच्छी होने लगी कि कलकत्ता में 4 बड़ी-बड़ी कोठियां, 3 बागान, 3-4 मार्केट, फूल-कटरा आदि खरीदे। नरसिंहदासजी के 4 पुत्र - जमनादासजी, गोकुलदासजी, गिरधरदासजी और ग्वालदासजी हुए जो उनके साथ पूरी लगन से कारोबार संभालते थे।

परिवार में खूब सम्पन्नता थी। चारों भाई खूब सम्पन्न थे। अकेले गिरधरदासजी (मेरे दादाजी) ही इतने संपन्न थे कि उनके 6 व्यक्तिगत सहायक थे। 4 दाइयां दादी की सेवा में रहती थी। घोड़ा-गाड़ी सजी हुई घर के सामने खड़ी रहती थी। बड़ाबाजार की चर्च स्ट्रीट में रहते थे। आरमेनियन स्ट्रीट में भी मकान थे। यहां पर कई दरबान सामान व रुपयों को लाने ले जाने के लिए थे। उस समय नोटों का प्रचलन नहीं था। चांदी के सिक्के थैलियों में भर-भर कर एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाते थे ।

35 वर्ष की आयु में नरसिंहदासजी का देहावसान हो गया इसके बाद कारोबार में ग्रहण लग गया। इंगलैंड से कपड़ों से भरा हुआ जहाज आ रहा था, समुद्र में डूब गया। उसके इन्श्युरेंस में गलती निकली। सोने-चांदी के व्यवसाय में बड़ा घाटा हुआ। इसी तरह से बाकी कारोबार में भी नुकसान हुआ, चारों भाइयों पर बाजार की भारी देनदारी थी। बागान, कोठियां, मार्केट, यहां तक कि औरतों के गहने बेचकर देनदारी पाई-पाई चुका दी गयी। अपनी साख स्थिर रखना जरूरी था। क्योंकि जिस व्यापारी से देनदारी न चुकायी जाती तो उसे दिवालिया घोषित कर दिया जाता था। समाज में उसे पगड़ी बांधकर बैठने का अधिकार नहीं था। ऐसा व्यक्ति प्रायः शहर अथवा समाज के बाहर रहने लग जाता था। उसके बच्चों के विवाह में दिक्कत होती थी। सब कुछ बेचकर सारा कर्जा चुका देने से परिवार की साख बच गयी। लोगों ने सराहना की। देनदारी चुका देने के

बाद नरसिंहदासजी के चारों पुत्र अलग-अलग हो गये और अपने अपने कारोबार में लग गये।

नरसिंहदासजी के पुत्रों में से जमनादासजी के छह पुत्र हुए - जीवनदासजी, रणछोड़दासजी, घनश्यामदासजी, दामोदरदासजी, किसनदासजी एवं उद्धवदासजी। दूसरे पुत्र गोकुलदासजी के दो पुत्र हुए - गोपीदासजी और बल्लभदासजी। तीसरे पुत्र गिरधरदासजी के तीन पुत्र और दो बेटियां हुई। सबसे बड़े गोविन्ददासजी, दूसरे मेरे पिताजी माधोदासजी, उसके बाद दो पुत्रियां-कंवरदेवी दम्मानी और कृष्णा देवी बाहेती, उनके बाद स्व. जगमोदनदासजी। सबसे छोटे ग्वालदासजी के चार पुत्र हुए - हरिदासजी, तुलसीदासजी, मदनमोहनदासजी, गोपालदासजी।

पिताजी का जन्म बीकानेर में 25 फरवरी 1918 ई. को हुआ और उनके बचपन का प्रारंभिक समय वहीं गुजरा। जल्दी ही वे_कलकत्ता आ गये। जब वे कलकत्ता आये तब दादाजी गिरधरदासजी चिन्सुरा चंदन नगर में East India Electric Supply कंपनी का काम देखते थे। साथ में जमनादासजी के लड़के कृष्णदासजी भी देखते थे। दादाजी गिरधरदासजी ने बताया था कि उनको कंपनी से रुपये 500/- उठाने की इज़ाज़त थी घर खर्च के लिए। गिरधरदासजी का कलकत्ते में 12 नं. पोर्ट चर्च स्ट्रीट में मकान था जिसे बाद में कोठारी परिवार को बेच देना पड़ा। तथापि उसी मकान में रहते थे, उसका किराया देकर। घर पर केवल एक नौकर और एक नौकरानी थी। बहुत थोड़े में गुजारा करना पड़ता था। लेकिन दादाजी को अपनी प्रभु निष्ठा पर अटूट विश्वास था।

घर की कमजोर आर्थिक स्थिति के बीच ही पिताजी की स्कूली शिक्षा हुई और फिर उन्होंने सन् 1939 ई. में कलकत्ता विश्वविद्यालय से बी.कॉम. किया। उस समय ग्रेजुएट होना बड़ी बात थी। ताऊजी गोविन्ददासजी ज्यादा नहीं पढे, उन्होंने इलेक्ट्रिकल गुड्स का कारोबार शुरू किया था जो ठीक-ठाक चल रहा था। शुरू-शुरू में दादाजी ने पिताजी को श्री भागीरथजी मोहता के पास कारोबार सीखने के लिए भेजा। लेकिन घर की कमजोर परिस्थिति देख करके पिताजी ने सोचा कि मैं ग्रेजुएट हूं, कहीं पर अच्छी नौकरी मिल जायेगी। एक दिन वे एक जगह इंटरव्यू देने गये, वहां पर उन्हें 3 घंटे बैठाये रखा गया तो उन्होंने नौकरी करने का विचार त्याग दिया और वे व्यवसाय में आ गये। उन्होंने बिजली के कारोबार में East End Trading & Engineering Company Private Ltd. की स्थापना की। उससे ठीक-ठाक आय होने लगी। संपन्नता तो नहीं थी, पर परिस्थितियां व्यवस्थित होने लगी थी।

जब गोविन्ददासजी व माधोदासजी कारोबार में आ गये, तब दादाजी ने बीकानेर जाने की ठानी। उस समय द्वितीय विश्व युद्ध आरंभ हो गया था। कलकत्ता पर जापान ने बमबारी की थी तो बहुत से राजस्थानी समाज के लोगों ने औरतों और बच्चों को राजस्थान भेज दिया था अथवा वे सपरिवार दूसरे प्रांतों में चले गये थे। गिरधरदासजी भी 1939-40 में बीकानेर चले गये। उनके सबसे छोटे पुत्र जगमोहनदासजी उनके साथ ही बीकानेर रहे।

पिताजी में प्रतिभा एवं कर्मठता का अद्‌भुत संगम था और बड़ी बात यह कि प्रभु की कृपा थी उन पर अतः व्यवसाय में उन्हें सफलता मिलती रही। पिताजी ने व्यवसाय के लिए मध्य कोलकाता में स्थित एलआईसी की बिल्डिंग 10 नंबर चौरंगी रोड लीज पर ली और वहां पर ठेका-टेनेन्सी का कार्य शुरू किया। ठेका-टेनेन्सी में किसी जगह को लीज पर लेकर भाड़े पर देने का काम होता है। इस प्रकार लीज और भाड़े

के बीच का जो अन्तर होता, वही लाभ हो जाता। इलेक्ट्रिक गुड्स का काम पूर्ववत हो रहा था। इसी क्रम में उन्होंने ईस्टर्न ट्रेडिंग कंपनी की स्थापना की जिसमें फलों को खरीदकर उन्हें पैक करके बेचने का काम किया जाने लगा। इसी दौरान उन्होंने कोल माइनिंग में इलेक्ट्रिक गुड्स की सप्लाई का काम शुरू किया था। इनमें से कुछ कामों में नुकसान भी हुआ।

जब द्वितीय विश्व युद्ध समाप्त हुआ और उसके बाद भारत को आजादी मिलने की संभावना हो गई तो अंग्रेज भारत से जाने की तैयारी करने लगे और अपना कारोबार बेचने लगे। पिताजी शुरू से प्रतिभा संपन्न तो थे ही। साथ ही इंटरप्राइजिंग भी थे अतः इसी समय पिताजी को व्यापार में अच्छे अवसर प्राप्त हुए फलस्वरूप उन्होंने 1947-48 ई. में कलकत्ते में 3 कंपनियां खरीदी। कलकत्ते में उनका कुछ अंग्रेज उद्योगपतियों एवं अन्य विशिष्ट लोगों से परिचय हो गया था, उन्हीं में घोष एण्ड मित्रा सॉलीसीटर थे। उनके माध्यम से, भारत छोड़कर जा रहे मि. मिलर की Geo Miller & Co. Ltd. खरीदी। रुपये तो पास में नहीं थे, पर रुपये उधार लेकर उन्होंने कंपनी खरीदी। यह कंपनी कोल माइनिंग मशीनरी में व्यवसाय करती थी। ब्रिटेन से कोल माइनिंग मशीनरी इम्पोर्ट होती थी और कलकत्ते में बेची जाती थी। 15-20 ब्रिटिश कंपनियों की एजेंसी मिलर परिवार के पास थी। जिओमिलर के मालिक मि. मिलर कंपनी के मैनेजिंग डायरेक्टर भी थे। कंपनी तो पिताजी ने खरीद ली, लेकिन उसे चलाने का ज्ञान उन्हें नहीं था, तो उन्होंने मि. मिलर से आग्रह किया कि आप यहीं रह जायें, मैं फाइनेंस और एडमिनिस्ट्रेशन देखूंगा, बाकी कारोबार को आप संभाल लें। मि. मिलर ने यह मंजूर कर लिया और वे कलकत्ते में रहकर कंपनी का काम देखने लगे। कंपनी में कई ब्रिटिश इंजीनियर भी काम करते थे। पिताजी ने उन्हें भी आग्रह करके जाने नहीं दिया। वे लोग भी वर्षों तक इसमें काम करते रहे। इस कंपनी का बहुत बड़ा कारोबार तो नहीं था लेकिन अच्छा नाम था। इसमें पिताजी को बहुत सफलता मिली। उन्होंने जिओमिलर में वाटर ट्रीटमेंट का काम भी शुरू किया और यह कारोबार भी अच्छा चलने लगा।

समयोपरांत एक कंस्ट्रक्शन कंपनी खरीदने का मौका लगा जो कम दामों में मिल रही थी जिसका नाम सिम्पलेक्स कंक्रीट पाइल्स था। यह कंपनी फाउण्डेशन इंजीनियरिंग में काम करती थी। पिताजी के पास इतने रुपये नहीं थे जो कंपनी खरीद पाते।

उस समय पिताजी के बड़े ताऊजी जमनादासजी के पुत्रों में से जीवनदासजी और रणछोड़दासजी अपना अलग काम करते थे और बाकी चारों भाई -घनश्यामदासजी, दामोदरदासजी, किसनदासजी और उधवदासजी ने अपनी अलग फर्म बना रखी थी जिसका नाम नरसिंह सहाय मदनगोपाल इलेक्ट्रिक कंपनी था। इस नरसिंह ग्रुप के चारों भाइयों की पार्टनरशिप में सिम्पलेक्स कंक्रीट पाइल्स को खरीदा गया।

पिताजी कम्पनी का काम देखने लगे। सिम्पलेक्स के मैनेजिंग डायरेक्टर मि. टी आई लेक थे, वे भी भारत छोड़कर अपने देश जा रहे थे परंतु पिताजी ने आग्रह करके उन्हें कलकत्ते में ही रख लिया। मि. लेक बहुत ही प्रतिभावान व्यक्ति थे। उन्होंने पिताजी का आग्रह स्वीकार कर लिया और कंपनी का काम देखने लगे। सिम्पलेक्स का काम उस समय स्टील प्लान्ट और पॉवर स्टेशन के अंदर कुछ-कुछ चल रहा था। सिम्पलेक्स का मुख्य काम पाइल्स फाउण्डेशन का ही था। उस समय स्टील प्लांट में काम चल रहा था। वहां पर 2-3 ब्रिटिश इंजीनियर काम करते थे पिताजी ने उन सबको भी रहने के लिए आग्रह किया और वे सब कलकत्ता में ठहर गये।

इसके बाद में एक फैक्ट्री और खरीदी जिसमें फेब्रीकेशन का काम होता था और कुछ कंस्ट्रक्शन मशीनों का निर्माण भी होता था। इस कंपनी का नाम था Zoncomence Mansion। यह कंपनी भी उक्त नरसिंह ग्रुप के भाइयों की पार्टनरशिप में खरीदी गयी थी। इस तरह पिताजी के दो कारोबार उनके ताऊजी जमनादासजी के साथ पार्टनरशिप में हो गए। उन्होंने एक अल्युमिनियम कंडक्टर नामक कंपनी भी बनाई थी जिसमें विजयकुमारजी बर्मन भी पार्टनर थे।

कालांतर में कारोबार फैला तो तीन जगह कार्यस्थल हो गये। पिताजी तीनों जगह काम देखने लगे। वे सुबह नित्यकर्म से निवृत्त होकर, अखबार पढ़ते, आवश्यक टेलिफोन करते, स्नान करते, नाश्ता करके 8.30 से 9 बजे के बीच घर से निकल जाते थे। सर्वप्रथम न्यू मार्केट गद्दी में जाते, जो व्यवसाय का मुख्य केन्द्र था। फिर जिओमिलर (किरण शंकर राय स्ट्रीट) जाते। सिम्पलेक्स की ऑफिस डायमंड हार्बर रोड, अलीपुर मिन्ट के पास थी, वहीं पर सिकोमेंस का कारखाना था, वहां जाते। फिर वहां से पुनः गद्दी आते। यह उनका दैनिक कार्यक्रम था। फिर वे सायं 7 बजे के आस-पास घर में वापस ढूकते थे। कभी कभी आवश्यक कार्य होने पर रात 8-9 बजे तक गद्दी में रहते थे। वे इंजीनियर तो नहीं थे पर कारोबार को खूब ठीक से समझते थे। कंपनी के एकाउन्ट्स तथा लीगल पक्ष पर उनकी अच्छी पकड़ थी। उनकी यादाश्त बहुत तेज थी। भगवत-कृपा से कारोबार जब खूब बढ़ गया तो व्यावसाय के काम-काज से जाने-आने के लिए उन्होंने एक Four Seater हवाई जहाज खरीदा, जिससे वे उत्तर प्रदेश, बिहार, बंगाल, उड़िसा आदि के विभिन्न शहरों में जाते थे।

1972 ई. में पिताजी और नरसिंह ग्रुप के भाइयों ने आपस में मिलकर कारोबार में बंटबारा कर लिया। सिम्पलेक्स पिताजी के जिम्मे रही और सिकोमेंस कंपनी उन चारों भाइयों को मिली।

सिम्पलेक्स कंक्रीट पाइल्स का काम खूब अच्छा चलने लगा जिससे पिताजी का नाम औद्योगिक क्षेत्र व समाज में होने लगा। पिताजी ने कारोबार को काफी आगे बढ़ाया। विपरीत परिस्थिति में भी वे अपना धैर्य नहीं खोते थे, उत्साह बनाए रखते थे। एक बार एक गोदाम में आग लग गई। पिताजी निर्भीक होकर जलते हुए गोदाम में चले गये, ऊपर से एक बीम गिरा, वे बाल बाल बच गये, लेकिन उनके चेहरे पर एक सिकन तक नहीं आयी। इस तरह उत्साह से कारोबार में लगे रहते थे।

पिताजी का व्यक्तित्व सुदर्शन और धीर-गंभीर था। पूरे 6 फुट का कद, गेहुंआ रंग, सीधे नाक-नक्श, शरीर न बहुत भारी न बहुत पतला बहुत बैलेंस शरीर था। वे कपड़े बहुत परफेक्ट पहनते थे। धोती, बंद गले का कमीज और उसके ऊपर हाफ कोट पहनते थे। सूट वे बहुत कम पहनते थे, कभी-कभी पहनते थे। जो धोती सुबह पहनते थे शाम तक वह धोती वैसी की वैसी ही रहती थी, इतना संभल कर रहते थे। उनका व्यक्तित्व काफी प्रभावशाली था। बात वे धीरे-धीरे करते थे लेकिन बहुत ही प्रभावशाली ढंग से। शब्दों का चयन बहुत परफेक्ट होता था। पिताजी कर्मयोगी थे, कर्म ही उनकी पूजा थी। पिताजी साल में एक बार बीकानेर जरूर जाते थे, ठाकुर मदनमोहनलालजी के सान्निध्य हेतु, लेकिन अधिकतर वे व्यवसास में ही व्यस्त रहते थे।

पिताजी बहुत ही अनुशासनप्रिय और दूर-दृष्टि वाले व्यक्ति थे। चाहे कारोबार हो या कोई अन्य कार्य, वे उसे बहुत सोच-विचार कर करते थे। उनको जोखिम लेना पसंद नहीं था। पिताजी का व्यक्तित्व इतना गंभीर व प्रभावशाली था कि उनसे हम सभी डरते थे, जब तक वे घर पर रहते तब तक हम चुपचाप अपने कमरों

में ही रहते थे। उनकी यादाश्त गजब की थी। 6 महीने पहले यदि किसी से बात की हो और वहीं बात फिर शुरू हो तो वहीं से शुरू करते थे जहां छोड़ा था, कहते, अच्छा आपसे हमारी बात इसी जगह ठहरी थी, अब आगे बात करते हैं। वे हर काम को अच्छी तरह से करते थे। यदि उनके हिसाब से काम नहीं होता तो यह उनकी बर्दाश्त के बाहर हो जाता था।

पिताजी को काम सीखने और करने में जरा भी कोताही पसंद नहीं थी, इस मसले में वे कठोर रहते थे। इस संबंध में मैं यहां एक प्रसंग लिखना चाहता हूं। मेरा बचपन बीकानेर में दादाजी के पास ही बीता और वहीं मेरी प्रारंभिक शिक्षा हुई। 1956 ई. में कलकत्ता आने के बाद मैंने बी.एससी. की। पढ़ाई पूरी होते ही मेरा विवाह कर दिया गया। विवाह होते ही पिताजी ने मुझे 1 जनवरी 1961 को सिम्पलेक्स में ट्रेनी सुपरवाइजर के रूप में नियुक्त कर कारोबार सीखने के लिए कंपनी के मैनेजिंग डायरेक्टर मि. लेक के सुपूर्द कर दिया। लेक साहब के आदेशानुसार मुझे Real work of Project के लिए कंपनी की रिसड़ा साइट पर भेज दिया गया। यहां पर मैंने काफी समय तक ग्रेवल वासिंग व मशीनों में पुर्जे आदि लगाने का कार्य किया। यह काफी कठिन कार्य था। मेरे कपड़े मिट्टी, तेल आदि में सन जाते थे और मैं बहुत थक जाता था। ऐसी हालत में घर लौटता तो मेरी हालत देखकर मेरी मां को बहुत कष्ट होता। एक दिन मां ने रात को पिताजी से कहा, यह काम सिखाने का कौन-सा तरीका है, लड़के की हालत खराब हो जाती है। इस पर पिताजी ने कहा तुम्हें पंचायती करने की आवश्यकता नहीं है, मैंने इसे गुरु को सौंप दिया है, वो जैसे सिखाएगा वैसे ही सीखना पड़ेगा।

पिताजी के धीर-गंभीर व दृढ़ स्वभाव का एक और प्रसंग उल्लेखनीय है। मुझे मद्रास में समुद्र किनारे चल रही साइट का काम देखने मद्रास भेजा गया था। वहां पर समुद्र किनारे एक जेटी का निर्माण हो रहा था कि अचानक ही उस समय तूफान आया जिससे बनी हुई जेटी और जो कुछ हम किनारे पर बना रहे थे वह सब समुद्र में बह गया। जो सामान ढलाई करके रखा था वह सभी समुद्र के गर्त में चला गया। काफी नुकसान हुआ। उसी दिन जम्मू साइट में पहाड़ पर जो पुल बन रहा था, उसका ढांचा लकड़ी से बनाकर पूरा खड़ा किया हुआ था, अगले दिन ढलाई होने वाली थी, अचानक बाढ़ आयी और सब कुछ बह गया। उसमें भी काफी नुकसान हुआ।

उपरोक्त दोनों घटनाएं होने के अगले दिन शाम को दीपावली की पूजन का समय था। हमलोग पिताजी के साथ पूजन के लिए आकर बैठे। मेरे मन में बहुत चिंता थी। मैंने पिताजी से कहा कि हमें इतना बड़ा नुकसान हो गया, हम कैसे संभालेंगे? अब हम क्या करें? हमको क्या करना चाहिए? उन्होंने मेरी तरफ देखकर कहा, 'अभी तो पूजन करो।' मैं उनके इस वीरभाव, गरुगंभीर धैर्य और प्रस्तुत कार्य के प्रति एकाग्रता को देख करके चकित रह गया और मन ही मन उनको प्रणाम किया।

पिताजी संगीत के बहुत शौकीन थे। 1956 में मैं बीकानेर से कलकत्ता आया, उस समय प्रसिद्ध संगीतकार पं. मनिरामजी पिताजी को घर आकर सीतार सिखाते थे और उनके मझले भाई पं प्रतापनारायणजी भी उन्हें संगीत की शिक्षा देने के लिए घर आते थे और वे मेरी मां को भी संगीत का अभ्यास कराते थे। इनके छोटे भाई पं. जसराजजी संगीत के क्षेत्र में विश्वविख्यात हुए और इनकी लड़की सुलक्षणा पंडित मुम्बई में फिल्मी दुनिया में चली गई थी। घर पर ही डागर बंधुओं के परिवार से एक अच्छे उस्ताद ध्रुपद-धमाल भी सिखाते थे। पिताजी को तानसेन - संगीत का भी बहुत शौक था। उन्होनें सितार-

वादन उस्ताद मुस्ताक अली खां से भी सीखा। संगीत में शौक के कारण ही उन्होंने सप्ताह में एक दिन भारतीय संस्कृति संसद में संगीत की शिक्षा शुरू कराई। उस दिन वे स्वयं एवं उनके मित्र इस संगीत की कक्षा में जाते और रात में 9 बजे तक संगीत का अभ्यास करते रहते। मुझे भी पिताजी के प्रभाव से संगीत का शौक लगा। मैं भी उस्ताद मुस्ताक अली खां साहब से सितार सीखता था। बाद में कारोबार में पूरी तरह लग जाने के कारण मेरा यह अभ्यास छूट गया लेकिन पिताजी का अभ्यास निरंतर चालू रहा और जीवन के अंत तक वे अभ्यास करते रहे।

पिताजी को भ्रमण करने का शौक था। वे प्रति वर्ष भारत वर्ष के दर्शनीय स्थानों पर अपने मित्रों के साथ भ्रमण करने जाते थे। उन्होंने दो बार यूरोपीय देशों की यात्राएं भी की। वे पूरी व्यवस्था के साथ यात्रा करते थे। उन्होंने बंगाल की हिल-स्टेशन दार्जिलिंग में एक मकान खरीदा था जहां वे अक्सर अपने मित्रों के साथ जंगलों, पहाड़ों व बर्फिले स्थानों पर भ्रमण करने के लिए जाकर रहते थे। बाद में राजनीतिक कारणों से वहां के स्थानीय गुंडों ने इसे दखल कर लिया। कलकत्ता के बारानगर स्थान पर गंगा किनारे उन्होंने एक बागान भी खरीदा था जहां वे अक्सर अपने मित्रों के साथ पार्टी करते रहते थे।

पिताजी को पढ़ने-लिखने में रुचि थी। भारतीय धर्म, दर्शन, संस्कृति के प्रति उनके मन में बहुत जिज्ञासा रहती थी। भारतीय इतिहास, खास करके मध्यकालीन इतिहास, मुगलों और मराठों के इतिहास का उनको बहुत ज्ञान था। वे पुस्तकें पढ़ते रहते थे और विद्वानों से विचार-विमर्श भी करते रहते थे।

पिताजी ने बीकानेर से हिंदी-संस्कृत के विद्वान पं. अक्षयचन्द्रजी शर्मा को कलकत्ता बुला लिया और उनको रहने का स्थान 10 नंबर चौरंगी रोड भारतीय संस्कृति संसद में दे दिया जहां वे अध्ययन-अध्यापन का काम करते थे। पिताजी उनसे पढ़ते थे और मां भी पढ़ती थी और हमलोग भी उनसे हिन्दी पढ़ने लगे थे। पं. अक्षयचन्द्रजी शर्मा बहुत ही विद्वान थे। उनके संपर्क से पिताजी की साहित्य में रुचि और बढ़ी और वे उनके साथ में बैठकर काफी अध्ययन तथा विचार-विमर्श करते थे। उनकी बतायी नई-नई किताबें मंगवा कर सब लोग पढ़ते रहते थे। इसी तरह पिताजी कोलकाता के कविवर कन्हैयालालजी सेठिया, प्रो. कल्याणमलजी लोढ़ा, जयकिसनदासजी सादानी इत्यादि विद्वानों से समय-समय पर अपनी जिज्ञासाओं को लेकर विचार-विमर्श करते रहते थे।

पिताजी कारोबार के साथ-साथ सामाजिक कार्यों में भी सक्रिय रूप से भाग लेते रहते थे, प्रत्येक शनिवार-रविवार इसके लिए निश्चित था। वे माहेश्वरी सभा के कार्यालय जाते थे, वे कार्यकारिणी समिति के सदस्य थे। अखिल भारतवर्षीय मारवाड़ी सभा में उनका बहुत सम्मान था, वे कार्यकारिणी समिति के सदस्य भी थे, लेकिन उन्होंने कभी कोई पद नहीं लिया।

जब वे सामाजिक संस्थाओं में जाते अथवा समाज के कार्यक्रमों में होते थे तो उन्हें कुछ कमी महसूस होती थी। उनको लगता था कि यहां सामाजिक कार्य तो होते हैं परंतु हमारी संस्कृति, धर्म-दर्शन, साहित्य व कला को लेकर घोर उपेक्षा है। इन्हीं विचारों से प्रेरित होकर उन्होंने 1955 ई. में अपनी बिल्डिंग 10 नंबर चौरंगी रोड (वर्तमान नाम- जवाहरलाल नेहरू रोड), कलकत्ता में भारतीय संस्कृति संसद की स्थापना की। पिताजी उस समय 37-38 वर्ष के थे। भारतीय संस्कृति संसद की स्थापना में उनके मित्रों- हरिप्रसादजी माहेश्वरी, गोकुलदासजी दमानी, विजयकुमारजी बर्मन, कन्हैयालालजी बागड़ी, रामनिवासजी ढंढाड़िया,

परमानंदजी चूड़ीवाल आदि जुड़े और निष्ठापूर्वक सक्रिय रहे। पिताजी का यह परिवेश प्रबुद्ध-जनों का था। इस संस्था में उन्होंने वाइस चांसलर डॉ. कालीदासजी नाग को अध्यक्ष बनाया। उनके बाद प्रसिद्ध विद्वान भाषाविद् डॉ. सुनीति कुमारजी चटर्जी को अध्यक्ष बनाया। इस संस्था में वे देश के मूर्धन्य विद्वानों, साहित्यकारों व कलाकारों को आमंत्रित करते थे। साथ ही संस्था के सदस्यगण भी स्तरीय कार्यक्रमों का आयोजन करते थे। सप्ताह में अथवा महीने में एक बार अध्ययनगोष्ठी, रंजनगोष्ठी, रचनागोष्ठी जैसे आयोजनों के साथ संगीत व चित्रकला की कक्षाएं भी चलती थी। संस्था में उच्च स्तरीय ग्रंथों का पुस्तकालय भी स्थापित किया गया। इस संस्था के माध्यम से पिताजी का देश के प्रसिद्ध विद्वानों, साहित्यकारों व कलाकारों के साथ संपर्क बढ़ता गया। कई साहित्यकारों के साथ उनके निकट संबंध हो गये थे, प्रसिद्ध लोकप्रिय कवि हरिवंशरायजी बच्चन तो उनके मित्रवत हो गये थे। भारतीय संस्कृति संसद का संचालन वे अत्यंत निष्ठापूर्वक करते रहे, परंतु उसमें वे कभी भी कोई पदाधिकारी नहीं रहे।

1947 में देश के बंटबारे के बाद अन्य स्थानों की तरह बीकानेर में भी पाकिस्तान से हिन्दू शरणार्थी आ रहे थे। उस समय जिनकी शिक्षा छूट गई थी, अथवा जो दिन में जीवकोपार्जन में लगे रहने से पढ़ नहीं पाते थे, उनके लिए बीकानेर में दादाजी गिरधरदासजी के सहयोग से 1948 ई. में भारतीय विद्या मन्दिर रात्रि विद्यालय नामक संस्था स्थापित हुई। बाद में इसी के अंतर्गत शोध प्रतिष्ठान की स्थापना हुई, जहां पर शोद्यार्थी आकर शोध करते थे। वैचारिकी के संपादक डॉ. बाबूलालजी शर्मा वहीं पर ज्वाइन किये थे। रात्रि विद्यालय में हिन्दी साहित्य की प्रथमा, उत्तमा, विशारद और साहित्यरत्न की शिक्षा व परीक्षाएं होती थी। कई अच्छे-अच्छे विद्वान जैसे नरोत्तमदासजी स्वामी, डॉ. दशरथ शर्मा, पं. अक्षयचन्द्र शर्मा इत्यादि इस संस्था से जुड़े हुए थे। इसी क्रम में राजस्थान बाल भारती नाम से प्राथमिक विद्यालय की स्थापना हुई। विद्यालयों का संचालन एक समिति के द्वारा होता था। बाद में पिताजी ने गिरधरदास मूंधड़ा शिक्षण संस्थान की स्थापना कर उसके अंतर्गत इन संस्थाओं को अपने संचालन में ले लिया। वर्तमान में भारतीय विद्या मन्दिर (कोलकाता) से अभी वैचारिकी पत्रिका निकलती है और किताबों के प्रकाशन का भी काम होता है।

परिवार में कुछ संपन्नता हुई तो पिताजी ने पोर्ट चर्च स्ट्रीट के 22 नंबर ओल्ड बालीगंज रोड में एक किराये का मकान लिया था जो 4-5 कमरों का एक छोटा मकान था, वहीं हम सब रहने लगे थे। फिर जब कारोबार खूब बढ़ गया और पर्याप्त संपन्नता हो गई तब 1964 में पिताजी ने 126, साउदर्न एवेन्यू में सुसज्जित बड़ा घर बनवाया तो हम सब वहीं रहने लगे, जो कि हमारा वर्तमान निवास स्थान भी है।

पिताजी का विवाह 1940-41 ई. में कलकत्ते के प्रतिष्ठित डागा परिवार में हुआ था। मेरी मां श्रीमती कृष्णादेवी बड़ी धर्मात्मा थी। उन्हें पढ़ने का शौक था, लेकिन वे पढ़ नहीं पायी थी, क्योंकि उस समय स्त्री शिक्षा का वातावरण नहीं था। शायद 13-14 वर्ष की छोटी उम्र में ही उनका ब्याह हो गया था। कलकत्ते में 1942 में मेरा जन्म हुआ और 1946 में मेरे छोटे भाई स्व. श्रीमोहनदास का जन्म हुआ, उसके बाद मेरी बहन कुसुमदेवी जाजू का जन्म

हुआ और 1950 में हमारे सबसे छोटे भाई बालकिसनदास का जन्म हुआ।

मेरा जन्म कलकत्ते में हुआ था, परंतु बचपन बीकानेर में दादाजी गिरधरदासजी तथा दादीजी श्रीमती सूरजदेवी के पास ही बीता, फिर मैं 1956 में कलकत्ता आया और यही बी.एससी. करने के बाद कारोबार में लग गया। पिताजी अपनी कारोबारी व भारतीय संस्कृति संसद से संबंधित व्यस्तताओं तथा संगीत-साधना एवं पढ़ने-लिखने में रुचि के कारण परिवार पर उतना ध्यान नहीं देते थे, परंतु खोज-खबर सबकी रखते थे। बीकानेर में रह रहे दादाजी-दादीजी को किसी प्रकार का कष्ट न हो, इस पर उनका विशेष ध्यान रहता था। 1978 में दादाजी और दादीजी दोनों का 40 दिन के अंतराल से गोलोकवास हो गया। एक साथ ही माता-पिता की छत्र-छाया सिर से उठ जाने पर पिताजी कई दिन तक अत्यंत दुःखी और अनमने रहे। पिताजी अपने भाइयों के साथ हमेशा सौहार्दपूर्ण संबंध बनाये रखते थे। अपने बड़े भाई गोविन्ददासजी से पिताजी को बहुत लगाव था जो बड़ाबाजार में 3 कमरे वाले एक घर में रहते थे और फिर बिरला मन्दिर के पास एक मकान भाड़े पर लेकर रहने लगे थे। 1990 में उनका स्वर्गवास होने पर उनको बहुत दुःख हुआ, तीन दिनों तक उनके आंसू थमे ही नहीं। अपने छोटे भाई जगमोहनदासजी को कारोबार दिए और उनका भी बहुत ध्यान रखते थे।

1980 के बाद कारोबार थोड़ा धीमा हो गया था। कोल माईनिंग मशीनरी का काम ठीक नहीं चलता था, अतः बंद कर दिया गया। मजदूरों के साथ झंझट-झमेला हुआ, कोर्ट केस भी ज्यादा हो गये थे। यह सब झंझट-झमेले, कोर्ट केस व कंपनी की अन्य गतिविधियां मैं संभालने लगा था। कारोबार में मेरी कुशलता से पिताजी संतुष्ट थे, उन्होंने मेरे ऊपर ही कारोबार का भार सौंप दिया था, वे केवल एकाउन्ट्स व फाइनेंस संभालते थे।

1984-85 ई. में पिताजी को हृदय-रोग हो गया था। उनका शरीर अस्वस्थ्य और कमजोर हो गया था। अब तक वे 70 वर्ष की आयु पार कर गये थे। उन दिनों बाईपास सर्जरी होने लगी थी, लेकिन उन्होंने कहा कि मैं नहीं करवाऊंगा। जीवन के अंतिम दिनों में कार्यालय देरी से आते थे। एक कर्मयोगी की तरह कारोबारी तथा पारिवारिक व सामाजिक दायित्वों को पूरी निष्ठा के साथ निभाने के बाद वे ज्ञानयोग की साधना में लग गये थे। उनकी ज्ञान-पिपासा अब ब्रह्म को जानने की तरफ बढ़ने लगी थी और अंतिम दिनों में तो वे भक्तियोग में प्रवृत्त हो गये थे। वे रोज सुबह एक-डेढ़ घंटे प्रार्थना करते थे तथा बीकानेर में ठाकुरजी की सेवा के प्रति और अधिक तत्पर हो गये थे।

जीवन के अंतिम पड़ाव में उन्होंने स्वयं को कारोबार से निवृत्त कर लिया था। ज्यादातर प्रसिद्ध साहित्यकार व विद्वान कन्हैयालालजी सेठिया, जयकिसनदासजी सादानी व अन्य विद्वानों के साथ उठते-बैठते थे। यदाकदा भारतीय संस्कृति संसद जाते थे। 1990 के दशक में तो वे पूरी तरह संगीत-साधना और पढ़ने-लिखने व विद्वानों की संगति करने में लग गये थे। इसी दशक में उन्होंने 'रसो वै सः', 'भारतीय तत्त्व चिन्तन : एक में अनेक' व 'सुखी जीवन' पुस्तकों की रचना की। सुखी जीवन उनकी अंतिम पुस्तक है जिसका प्रकाशन 1 अप्रैल, 1999 को उनके गोलोकवास के पश्चात हुआ था। उनका देहावसान अपूर्णीय क्षति थी, संसार में मृत्यु तो अटल सत्य है लेकिन खुशी इस बात की है कि उन्होंने एक सफल-सार्थक जीवन जीया। उनका सामाजिक, सांस्कृतिक, साहित्यिक अवदान सदा स्मरणीय रहेगा। हमलोगों को उन्होंने समृद्ध कारोबार की विरासत दी, लेकिन हमारे लिए सबसे बड़ी विरासत उनकी प्रेरक स्मृति है। उनकी इस स्मृति को सश्रद्ध शत-शत नमन।

- डॉ. बिट्ठलदास मूंधड़ा

एक व्यवसायी के सामाजिक सरोकार

स्व. माधोदासजी से 'कारोबार खबर' - (प्रधान सं. श्री हरिवंश, स्थानीय सं. श्री ओमप्रकाश अश्क) के लिए दिसम्बर 1995 में लिए गए साक्षात्कार पर आधारित।

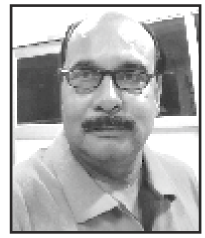

कमलेश कृष्ण

आज के संत्रस्त वातावरण में जहां चतुर्दिक विभीषिकाएं हैं, हिंसा और उग्रवाद का उत्तरोत्तर विश्वव्यापी प्रसार हो रहा है, मनुष्य का मनुष्य में विश्वास, आस्था और प्रेम क्षीण हो रहा है, समस्त सुविधाओं के मध्य मनुष्य अपने आपको असुरक्षित पाता है, ऐसे में भारतीय संतों की वाणी ही प्रेम, आस्था, अहिंसा एवं मैत्री द्वारा मानवता को एक सूत्र में बांधने में सक्षम होगी। इसके बिना मानवता को बचा पाना संभव नहीं है। संतवाणी ही मानव को दुर्बलताओं से मुक्त कर अध्यात्म के पथ पर चलते हुए उसे आनंद प्रदान करने में सक्षम है। यह सारे विश्व को पुनः एक नीड़ बनाकर सुख शांति प्रदान कर सकती है। ऐसा कहना था मानुष भाव के मर्म को समझने वाले एक ऐसे विशिष्ट उद्योगपति एवं कुशल प्रशासक का, जो व्यवसाय से जितनी घनिष्ठता से जुड़ा था, उससे कहीं अधिक भारतीय संस्कृति की महत्ता को समझने में निरंतर प्रयासरत रहा, अर्थात स्व. माधोदासजी मूंधड़ा।

माधोदासजी का जन्म 25 फरवरी 1918 को बीकानेर के मूंधड़ा परिवार में हुआ था। बीकानेर में मूंधड़ा परिवार के रईसी ठाठ की खूब चर्चा हुआ करती थी। रईसी संजीदगी माधोदासजी को विरासत में मिली थी। पुष्टिमार्गीय बल्लभ सम्प्रदायानुयायी परिवार में जन्म लेने के कारण माधोदासजी का संस्कार इतना पुष्ट था कि वह सहज ही उन्हें अध्यात्म की ओर सुमुख करता था। कलकत्ता में पिता का व्यवसाय था। पिता गिरधरदासजी सांस्कृतिक, धार्मिक एवं शैक्षणिक कार्यों में विशेष रुचि रखते थे। समाज से जुड़ने की मूल प्रेरणा माधोदासजी को पिता से ही मिली थी। वे कहते थे कि ऐसा नहीं है कि यह परंपरा मेरे पिता से ही शुरू हुई, बल्कि यह तो कई पीढ़ियों से चली आ रही थी। मेरे दादाजी को उनके पिता से एवं मेरे पिता को मेरे दादाजी से समाज के प्रति सेवा-भाव का संस्कार मिला था। हां, यह सही है कि मेरे पुरखों में रईसी का एक अद्‌भुत ठाठ था। पर वह कभी भी विलासिता को आमंत्रित नहीं करता था। अपितु, इस ठाठ ने हमारे परिवार को इतना निस्पृह और उदार बना दिया था कि परिवार के सभी सदस्य अपने दोनों हाथों से दान करते

रहते थे। फिर एक दिन ऐसा भी आया कि पूरा परिवार कर्ज में डूब गया।

अपने परिवार के कठिन समय को माधोदासजी ने देखा ही नहीं था, बल्कि दृढ़तापूर्वक झेला भी था। वह मूंधड़ा परिवार का संघर्ष का काल था। संभवतः यही कारण था कि अल्प वय में ही माधोदासजी को रोजगार से जुड़ जाना पड़ा था। परिवारवाले चाहते थे कि माधोदास कहीं नौकरी-चाकरी करें। पर चाकरी तो उन्हें सुहाती नहीं थी। उनका रईसी मिजाज उन्हें चाकरी करने से रोकता था। वे अपनी सीमा जानते थे। उन्हें यह भी पता था कि इस चाकरी करने से जो अर्थ प्राप्त होगा, वह परिवार के भरण-पोषण के लिए पर्याप्त हो सकता है परंतु परिवार की परम्पराओं को निभाने के लिए पर्याप्त नहीं होगा। अंततः उन्होंने पिता को निःसंकोच अपना निर्णय बता दिया कि नौकरी नहीं करूंगा।

सच तो यह है कि संघर्ष मनुष्य को भीतर से बहुत अधिक मजबूत बना देता है। माधोदासजी के साथ भी ऐसा ही हुआ था। प्रतिभाशाली माधोदासजी में संघर्षभीरुता रत्ति भर ही नहीं थी। बड़े जीवट वाले थे वे। चुनौतियों को आमंत्रित करना जैसे उनका सहज-स्वभाव था। अपने निर्णय पर दृढ़ रहने के लिए माधोदासजी को तपना पड़ा। अंततः अपनी प्रतिभा और मेहनत के बल पर वे सन् 1945 में जार्ज मिलर (जिओ मिलर) कम्पनी के मालिक बने। फिर सन् 1947 में सिंप्लेक्स कांकरिट पाइल्स लिमिटेड कंपनी खरीदी। स्मरणीय तथ्य है कि ये दोनों कंपनियां शुरु से ही अपने क्षेत्र में देश की शीर्षस्थ प्रथम तीन कंपनियों में अपना महत्वपूर्ण स्थान रखती थी।

ऐसा नहीं था कि उन दिनों माधोदासजी के पास बहुत धन या रुपये हो गये थे। ऐसा कुछ भी नहीं था। हां, इतना जरूर था कि व्यवसाय के क्षेत्र में उन्होंने अपनी एक छाप छोड़ी थी। इस संबंध में माधोदासजी ने इस लेखक को बताया था--'इन दोनों कंपनियों के मालिक अंग्रेज थे और बड़े ही सहृदय थे। बात कुछ बन गयी तब इधर-उधर से कुछ पैसे इकट्ठे किये; बाकी किश्तों में देना शुरू किया। फिर एक दिन ऐसा आया कि दोनों कंपनियां मेरी हो गयीं। मैंने, फिर इन्हें धीरे-धीरे आगे बढ़ाना शुरू किया। कभी भी मेरी इच्छा नहीं रही कि मैं देश के शीर्षस्थ उद्योगपति के रूप में जाना जाऊं। हां इतना जरूर चाहता था कि व्यवसाय का क्षेत्र हो या फिर समाज का, इन दोनों में अपनी एक अलग पहचान कायम रहे।' उन्होंने यह भी बताया था कि उनके पिता ने अपनी पचास की उम्र में व्यवसाय से अपने आप को मुक्त कर लिया था और बीकानेर में ठाकुरजी की सेवा में लग गये थे और हम तीनों भाई (गोविन्ददासजी, माधोदासजी, जगमोहनदासजी) यहां अपना पारिवारिक व्यवसाय संभालने लगे थे।

बहुत कम लोगों को पता है कि माधोदासजी कलकत्ता विश्वविद्यालय के कामर्स-स्नातक थे।

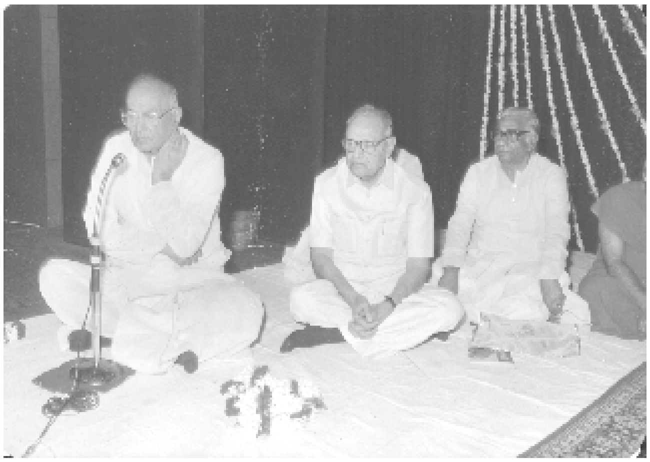

मानते थे। सच तो यह है कि माधोदासजी परदे के पीछे से एक समाज सेवी के रूप में निरंतर कार्य करते रहे। शहर की नामी संस्था भारतीय संस्कृति संसद की स्थापना उन्होंने ही की थी, पर इस संस्था के वे पदाधिकारी कभी भी नहीं बने। यह भी सच है कि वे कितना भी परदे के पीछे रहे हों, व्यक्तित्व इतना बड़ा था कि वह सहज ही लोगों के सामने आ जाया करता था। उनके व्यक्तित्व की यह एक पहचान थी। और यही पहचान माधोदासजी को अन्य लोगों से अलग खड़ा करती थी।

अपनी इच्छा से, देर से अपना विवाह किया था। स्पष्ट कारण था परिवार को फिर से एक बार मजबूत आर्थिक आधार सौंपना था उन्हें।

सामाजिक कार्यों के प्रति रुचि तो माधोदासजी की शुरू से ही रही। होती भी क्यों नहीं? यह तो उनके पुरखों से विरासत में मिली थी। पुरखों ने राजस्थान में मजदूरों और गरीबों की काफी सेवा की थी। मजदूरों से बड़ा प्रेम था मूंधड़ा परिवार को।

एक दिन यह लेखक कलकत्ता के न्यू मार्केट के सामने लिंसे स्ट्रीट में स्थित उनके कार्यालय में शाम को उनके साथ बैठा था। बताया था उन्होंने कि जब वे बीस वर्ष के थे, तभी से माहेश्वरी सभा में जाने लगे थे। उन दिनों वे कुछ दिनों के लिये माहेश्वरी पुस्तकालय के उपमंत्री भी रहे। सन् 1946-47 में माहेश्वरी क्लब के सभापति बने थे और सांस्कृतिक व सामाजिक कामों में हिस्सा लेने लगे थे। सन् 1956 तक इन संस्थाओं से वे विशेष रूप से जुड़े रहे। बाद के वर्षों में किसी पद पर नहीं थे और न मन में कभी ऐसा भाव ही आता था कि किसी पद को स्वीकार करें। कई-कई बार लोगों ने पद सौंपने की कोशिश भी की थी। पर किसी पद पर रहकर ही सेवा-कार्य पूरा किया जा सकता है -- ऐसा वे नहीं

माधोदासजी का मानना था कि उनके संस्कारों को बाल गंगाधर तिलक और महामना पं. मदनमोहन मालवीय जैसे महापुरुषों की जीवनी में वर्णित उनके सेवा भाव और पाण्डित्य ने पुष्ट किया था। सरदार बल्लभ भाई पटेल की कुशल प्रशासन-दक्षता ने उनको बहुत प्रभावित कर बड़ी सीख दी थी। उन्होंने यह भी बताया था कि कलकत्ते में जिन लोगों से प्रभावित रहे, उनमें अग्रज पीढ़ी में सीतारामजी सेकसरिया ने उन्हें बहुत अधिक प्रभावित किया था, मित्रों में रामनिवासजी ढंढारिया, जबकि अनुज पीढ़ी में जयकिशनदासजी सादानी ने। बड़ी ईमानदारी के साथ उन्होंने कहा था एक दिन कि 'मैं आजभी घंटों साहित्य, संस्कृति एवं अध्यात्म पर जयकिशनदास के साथ बातें करता हूं। बहुत कुछ सीखने को मिलता है उनसे।'

माधोदासजी ने अपनी निजी क्षमता के बल पर सन् 1950 में एक काम प्रारंभ किया था - गरीबों, विधवाओं और कमजोर वर्गों के लोगों को सहयोग देना, जो निरंतर चलता रहा।

दरअसल बहुत बड़ा था मन, संस्कृति के प्रेमी और कर्मी माधोदासजी का। इसीलिए तो कुछ बड़ा ही

सोचते थे। संस्कृति तो मानव जाति के संस्कारों की वाहिका है। तभी तो एक दिन भारतीय संस्कृति संसद के निर्माण की परिकल्पना बनी थी। एक आत्मीय मुलाकात में उन्होंने बताया था कि हमेशा मन में एक बात घुमड़ती रहती कि कलकत्ता में एक ऐसी संस्था हो जो साहित्यिक एवं सांस्कृतिक हो और देश में अपने में निराली हो। फिर एक दिन इस परिकल्पना को मूर्त रूप दिया गया। भारतीय संस्कृति संसद की स्थापना हुई। उन्होंने बताया था कि अन्य संस्थापक मित्रों में थे रामनिवास ढंढारिया और हरिप्रसाद माहेश्वरी। कुछ ही दिनों में भारतीय संस्कृति संसद ने अपनी विशेष पहचान बना डाली। और जानने वाले जानते हैं कि अपनी सांस्कृतिक गतिविधियों के चलते पूरे देश में ही नहीं बल्कि दूर देशों में भी इस संस्था की अपनी एक पहचान आज बनी हुयी है।

संसद के बारे में चर्चा करते माधोदासजी ने कहा था--**'संसद की अपनी एक समृद्ध परंपरा रही है। देश का ऐसा कौन शीर्षस्थ दार्शनिक, चिंतक, कलाकार, साहित्यकार एवं सामाजिक-राजनीतिक नेता रहा है, जिसने अपनी उपस्थिति से इसे विशिष्टता प्रदान न की हो।** स्वामी रंगनाथन, स्वामी चिन्मयानन्द, स्वामी भक्ति वेदांत, स्वामी आत्मानंद, अतुल कृष्ण गोस्वामी, विलियम स्टुअर्ट जैसे संतों तथा दार्शनिकों ने अपनी उपस्थिति एवं व्याख्यानों द्वारा इस संस्था को समृद्धि प्रदान की है। चक्रवर्ती राजगोपालाचारी, आचार्य कृपलानी, काका कालेलकर, क.मा.मुंशी, के.मा.पन्निकर, सत्येन बोस, जयप्रकाश नारायण, र.रा.दिवाकर जैसे अनेक राजनीतिज्ञ मनीषी चिंतक तथा कालिदास नाग, सुनीति कुमार चटर्जी, निहाररंजन राय, अमेलेंदु बोस, महादेवी वर्मा, हजारी प्रसाद द्विवेदी जैसे आचार्य यहां समागत रह चुके हैं। कलाशिल्पियों में बड़े गुलाम अली खां, बी.जी जोग, प. जसराज, प. भीमसेन जोशी, ज्ञान प्रकाश घोष, श्रीमती लक्ष्मीशंकर एवं श्रीमती गिरिजा देवी जैसे संगीत साधक भारतीय संस्कृति संसद में आ चुके हैं। उपरोक्त विद्वानों, चिंतकों और कलाकारों की भारतीय संस्कृति संसद में उपस्थिति, इस संस्था की महत्ता को स्वतः रेखांकित करती है जिसके संस्थापक माधोदासजी थे।

पचास वर्ष की उम्र में पिता (गिरधरदासजी) द्वारा व्यवसाय से संन्यास लेकर बीकानेर चले जाने के उपरांत, कलकत्ता में रहते हुए माधोदासजी के व्यावसायिक प्रयास और सामाजिक सरोकार निरंतर प्रगाढ़ होते रहे। जबकि बीकानेर में पिता गिरधरदासजी, मजदूरों व अन्य कामकाजी लोगों के निमित्त संचालित भारतीय विद्या मंदिर रात्रि विद्यालय, राजस्थान बाल भारती तथा भारतीय विद्या मंदिर शोध प्रतिष्ठान के उत्थान में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते रहे। फिर अपने जीवन के शेष तक बीकानेर की इन ख्यातिसंपन्न संस्थाओं का संचालन खुद

मोधादासजी करते रहे। शोध प्रतिष्ठान से 'वैचारिकी' त्रैमासिक (अब भारतीय विद्या मंदिर कोलकाता से द्वैमासिक) पत्रिका का प्रकाशन हो रहा है तथा अनेक महत्वपूर्ण प्रकाशन भी निरंतर सामने आ रहे हैं।

अपने बारे में कुछ भी कहते माधोदासजी अपनी माता और अपने पिता को जरूर स्मरण किया करते थे। वे बार-बार कहा करते थे कि पिता का शिक्षा और संस्कृति के प्रति लगाव और माता की करुणा और सेवा भाव ने मेरे अंदर ऐसे संस्कार-बीज की रचना की कि मैं निजी कोशिश से बीकानेर में एक सौ शय्याओं के एक अस्पताल को सहज ही बना सका। माता के ऋण से कभी भी मुक्त होना मेरे लिए संभव नहीं। मां (श्रीमती सूरज देवी) के सेवा भाव को इस अस्पताल-निर्माण के द्वारा प्रणाम किया है। माधोदासजी से तब जानकारी मिली थी कि माताजी की स्मृति में एक आयुर्वेदिक निःशुल्क चिकित्सालय बीकानेर में सेवा-कार्य में जुटा हुआ है। माधोदासजी ने बड़े ही विश्वास के साथ मुझे आश्वस्त करते उस दिन कहा था-- 'देखिए, मैं कल रहूं या न रहूं पर इतना अवश्य स्पष्ट करना चाहता हूँ कि ये प्रतिष्ठान मेरी अनुपस्थिति में भी बंद नहीं होंगे, ऐसी व्यवस्था मैंने पहले से ही कर दी है।' मथुरा में माधोदासजी ने एक धर्मशाला भी बनवायी थी।

संगीत माधोदासजी की कमजोरी थी। केवल इसे वे सुनते ही नहीं थे बल्कि गाते थे और स्वर-संगीत की बारीकियों का ज्ञान रखते थे। घंटों संगीत पर चर्चा कर सकते थे। प्रायः प्रत्येक दिन स्वर-साधना में लगे रहते थे। वे कहा करते थे कि संगीत उनमें जीने की स्पृहा पैदा करता है। अपने को संगीत का मर्मज्ञ कभी नहीं माना पर इस बात को स्वीकार करते थे कि वे संगीत के एक जिज्ञासु हैं। **कहा था -- 'सच कहता हूं और ईमानदारी पूर्वक कह सकता हूं कि रोज इसे मैं सीखने का प्रयास करता हूँ, भक्त हूं संगीत का।'** पर जिन लोगों ने माधोदासजी को गाते सुना, स्वर-साधना करते देखा, वे आज भी कहते हैं कि माधोदासजी एक विशिष्ट स्वर-शिल्पी थे।

आज माधोदासजी हमारे बीच नहीं हैं। होते तो सौ वर्ष के होते। होते तो व्यवसाय और समाज सेवा से निश्चित वे जुड़े रहते। ऐसा व्यक्तित्व था उनका कि होते तो रोशनी बांटते रहते। पर सशरीर न होकर भी वे हमारे बीच आज भी हैं। उनका कृतित्व शीशे की तरह साफ हमारे सामने है। हमें उसमें देख कर आत्मालोचन करने की आवश्यकता है। सच तो यह है कि सेवा और समाज की महत्ता को जो समझते हैं, वे बताते हैं कि सेवा भाव, संस्कृति और व्यावसायिक गुणों के समन्वय से जो व्यक्ति बना था, उसका नाम था श्री माधोदास मूंधड़ा।

द्वारा - डॉ. कृष्ण बिहारी मिश्र
7, हरिमोहन राय लेन, बेलियाघाटा
चूनापट्टी, कोलकाता-700015,
मो. 8820416769

सच तो यह है कि माधोदासजी परदे के पीछे से एक समाज सेवी के रूप में निरंतर कार्य करते रहे। शहर की नामी संस्था भारतीय संस्कृति संसद की स्थापना उन्होंने ही की थी, पर इस संस्था के वे पदाधिकारी कभी भी नहीं बने। यह भी सच है कि वे कितना भी परदे के पीछे रहे हों, व्यक्तित्व इतना बड़ा था कि वह सहज ही लोगों के सामने आ जाया करता था।

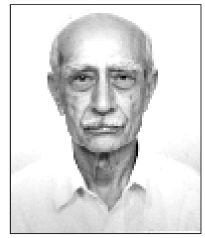

मेरे भाई साब : माधोदासजी मूंधड़ा

विजय कुमार बर्मन

'भाई साब' (माधोदास जी मूंधड़ा) से मेरा परिचय (जहाँ तक ध्यान आता है) 1948 में हुआ था। इस तरह हमारा पारिवारिक परिचय काफी पुराना है। दोनों परिवार महाप्रभु बल्लभाचार्यजी के पुष्टिमार्गीय वैष्णव हैं। हमारे परिवार का "श्री साँवलियाजी का मंदिर" कलकत्ता में और उनके परिवार का 'श्री मदनमोहन लालजी का मंदिर' बीकानेर में है, यही परिचय धीरे-धीरे मित्रता में और फिर आत्मीयता में परिणत हो गया और मैं उन्हें 'भाई साब' कहने लगा।

हमारा व्यापारिक संबंध भी 25-30 वर्ष रहा। जब भी कोई समस्या आती तो उनसे सलाह लेता रहता। हमारा परिवार व्यापार में कभी नहीं था। मैंने जो कुछ भी व्यापार के बारे में सीखा, उसका श्रेय भाई साब को है। व्यापार में व्यवहार-कुशलता को वे आवश्यक समझते थे। **उनका मानना था कि "व्यवहार-कुशल व्यक्ति अपने कार्य को तात्कालिक दृष्टिकोण से नहीं देखता वरन् पिछली स्थितियों व आगे आने वाली संभावनाओं पर विचार करके निर्णय लेता है। तभी वह निर्णय हितकारी होता है। साथ में काम करने वालों को पहचानना बहुत जरूरी है। उनसे कैसे काम लेना है। यदि जीवन में आगे बढ़ना है तो दूसरे को आगे बढ़ाओ तो स्वयं बढ़ जाओगे। अच्छे आदमी कम हैं, मुश्किल से मिलते हैं, उन्हें छोड़ना नहीं चाहिए।"** भाई साब बड़े ही बुद्धिमान और व्यवहार-कुशल व्यक्ति थे। परिवार के सदस्य की तरह मानते थे। आज भी उनका परिवार वही संबंध निभाता आ रहा है और हमें घर के बड़ों की तरह सम्मान देता है।

भाई साब का व्यक्तित्व बड़ा ही भव्य और आकर्षक था। लंबा कद, स्वच्छ श्वेत परिधान। जब भी किसी संस्था में जाते तो लोग आदर से उठ कर खड़े हो जाते। बातचीत भी करते तो रुक-रुक कर, बड़ा सोच समझ कर, एक-एक शब्द को तौल कर बड़ी बुद्धिमानी से, जिसका प्रभाव उपस्थित व्यक्ति पर अपनी छाप छोड़ देता था। उनके विचार भी बड़े प्रभावी और विचारणीय होते थे जो सामने वाले को सोचने के लिए बाध्य कर देते थे। सात्त्विक खान-पान, नियमित दिनचर्या। धार्मिकता, पर धर्म की कट्टरता से दूर। Simple living and High thinking के ज्वलंत उदाहरण थे वे।

दूसरों के गुणों को पहचान कर, उनसे काम लेने की अद्‌भुद् क्षमता भाई साब में थी।

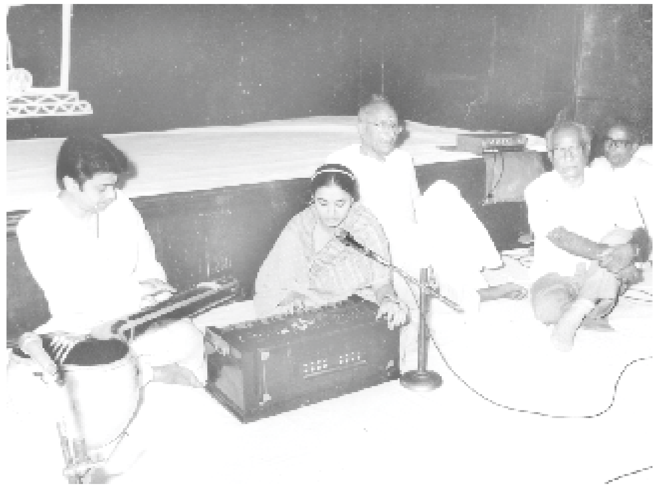

मेरी पत्नी रविप्रभा की साहित्य व संगीत में रुचि देखकर उन्होंने उसे सदा प्रोत्साहित किया और उसके द्वारा "श्रीकृष्ण लीला" सम्बन्धित कई आयोजन भारतीय संस्कृति संसद के अन्तर्गत बड़े मंच पर प्रस्तुत करवाए। संगीत-गुरु ज्ञानप्रकाश घोष के समवेत संगीत-कार्यक्रमों में कामेण्ट्री बोलने का काम भी उससे करवाया। भाई साब, घर के वैवाहिक कार्यक्रमों में संगीत-आयोजन घर में न कराकर, प्रेक्षागृह में कराते थे उसका कार्य-भार भी रविप्रभा पर होता -- कभी सामूहिक नृत्य, कभी नृत्य नाट्य के रूप में। जब कभी भाई साब का फोन आता-'रवि, मैं तुम्हारे घर आ रहा हूँ चाय पीने।" रवि समझ जाती कि अपनी मीठी-मीठी बातों से भाईजी फँसाने आ रहे हैं, कोई नए आयोजन की तैयारी है। मन ही मन बहुत खुश होती क्योंकि उसकी अपनी रुचि भी इसी ओर है। उनकी प्रेरणा से रवि द्वारा प्रस्तुत "कृष्णलीलामृतम्" के दोनों संगीत-आयोजन आज तक लोग याद करते हैं जिनमें पारंपरिक-संगीत-विधा में कृष्ण जन्म से मथुरा गमन और उद्धवलीला तक की कथा संसद-सदस्यों द्वारा समवेत-संगीत में प्रस्तुत की गई थी।

भाई साब का संगीत-प्रेम केवल आयोजनों तक ही सीमित नहीं था वे स्वयं भी पं. मणिरामजी से शास्त्रीय-संगीत सीखते, नित्य अभ्यास करते और दूसरों से उसपर टिप्पणी भी सुनना चाहते थे। संसद-प्रेक्षागृह में भी कई बार संगीत प्रस्तुत करते। 'संसद' में संगीत-कक्षा चालू करने का श्रेय भी भाई जी को है जहाँ डागर घराने के उस्ताद 'तानसेन पांडे' शिक्षक थे और विद्यार्थी थे--लक्ष्मीनिवास झुंझुनवाला, कृष्णगोपाल कंधारी, स्वयं भाई साब और कुछ अन्य मित्र। संसद में संगीत-कक्षा की यह परिपाटी आज तक चालू है। मित्रों के साथ जब पर्यटन पर जाते तबभी एक 'गायक' साथ चलता था। नित्य संध्या से देर रात तक संगीत की महफिल जमती। भोजन की कोई सुध नहीं, इससे महिलाओं को बड़ी कोफ्त होती। पर भाई जी का स्वर-अभ्यास चालू रहता। कुछ अरसिक मित्रों को भी मन मार कर बैठे रहना पड़ता।

संगीत के साथ साहित्य में भी भाई साब की बड़ी रुचि थी। स्वयं पढ़ते, आलोचना भी करते। शरद चन्द्र चट्टोपाध्याय उनके प्रिय लेखक थे। उनके साहित्य से उन्हें विशेष प्रेम था। उनका कोई उपन्यास उनकी टेबुल पर पड़ा ही रहता था। बातचीत के सिलसिले में उनके प्रमुख पात्रों की चर्चा भी कर देते। भाई साब को स्वयं भी लिखने का बहुत शौक था। उनकी चिन्तनपूर्ण कई पुस्तकें भारतीय विद्या मंदिर ने प्रकाशित की हैं।

भारतीय संस्कृति, संगीत और साहित्य को अपने जीवन का अंग बनाने की भावना से 'भारतीय संस्कृति संसद' की स्थापना भाई साब की दूरदर्शिता का परिणाम है। भा.सं.संसद को उनका मानस-पुत्र कहना अत्युक्ति नहीं होगी, बड़े ही मनोयोग और प्रेम से इस संस्था को जन्म दिया जो कि उस समय कलकत्ता में इस प्रकार की पहली संस्था थी। विशिष्ट राजपुरुष, विद्वान, संत, कवि, संगीतज्ञ, जीवन के विभिन्न क्षेत्र की महान विभूतियाँ संसद

द्वारा आमन्त्रित की जाती थी। सदस्यों द्वारा भी संगीत व साहित्य के कार्यक्रम संसद-मंच पर प्रस्तुत किए जाते थे, जिसको 'रंजन गोष्ठी' नाम दिया गया था। इसके अतिरिक्त 'अध्ययन-गोष्ठी', 'रचना-गोष्ठी' भी प्रति सप्ताह चलती थी। सदस्यों के ज्ञान-वर्द्धन के लिए पं. अक्षयचन्द्रजी शर्मा को बीकानेर से बुलाकर कलकत्ता में रखा, उनके जीवन-यापन की पूरी व्यवस्था की। एक विद्यार्थी के समान उनसे शिक्षा-लाभ स्वयं भी लेते थे और मित्रों को भी प्रेरित करते थे। अक्षयचन्द्रजी के तत्वावधान में आरंभ की गई 'अध्ययन-गोष्ठी' आज भी संसद में चालू है जिसका कार्य-भार स्वयं सदस्यगण सँभालते हैं।

संगीत, साहित्य और वैष्णव परम्परा के पोषक होने के कारण वल्लभ संप्रदाय के मंदिरों में गाए जाने वाले अष्टछाप के कवियों के कीर्तन-गायन की रिकार्डिंग में भाई साब की प्रेरणा भुलाई नहीं जा सकती। प्रायः 1225 पदों की रिकार्डिंग सप्तम पीठाधीश्वर गोस्वामी घनश्याम लाल जी की छत्रछाया में कामवन में सम्पन्न हुई थी, जिससे यह लुप्त होती हुई परम्परा कुछ अंशों में जीवित रह सके। रवि प्रभा के प्रयत्न से कीर्तन-सेवा की यह रिकार्डिंग और ब्रजभाषा के उन पदों की हिन्दी व्याख्या के रूप में 2 पुस्तकों का प्रकाशन भाई साब माधोदास जी के आशीर्वाद का फल है। इनके द्वारा इच्छुक विद्यार्थी इस पारंपरिक कीर्तन शैली को सीख सकते हैं, मंदिरों में 'कीर्तनिया' के अभाव में कीर्तन-सेवा संभव हो सकती है। वैष्णव घरों में भी प्रभु सेवा के समय सी.डी. बजाकर सेवा का आनन्द लिया जा रहा है। कभी सोचा न था कि देश-विदेश में कीर्तन के ये कैसेट इतने प्रचलित होंगे। बीकानेर के विद्वान कीर्तनिया ढूंढ महाराज द्वारा गाए हुए कीर्तन भी भाई साब ने रिकार्ड कराए जो आज एक पूँजी के रूप में माने जाते हैं।

संसद में घर परिवार की महिलाओं को जोड़ना भाई साब का एक बड़ा महत्वपूर्ण कदम था। सम्भ्रान्त परिवार की महिलाओं का घरसे बाहर निकल कर अपनी प्रतिभा प्रदर्शन करना अकल्पनीय था। पर भाई साब ने महिलाओं में छुपी हुई प्रतिभा को पहचाना और उसे प्रदर्शित करने का सुयोग दिया। इसके लिए पब्लिक में न जाकर एक संभ्रान्त घरेलू परिवेश संसद-मंच पर दिया। उनके छोटे भाई जगमोहनदासजी मूँधड़ा का मधुर कंठ-स्वर, साथ में संसद परिवारकी बहनों-भाभियों का गायन संसद-मंच पर सांस्कृतिक उत्सवों पर बराबर होने लगा। धीरे-धीरे महिलाओं की संख्या बढ़ने लगी तो पुरुषों के बीच में आयोजन की तैयारी, रिहर्सल के समय की पाबंदी आदि में असुविधा देखकर महिलाओं ने अपनी अलग से संस्था बनाने की योजना बनाई। कुछ सदस्यों ने आपत्ति भी जताई पर भाई साब ने सारी परिस्थितियों पर विचार करके, संसद के अन्तर्गत महिला विभाग की आज्ञा दे दी जो "मनीषा" नाम से अनवरत आगे बढ़ रहा है जिसकी कई सदस्याएँ जीवन में उपयोगी अनेक क्षेत्रों में कार्यरत हैं। भारतीय संस्कृति, साहित्य, संगीत के साथ समाज-सेवा भी 'मनीषा' का लक्ष्य है।

संसद-स्थान 10 चौरंगी रोड, कलकत्ता

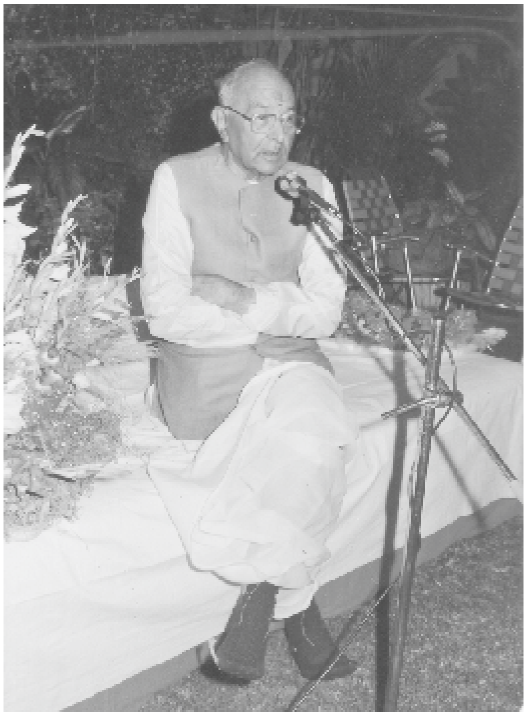

भाई साब की अपनी ही प्रोपर्टी है जो उन्होंने संसद को उपयोग के लिए दे रखी है। यह साहित्य संगीत और संस्कृति के लिए भाई साब की अनुठी सेवा है। संसद में शुद्ध सात्विक भोजन की कैन्टीन भी (केवल सदस्यों के लिए) खोली गई। अपने कार्यालयों के बाद संध्या को सदस्य, संसद में चाय-अल्पाहार के साथ साहित्य-चर्चा भी करें, आयोजनों की रूपरेखा बनाएं, स्वस्थ मनोरंजन में कुछ पल आनन्दित हों, पुस्तकालय का भी लाभ लें आदि उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए एक आदर्श मिलन-स्थान के रूप में संसद कलकत्ता के हृदयस्थल धर्मतल्ला के बड़े Central Area में खुली जहाँ सब दिशाओं से लोग सुविधा पूर्वक आ सकते हैं। भारतीय ढंग से धरती पर बैठकर आसन-पाटा पर भोजन परोसना संसद का विशेष आकर्षण है।

चित्रकला की कक्षा के लिए इन्द्र दुगड़ जैसे रचनाधन्य कलाकार को नियत किया जिन्होंने अनेक पुरुषों और महिलाओं को चित्रकला की शिक्षा दी। समय समय पर छात्रों की चित्र-प्रदर्शनी भी संसद में आयोजित होती रही। भाई साब के साथ संसद में नियम से आने वाले कुछ विशेष सदस्यों को भुलाया नहीं जा सकता। श्री गोकुल दास जी दम्मानी, पाक शास्त्र में निपुण जिनके अनूठे प्रयोगों ने संसद-कैण्टीन को एक नई दिशा दी। श्री रामनिवास जी ढंढारिया बड़े ही भक्त, साहित्यिक, कुशल वक्ता। श्री हरि प्रसाद जी माहेश्वरी बड़े ही बुद्धिमान, कार्यकुशल, परिष्कृत विचारवाले। कृष्ण गोपाल कंधारी, शायद उम्र में सबसे छोटे, हास्य-व्यंग में माहिर, गंभीर वातावरण को भी अपने चुटकुलों से हल्का बना देने वाले। श्री कन्हैयालाल जी बागड़ी, सबसे वरिष्ठ, परम भक्त, शान्त प्रकृति, मधुर कंठ से सुंदर पद-गायन द्वारा सबको मुग्ध करने वाले। लक्ष्मी निवास जी झुनझुनवाला बड़े ही बुद्धिमान कुशल व्यावसायिक, संगीत प्रेमी, जीवन के हर क्षेत्र में अनूठा सोच रखने वाले। श्री दामोदर दास डागा बड़े ही चतुर कार्यकर्ता, समाज सेवी, एक घंटे का काम आधा घंटे में निपटाने वाले। पता नहीं क्यों भाई साब ने मुझे भी इस मित्र मंडली में शामिल कर धन्य कर रखा था।

प्रायः नित्य ही सायंकाल कभी संसद-स्थान में, कमी उनके आफिस में, किसी न किसी विषय को लेकर चर्चा होती थी और 8 बजे के बाद हम सब अपने अपने घर जाते। भाई साब का व मेरा निवास-स्थान बड़ा बाजार में पास पास था। संसद से निकलते तो पैदल ही चल देते, ड्राइवर को गाड़ी लेकर पीछे पीछे आने को कह देते। बात करते करते कैसे रास्ता कट जाता पता ही नहीं चलता।

भाई साब व भाभी जी (श्रीमती कृष्णादेवी) को पर्यटन का बहुत शौक था। समयाभाव होने पर भी साल में कम से कम एक बार मित्रों के साथ पर्यटन का कार्यक्रम बन जाता। दस पाँच लोग, एक नौकर, एक रसोइया साथ रहता था। उनके साथ

बहुत सी जगह जाने व आनंद उठाने का अवसर मिला--राँची, नेतरहाट, देवघर, उड़ीसा चिल्कालेक, पानापुरी, काश्मीर, कोलाई ग्लेशियर, दार्जिलिंग, नैनीताल, बिन्सर आदि, और भी अनेक जगह। मित्र मंडली में प्रसिद्ध गायक पं. मणिराम जी का कंठ-स्वर आनन्द में चार चाँद लगा देता था। भाई साब के लिए बीमारी में भी मित्रों का साथ आवश्यक था। बम्बई के पास बाला जी ताम्बे के आरोग्य-आश्रम में गए तब भी कई मित्र उनके साथ रहे। रवि भी अपने 'माइग्रेन' के इलाज के लिए साथ गई थी। वहाँ भी साहित्य-संगीत की चर्चा चलती रहती थी।

एक बार भाई साब द्वारा बीकानेर में निर्मित हास्पीटल के उद्‌घाटन-समारोह में हम भी सम्मिलित हुए। वहाँ हमने देखा कि कई शैक्षणिक संस्थाएँ, बालिकाओं के स्कूल, महिलाओं को स्वावलम्बी बनाने की कक्षा, विद्वत मंडली भाई साब ने स्थापित की हुई थी। तब ज्ञात हुआ कि कलकत्ता में रहते हुए भी अपने जन्म स्थान के उत्थान के प्रति वे कितने सजग और सक्रिय थे।

कलकत्ता में शायद ही कोई ऐसी शैक्षणिक, सांस्कृतिक, धार्मिक संस्था हो जिसको वे बराबर सहायता न देते हों। इसके अतिरिक्त **किसी अभावग्रस्त परिवार को भी वे चुपचाप सहायता देते रहते थे। विशेष कर मित्रों व स्वजनों की गुप्त रूप से सहायता करते थे। उनका मानना था कि किसी के बिना जाने यदि किसी का उपकार होता है तो वही सच्चा उपकार है। हर व्यक्ति मदद लेना नहीं चाहता, यदि समाज को पता चल जाय तो उसके आत्मसम्मान को ठेस लगती है। इस बात का भाई साब सदा ध्यान रखते थे कि उनके द्वारा दी गई सहायता का समाज में प्रचार न हो। वे कहते थे कि देकर कोई गरीब नहीं हो होता अपितु सुकर्म के पैसे के दान से, सुयश और सुकीर्ति के रूप में उसका धन बढ़ता है।**

उनकी कही बहुत सी बातें भुलाई नहीं जा सकती। उनका मानना था कि जीवन में आगे बढ़ना है तो अपने सहयोगियों को आगे बढ़ाओ तो तुम खुद-ब-खुद आगे बढ़ जाओगे। भाई साब को गए आज 17-18 वर्ष हो गए पर आज भी जब उनके विषय में सोचता हूँ तो ऐसा लगता है कि कहीं दूर नहीं गए हैं, पास ही हैं। मेरा सौभाग्य है कि भाई साब माधोदास जी के रूप में मुझे एक सच्चा साथी, मित्र और मार्गदर्शक मिला।

30 न्यू रोड अलीपुर,
कोलकाता-700027,
फोन-9830753449

वैचारिकी लेखक-पाठक मंच
(ऑनलाइन वर्चुअल संगोष्ठी का आयोजन)
आयोजक : वैचारिकी त्रैमासिक शोध-पत्रिका (UGC Care List Alphabetically No.4)
भारतीय विद्या मन्दिर, कोलकाता
(* Email-bvm.vaichariki@gmail.com, * Website: www.bharatiyavidyamandir.org)
समन्वयक : **डॉ. बाबूलाल शर्मा**
Whatsapp No. +91 9330609541 पर निःशुल्क पंजीयन कराने का कष्ट करें, स्वागत है।

पंजीयन फार्मेट
नाम : जन्म दिनांक :
पता :
कार्य-व्यवसाय : ---------------------------------
(रिटायर्ड हैं तो किस पद से) :
व्हाट्सएप नं : ---------------------------------

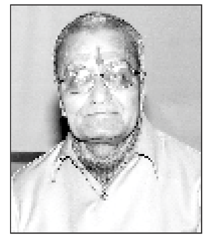

ऐसे थे मेरे माधोदासजी

लक्ष्मीनिवास झुंझुनवाला

1952 (जब मेरी आयु 25 वर्ष की थी) में भाई रामनिवास ढंढारिया से सम्पर्क हुआ। अत्यन्त तेजस्वी व स्नेहिल व्यक्तित्व। उस समय तक मैंने पटसन के बोरे व हैसियन में काफी रुपये कमा लिये थे। रामनिवास जी ने एक मासिक पत्रिका निकालनी आरंभ की "जूट एण्ड गनी रिव्यू"। माधोदासजी को व्यक्ति की गहरी पहचान थी। रामनिवास जी में प्रतिभा देखी तो उन्हें कार्यालय के लिये अपने मकान में एक कमरा दे दिया। रामनिवास जी वहीं से पत्रिका निकालने लगे। इसी संदर्भ में माधोदास जी, रामनिवास जी और मैं प्रायः मिला करते थे। 1954 में मैं स्टील के व्यापार में आया। संयोग की बात है कि रामनिवास जी ने दूसरी पत्रिका "आयरन एण्ड स्टील रिव्यू" निकाली। माधोदास जी बहुत बड़ा काम कन्स्ट्रक्शन का करते थे। स्टील की कमी थी। रामनिवास जी को पत्रिका के लिये उत्साहित किया।

1955 में माधोदास जी ने स्वप्न देखा कि ऐसी संस्था बनायी जाये जहाँ भारत के विशिष्ट साहित्यकारों--राजनेताओं-संगीतकारों--चित्रकारों--शिक्षाविदों को आमंत्रित कर उनको सुना जाये। अपने मकान (10 चौरंगी रोड कलकत्ता) में एक तल्ला पूरा इसके लिए उन्होंने दे दिया। करीब 100-200 व्यक्तियों का सभागार, तीन अन्य कमरे बन गये। भारतीय संस्कृति संसद का जन्म हुआ। रामनिवास जी उसके पीछे पागल की तरह काम करने लग गये। प्रायः रात वहीं सो जाते व संसद के भविष्य की योजना बनाते। धीरे-धीरे हरिप्रसाद माहेश्वरी व मैं भी जुड़ गये। गोकुलदास जी दम्मानी, विजय बर्म्मन जुड़ गये। विजय बर्म्मन संगीत के पीछे पागल-- उन्होंने अपने मित्र कृष्ण गोपाल कंधारी को भी जोड़ लिया।

प्रातः 6.00 बजे संसद में माधोदास जी, विजय बर्म्मन, कंधारी व मैं चार आदमी आते। तानसेनजी हम लोगों को संगीत की शिक्षा देते। दो घंटे कक्षा चलती। इस प्रकार संगीत के प्रति गंभीरता आई।

माधोदासजी के बड़े पुत्र बिट्ठल का विवाह हुआ। विवाह में हम लोग बीकानेर गये। संगीतकार जसराज भी विवाह में आये। प्रातः ब्रह्म मुहूर्त में उनका संगीत डेढ़ घंटे चलता। मैं, कंधारी, बिट्ठल, माधोदास जी, विजय बर्म्मन सब उनके साथ बैठते, सुनते और अपनी सुरी-बेसुरी राग में गाते भी।

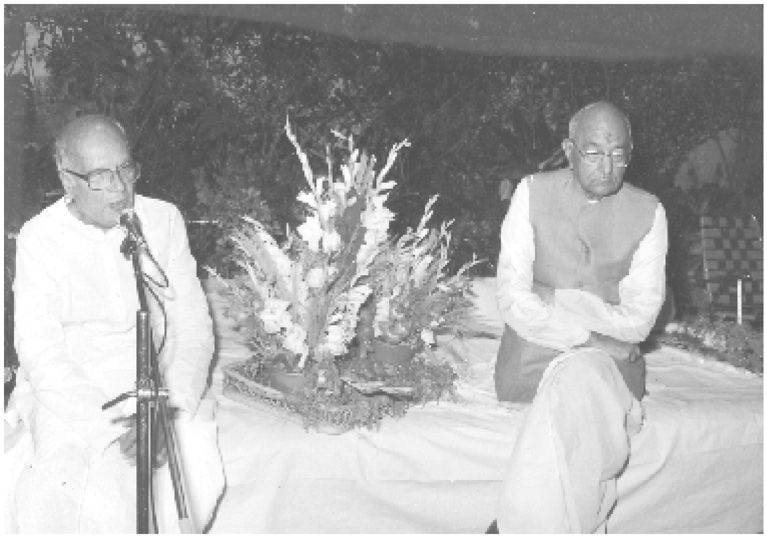

संसद में इन्द्र दुग्गड़ ने चित्रकला की कक्षा आरंभ कर दी। मेरी पत्नी को उसमें रुचि थी। माधोदास जी चित्रकला की कक्षा में आने लगे तथा चित्रकला की कक्षा दस-बारह विद्यार्थियों को लेकर चलने लग गयी। **माधोदासजी का बहुआयामी व्यक्तित्व रहा। संगीत-चित्रकला-बौद्धिक रुचि सब में उत्साह से भाग लेते।** मुझे कभी चित्रकला में रुचि नहीं रही।

भाई गोकुलदास जी दम्मानी तरह-तरह के मिष्ठान्न--चाट आदि बनाने व बनवाने में माहिर थे। संसद में यह भी एक विभाग खुल गया। संसद में सदस्यों की खाने के लिए भीड़ होने लग गयी।

महीने में दो बार सदस्यों का किसी विषय पर भाषण होता, वाद--विवाद प्रतियोगिता होती। प्रतियोगिता में काफी उत्तेजना रहती। प्रायः मैं व माधोदास जी दोनों ही भाग लेते। एक दूसरे का विरोध भी करते। माधोदास जी सर्वदा संयत रहने पर मैं उत्तेजित होकर अत्यन्त असंयत भी हो जाता। कटु भाषा का प्रयोग भी करता। पर माधोदास जी अपने स्नेहिल व्यवहार से सब कुछ सहज कर देते।

एक बार मैंने राम मनोहर लोहिया को संसद में वक्तव्य देने के लिये राजी कर लिया। संसद के कुछ सदस्यों ने अत्यन्त विरोध किया। मुझे बड़ी निराशा माधोदासजी से हुई। प्रोग्राम कैंसल करना पड़ा। पर आपस के स्नेह में कोई कमी नहीं आई। अब्दुल गफ्फार खाँ कलकत्ता आये थे। उन्हें बुलाने का प्रयास किया। पर सफल नहीं हुआ। सदस्यों का भी उत्साह नहीं था।

गांधी शताब्दी वर्ष मनाया, अत्यन्त उत्साह से। काका कालेलकर आये। महादेव देसाई के पुत्र नारायण देसाई आये। श्रद्धेय सीताराम जी सेकसरिया के घर कालेलकर ठहरे थे। मुझे सीताराम जी ने कहा कि कालेलकर साहेब के बाल कटवाने हैं उन्हें ले जाओ। मेरे घर के पास ही एक छोटी सेलून थी। मैंने सोचा वहाँ ले जाऊँगा। सीताराम जी ने कहा, नहीं कलकत्ते के सबसे महंगे सेलून पीजियन में ले जाओ। उन्होंने टेलीफोन करके समय तय कर दिया। मुझे आश्चर्य अवश्य हुआ। एक गांधीवादी को अंग्रेजी सेलून में बाल कटवाते देखा। कई दिनों तक माधोदास जी के साथ यह चर्चा का विषय रहा।

कलकत्ते के संगीतकार ज्ञान प्रकाश घोष का भी संसद से लगाव हो गया था। उन्होंने पाश्चात्य संगीत में जिस प्रकार सामूहिक संगीत (Choir) होते हैं वैसे एक आयोजन का कार्यक्रम बनाया। हम लोग बीस पुरुष--महिला उसमें जुट गये। रिहर्सल होने लग गये। माधोदास जी अत्यन्त उत्साहित थे। सबको संगीत के रिहर्सल में आने के लिए फोन करते। गांधी शताब्दी वर्ष में बड़े सभागार में यह कार्यक्रम

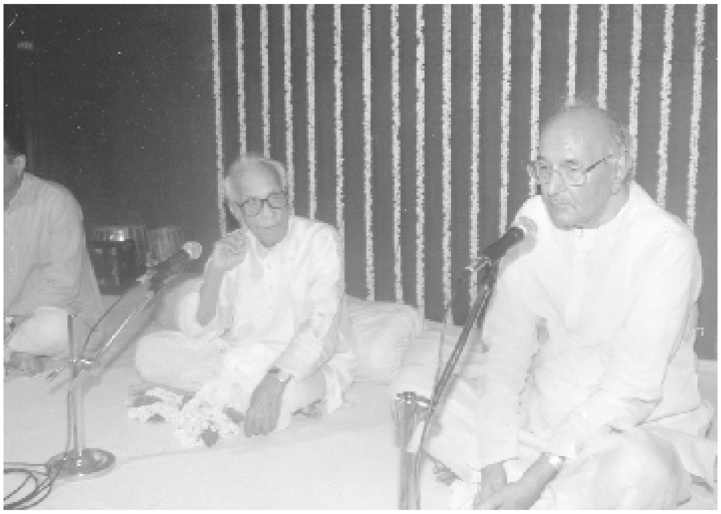

2000 फीट की ऊँचाई पर डाकबंगलों में रात का विश्राम था। सब घोड़ों पर थे, मैं पैदल चल रहा था। परमानंद चूड़ीवाल का भी मन चल गया था। सो इस यात्रा के लिए वे भी तैयार हो गये थे। कहा जहाँ तक जा सकूँगा चलूँगा फिर वहीं विश्राम करूँगा जब तक तुम लोग लौटकर आओगे मैं प्रतीक्षा करूँगा। इधर--उधर घूमूंगा। तुम लोगों के आने पर साथ लौट आऊँगा। वह वागेश्वर में रुक गये सुन्दर स्थान था। दो नदियों का संगम था। वहाँ गायों के बांधने के स्थान पर हम लोग ठहरे थे। आज आश्चर्य होता है कि कैसे वह यात्रा हो गई।

हुआ। कृपलानी जी आये हुये थे। उनकी देख-भाल मेरे जिम्मे थी। कृपलानी जी, नारायण देसाई, कालेलकर जी सभी आयोजन में आये। तुलसी-सूर, मीरा, नानक, कबीर सब के भजनों का कार्यक्रम था। तीन स्तरों पर हम सब गाने बैठे। हम लोगों को व श्रोताओं को आयोजन बहुत भव्य लगा। संध्या जब कृपलानी जी के पास मैं गया तो उन्होंने कहा लक्ष्मी तुम लोगों ने बहुत मेहनत की। पर तुम्हें सच कहूँ क्या, यही भजन विनोबा हम लोगों को सुनाते तो हम लोगों की भाव समाधि लग जाती थी।" मुझे यह सुन कर अत्यन्त चोट लगी। माधोदास जी से कहा तो उन्होंने ठीक ही कहा कि जब कृपलानी विनोबा को सुनते हैं तो उन्हें संगीतकार की दृष्टि से नहीं सुनते, उनमें उन्हें एक ऋषि के दर्शन होते हैं।

माधोदास जी का बहुआयामी व्यक्तित्व था। कई बार मैं पहाड़ों में ट्रेकिंग की चर्चा करता। पिंडारी ग्लेसियर के रास्ते का अध्ययन किया। 11000 फीट की ऊँचाई पर था। 34 मील एक तरफ की यात्रा थी। माधोदास जी से उल्लेख किया। आश्चर्यजनक बात थी, वे भी चलने को तैयार हो गये। उनकी पत्नी भी तैयार हो गयीं। पहले दिन बारह मील का सफर था।

दूसरे दिन का सफर अत्यन्त कठिन था। 9000 फीट चढ़ कर फिर आठ हजार फीट पर विश्राम था। माधोदासजी व उनकी पत्नी घोड़े पर थे। हम लोग पैदल थे। मैं अपने को बहुत बहादुर मानता था। मैं भी थक कर चूर हो गया, किसी प्रकार पहुँचे। तीसरे दिन की यात्रा आसान थी। प्रायः समतल थी। चारों ओर लम्बे--लम्बे पेड़, झरने, हरियाली, बहुत आनंद आया। चौथे दिन हम लोग 10,000 फीट पर फुरकिया पहुँच गये। भयंकर ठंड थी। माधोदासजी की पत्नी ने बादाम का हलुआ बना कर हम लोगों को खिलाया। रात भर वर्षा हो रही थी। प्रातः वर्षा रुक गयी। वहाँ से पिंडारी ग्लेसियर तीन मील दूर था। बर्फ पर चलना था। ग्रुप में आनाकानी फैल गई, पर मैंने हठ किया कि मैं दो घंटे में पिंडारी यात्रा कर लौट आता हूँ। 9 बजे नीचे उतरेंगे। माधोदास जी बिना मन मान गये। पिंडारी पहुँचने में डेढ़ घंटा लग गया। मौसम एकदम साफ था। बर्फीली चोटियों पर सूर्य की रोशनी अत्यन्त सुन्दर लगती

थी। मैं आध घंटे वहाँ रुका फिर लौटा, उतराई थी, पौन घंटे में पहुँच गया। माधोदास जी बहुत नाराज हुये। पर उनकी पत्नी ने मुझे धन्यवाद दिया कि देर हो गयी तो क्या हो गया इतनी दूर आकर ग्लेसियर आपने देख लिया, आपकी यात्रा सफल हो गयी।

एक मित्र वर्मा जी ने काव्य लिखा "कुरुक्षेत्र से राजघाट"। माधोदास जी की प्रेरणा से वह लिखा गया था। उसका सवा घंटे का पाठ संसद में हुआ। अत्यन्त सुन्दर। लोगों ने बहुत सराहा।

रामकृष्ण मिशन कलकत्ते से 15 मील पर गंगा के तट पर स्थित है। भव्य मंदिर है। 220 सन्यासी वहाँ रहते हैं। कलकत्ते में गोलपार्क में उनकी शाखा है। नरेन्द्रपुर में भारत का सर्वश्रेष्ठ शिक्षा संस्थान है। वहाँ एक गृहस्थ शुक्ला जी थे। नरेन्द्रपुर में हमने ग्राम संपर्क केन्द्र बनाया। गाँवों की गरीबी देखकर बहुत दुख हुआ। परमानंदजी व मैं प्रायः ही वहां जाते। माधोदास जी भी यदा-कदा जाते। मेरा काफी सम्पर्क था। पर संसद को उनके अधिक निकट लाने में मैं असफल रहा। डा. कालीदास नाग हमारे प्रथम अध्यक्ष थे। मैं उनके निकट नहीं आ पाया। पीछे मुझे मालूम हुआ कि उन्होंने नोबेल लोरियट रोम्याँरोलां को रामकृष्ण व विवेकानन्द की जीवनी लिखने के लिये सारी सामग्री भेजी थी। उसके बाद तो रोम्यांरोलां की पुस्तकों के प्रति अत्यन्त प्रेम हो गया। मेरा बांग्ला भाषा का काफी ज्ञान था। शंकरी प्रसाद बासु की 2000 पृष्ठों की "विवेकानन्द व समाकलीन भारत" पढ़ गया था।" संसद में बांग्ला में उनका भाषण करवाने में मैं असफल रहा। माधोदास जी चले गये। हरिभाई चले गये। गोकुलदास जी चले गये। कंधारी भी चले गये। अच्छे लोगों को ईश्वर जल्दी अपने पास बुला लेता है। विवेकानन्द चालीस भी पूरा नहीं कर पाये थे। रामकृष्ण 50 में गये थे। शंकराचार्य तो 32 में ही चले गये थे। एकनाथ जी 21 में ही चले गये।

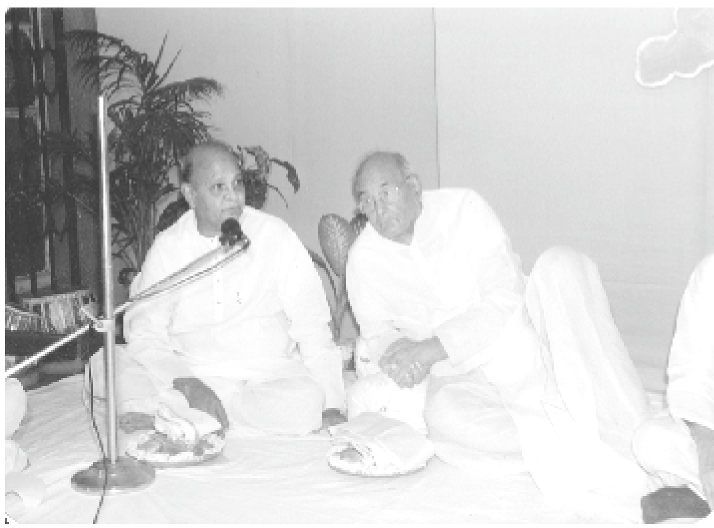

माधोदास जी की स्मृतियों को मैंने संजोकर रखा है। याद का आनंद लेता रहता हूँ। ऐसे थे मेरे माधोदास जी। माधोदास जी के पुत्र बिट्ठल संसद के विस्तार में समय दे रहे हैं। ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि वे उन्हें संसद की गुणात्मक वृद्धि व अनुसंधान की प्रेरणा देते रहें।

भीलवाड़ा टावर्स, ए-12 सैक्टर-1,
नोएडा-20130
फोन-011-41628890
ई-मेल : inj@injb.com1 (उ. प्र.),

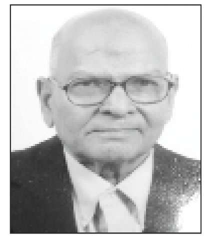

मैं, संसद एवं माधोदास जी

नरनारायण हरलालका

शायद हमने भारतीय संस्कृति संसद की सदस्यता 1956-57 में ली थी। पहले पहले संसद में हमारी किसी से जान पहचान नहीं थी, संसद के कार्यक्रम अच्छे लगते थे, इसलिए बराबर जाते थे। हमारी पत्नी भी हमारे साथ कार्यक्रमों में जाती थी और उसको भी संसद जाने का आग्रह रहता था। आहिस्ते आहिस्ते कुछ लोगों से जान पहचान हुई। सबसे पहले जिनसे हमारे परिचय का सूत्रपात हुआ वो संसद के खाद्य विभाग सम्भालते थे, उनका नाम था गोकुल दास दम्मानी। दम्मानीजी की संसद के प्रति निष्ठा एक दृष्टान्त ही है।

जितनी बार हम संसद जाते थे, गोकुल दासजी सामने सोफा पर बैठे हुए मिलते थे। गोकुल दासजी सब सदस्यों के नाम जानते थे। कार्यक्रम शुरू होने के पहले, संसद के विशिष्ट सभ्य जन दरवाजे के पास खड़े होते। आमंत्रित आगंतुक विशिष्ट जन का स्वागत करते थे। यह संसद की एक प्रकार की परम्परा ही हो गई थी, जो आज भी चल रही है। बाद में श्री हरिप्रसाद जी महेश्वरी से परिचय बढ़ता गया। पर तबतक भी हमारा श्री माधोदास जी मूंधड़ा के संग कोई परिचय नहीं हुआ था।

संसद एक पारिवारिक प्रतिष्ठान के रूप में बराबर अपना परिचय देना पसन्द करती थी। संसद के सदस्यों के संग बाहर के लोगों का भी स्वागत था। हमारे साथ कार्यक्रम में हमारे कुछ बन्धु भी आने लगे। श्यामसुन्दर बगड़िया, गौरीशंकर कायां, हरीराम चौधरी और इनके अलावा भी कई बन्धुगण संसद के कार्यक्रम में भाग लेने लगे।

यह बन्धु मंडली संसद के कार्यक्रमों में कभी कभी हिस्सा भी लेने लग गई थी। कुछ दिन बाद ये उत्साह के संग संसद के सदस्य भी बन गए। शायद इसके बाद ही माधोदासजी की नजर में हमलोग आए होंगे। कभी कभी थोड़ी बातचीत उनसे होने लग गई। **माधोदासजी गम्भीर प्रकृति के थे। बात कम करते थे। पर दृष्टि उनकी सब तरफ थी। कोई भी कदम उठाने के पहले उस विषय के बारे में पूरी चिन्तन भावना कर लेते थे। सबके साथ, उनका मेल मिलाप सौजन्य मूलक हँसी में आबद्ध था।** उनके घनिष्ट बन्धुओं में श्री हरिप्रसाद जी महेश्वरी, श्री बर्मनजी, श्री लक्ष्मी निवास जी थे,

रमणलालजी बिन्नानी तथा जयकिशन जी सादानी के संग उनकी घनिष्ठता बाद में बनी। श्री परमानन्द चूड़िवाल भी उनके घनिष्ठों में एक थे। श्री अक्षयचन्द जी शर्मा संसद की अध्ययन गोष्ठी के संचालक थे। माधोदास जी अक्षयचन्द जी के प्रति बहुत श्रद्धा करते थे। बीकानेर से शर्मा जी को कलकत्ता लाने का श्रेय माधव दास जी को ही था। कुछ ही दिनों में कलकत्ता के विशेष ज्ञानी जनों में श्री अक्षयचन्द जी ने अपना स्थान बना लिया था।

हमारे बन्धु गण बगड़िया जी, दवे जी, गौरीशंकर जी, हरि प्रसाद जी, सभी अपने अपने गुणों से संसद के विभिन्न विभागों के सचिव या संचालक बन गए। तब हम सभी को माधोदास जी के और निकट आने का अवसर प्राप्त हुआ। यद्यपि हमलोग उनके खूब अन्तरंग नहीं थे परन्तु उनकी कार्य पद्धति, प्रोग्राम को सफल बनाने के लिए उनकी छोटी छोटी बातों पर तीक्ष्ण नजर और सबको अपना अपना काम समझाने का तरीका हमलोगों को बहुत प्रभावित करता था। **असल में माधोदासजी थे पूर्णतावादी, पूरे काम की सर्वांगीण सुन्दर रूप से कैसे परिचालना करनी है, वो जानते थे। वो हमारे सेनापति थे, और हमलोग उनके सैनिक। किसी काम को सुचारु रूप से करने की शिक्षा हमलोगों को उनसे ही मिली थी।**

संसद ने एक ऐतिहासिक काम हाथ में लिया था। जरूर प्रेरणा माधोदास जी की ही थी। पर कार्यकारी भारत विख्यात चिन्तक प्रभाकर माचवे और जयकिशन जी सादानी थे। इसके अन्तर्गत "भारतीय संस्कृति" नाम से दो खण्ड में छपे ग्रन्थ में प्रायः सभी विद्वान, लेखक, दार्शनिक, अपने अपने सुचिन्तित मत लिखकर किताब की शोभा बढ़ाई थी। भारत में उस समय के जिस विषय में जो श्रेष्ठ माने जाते थे उन सबका लेखन इन दो खण्डों में प्रकाशित हुआ था। इस कार्य से पूरे भारत के विद्वत समाज में संसद के परिचय को एक विशिष्ट स्थान प्राप्त हुआ।

संगीत, कला, नृत्य, दर्शन, साहित्य, चित्रकला सब विधाओं को संसद ने अपनाया था। भारत के प्रायः सभी नामी मनीषीगण संसद के सभागार को अपनी उपस्थिति से समृद्ध करते थे। उनकी कला कुशलता, उनकी वाणी, उनके उपदेश से संसद के सभ्यगण धन्य हुए थे। इन विशिष्ट व्यक्तियों को संसद के सभागार में बुलाने में कितना चिन्तन मनन करना पड़ता था, ये सभी समझते हैं।

संसद के दो प्रोग्राम, 'कथा समारोह' और "कुरु क्षेत्र से राजघाट" अभिनव प्रयास थे। कम से कम 5-6 महीने के प्रयास के बिना ऐसा प्रोग्राम करना

संभव नहीं था। संसद के अलावा भी सिम्प्लेक्स के कर्मी वृन्द इसमें काफी सहयोग दिये।

संसद, सभ्य गण की प्रतिभा एवं ज्ञान की परिधि बढ़ाने के लिए, संसद के पदाधिकारी कई गोष्ठियों का संचालन करते थे। अध्ययन गोष्ठी, विचार गोष्ठी, रंजन गोष्ठी आदि में संसद के सभ्य गण बड़े उत्साह से भाग लेते थे। कलकत्ता के हिंदी साहित्यिक और सांस्कृतिक जगत में संसद की सफलता, उनकी उपस्थिति और प्रयासों को प्रमाणित करती है।

उच्चांग संगीत के प्रति माधोदास जी की विशेष रुचि थी। वे स्वयं और उनके परिवार के कई लोग उच्चांग संगीत में रुचि रखते थे। संसद के मंच से भी शायद हमलोग उनके कंठ से संगीत सुने ऐसा याद आता है। आज भी संसद में उच्चांग संगीत शिक्षा की कक्षा जारी है। कुछ शिक्षार्थी संगीत की कक्षा में संगीत सीखने आते हैं।

'वैचारिकी' माधोदासजी पर यह अंक छाप कर सराहनीय काम कर रही है, इससे उनकी स्मृतियां सुरक्षित हो गई हैं। बंगला 'प्रवासी' और अंग्रेजी Modern Review बन्द होने के बाद इस 'वैचारिकी' पत्रिका के स्तर की शोधपरक पत्रिका पूरे भारतवर्ष में किसी भी भाषा में प्रकाशित हो रही है कि नहीं हमको ठीक से मालूम नहीं है, कम से कम हमारी नजर में नहीं आई है। श्री बाबूलालजी बहुत ही दक्षता के साथ इसका संपादन कर रहे हैं, परन्तु एक बात हमारे मन में आती है कि वैचारिकी केवल हिन्दी में प्रकाशित हो रही है, उसको यदि अंग्रेजी, हिन्दी दो भाषा में करा जा सके तब ये पूरे भारतवर्ष का रिसर्च बेस पत्रिका हो सकती है।

माधोदास जी की लिखी किताबें भारतीय दर्शन एवं भारतीय जीवन बोध के संदर्भ में लिखी गई किताबों में श्रेष्ठ स्थान में गिनी जा सकती हैं। हम भवानीपुर के एक समृद्ध परिवार के सदस्य हैं। बचपन से ही लाड चाव में हमारा लालन पोषण हुआ था। बड़े होने के बाद, कुछ सहृदय बन्धु मिले। लेक में सुबह Rowing कर, Ordinance club में Badminton, Table Tanis खेल, और दिन में दुकानदारी करके दिन बीत रहे थे। हठात् भारतीय संस्कृति संसद कब माथे में आ गया पता नहीं। अपना काम काज, खेल कूद के संग, संसद ने हमारे जीवन में एक स्थान पा लिया।

माधोदास जी कब और कैसे साहित्य, संगीत और दर्शन के जगत में हमको खींच लिए, मालूम ही नहीं पड़ा। माधोदास जी अब नहीं रहे। पर मैं अभी भी उनको निकट पाता हूँ। संसद जाने से पहले उनकी छवि हमारे मानस पर आ जाती है। संसद के हरेक प्रोग्राम में अब भी उनकी परोक्ष उपस्थिति स्पष्ट दिखाई देती।

(मूल बंगला से हिन्दी अनुवाद - महेशलोढ़ा)

118-ए, Ashutosh Mukherjee Road,
Kolkata-700025
मो.- 9432343197

माधोदासजी के प्रति प्रणति

डॉ. प्रतिभा अग्रवाल

सन् 1955 का साल कलकत्ता के हिन्दी भाषा-भाषी समाज की सांस्कृतिक गतिविधियों के विकास की दृष्टि से महत्वपूर्ण साल था। सन् 1947 में देश के सर्वांगीण विकास का बीज बोया जा चुका था। अभिनव भारती बाल मंदिर की स्थापना और उसके साथ ही अभिनव संस्कृति परिषद की गतिविधियों का सूत्रपात शुभ संकेत देनेवाली घटनाएं थी। इनके साथ ही सामाजिक सुधार तथा स्त्रियों की शिक्षा के प्रचार-प्रसार का व्रत लेकर प्रारंभ की गयी मारवाड़ी बालिका विद्यालय तथा तरुण संघ जैसी संस्थाओं ने भी बड़ी महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया। इसी शृंखला में सन् 1955 में स्थापित नाट्य दल अनामिका तथा सांस्कृतिक गतिविधियों के प्रचार-प्रसार की दृष्टि से कार्य करनेवाली संस्था भारतीय संस्कृति संसद का महत्वपूर्ण योगदान रहा। संसद की स्थापना में स्वर्गीय माधोदास जी मूंधड़ा का विशेष योगदान रहा। किसी भी संस्था की स्थापना तथा संचालन की दृष्टि से समानधर्मा कुछेक व्यक्तियों का एक साथ जुटना तथा काम करने तथा संस्था के संचालन तथा कार्यक्रमों के क्रियान्वयन के लिए एक उपयुक्त स्थान तथा अर्थ की आवश्यकता होती है। हमारे बुजुर्गवार सीतारामजी सेकसरिया कहा करते थे किसी भी संस्था का अपना भवन होना उस संस्था की नींव के मजबूत होने का एक बड़ा कारण होता है। उस जमाने में भारतीय संस्कृति संसद को कार्य करने के लिए 10 नम्बर चौरंगी रोड के एक तल्ले पर 4-5 हजार वर्ग फीट की अपनी प्रशस्त जगह के इस्तेमाल की सुविधा प्रदान करके माधोदास जी ने अहम भूमिका का निर्वाह किया था। गत 63 वर्षों से संसद की गतिविधियों का संचालन वहीं से हो रहा है और प्रायः होनेवाले कार्यक्रम यथा वक्तृताएं, गोष्ठियां, शास्त्रीय संगीत के कार्यक्रम आदि वहीं आयोजित होते हैं। संसद की अन्यान्य आवश्यकताओं की पूर्ति में भी माधोदासजी का बड़ा हाथ रहा, संसद के तत्वावधान में अब उस भूमिका का निर्वाह उनके सुपुत्र बिट्ठल दास मूंधड़ा कर रहे हैं।

मेरा कलकत्ता आना हुआ सन् 1945 में। हमलोगों की सांस्कृतिक गतिविधियों का प्रारम्भ हुआ अभिनव संस्कृति परिषद के तत्वावधान में, जिसका पूरा विकास हुआ सन् 1955 में अनामिका के रूप में। कालांतर में अनामिका ख्यात हुई नाट्य संस्था के रूप में

यद्यपि अन्यान्य कार्यक्रम भी होते रहते थे। कुछ ऐसे सदस्य भी थे जो दोनों (अनामिका और भा. सं. संसद) संस्थाओं से जुड़े हुए थे जिनमें विजय बर्मन-रविप्रभा बर्मन तथा हरिप्रसाद-कमला माहेश्वरी भी थे। उन्हींके कारण कभी-कभी मेरा संसद के कार्यक्रमों में भी जाना शुरू हुआ विशेषकर शास्त्रीय संगीत के। अनामिका में ये कार्यक्रम नहीं होते थे, हम दोनों की रुचि उसमें थी। शास्त्रीय संगीत में रुचि लेनेवाले लोग सीमित ही हैं अतः हमारा वहां स्वागत ही होता था। वहां पर माधोदासजी से परिचय हुआ। उनके सौम्य व्यक्तित्व ने आकर्षित किया, उनके प्रति अन्यान्य लोगों के आदर-भाव के प्रभाव-स्वरूप हमारे मन में भी उनके प्रति आदर का भाव पनपा। इसी प्रकार वर्षों निकल गये।

सन् 1969 में हमलोग आचार्य जगदीश चन्द्र बोस रोड वाले मकान में रहने के लिए आ गये जिसमें चार तल्ले पर हरिप्रसाद जी और नौ तल्ले पर कृष्णगोपालजी कंधारी (मकानमालिक) रहते थे। दोनों ही संसद के सदस्य थे। उनके कारण संसद में अधिक जाना शुरू हुआ। वैसी स्थिति में यही उचित लगा कि हम (पति-पत्नी) भी संसद के सदस्य बन जायें। और सन् 1970 के आसपास, हम भी संसद-परिवार के रसिक सदस्य बन गये, वहां आना-जाना बढा और अन्य लोगों से भी सम्बंध बना। माधोदासजी के घर पर होनेवाले आयोजनों में भी हम आमंत्रित होने लगे और निकटता पनपी। धीरे-धीरे साहित्य, संस्कृति, धर्म, दर्शन, आचार-व्यवहार के मानदंडों के विषय में चर्चा सुनने में आने लगी क्योंकि उनमें माधोदासजी की रुचि ही नहीं पैठ भी थी।

सन् 1979 में मेरे जीवनसाथी मदनजी अचानक चले गये पर उस कारण माधोदासजी से हमारे पारिवारिक सम्बंधों में कोई विशेष अंतर नहीं आया। उनके अभाव को हम सबने महसूस किया पर सम्बंधों में किसी प्रकार की शिथिलता नहीं आयी। सन् 1980-81 में माधोदासजी ने हरिबाबू को अपने साथ सपत्नीक दार्जिलिंग चलने के लिए आमंत्रित किया और हरिबाबू ने मुझे भी उसमें शामिल कर लिया। आठ-दस दिनों का वह यात्रा-सहवास आज भी याद है। हमें तो कुछ करना ही नहीं था। सारी व्यवस्था माधोदासजी के कर्मचारियों की, निगरानी माधोदासजी की पत्नी की। राजसी ठाट-बाट। **उस दौरान माधोदास जी को निकट से देखने जानने का अवसर मिला। रईसी तबियत, सुसंस्कृत मर्यादापूर्ण व्यवहार, भारतीय चिंतनधारा से परिचित और उसमें आस्था रखनेवाले जीवन-मूल्यों में विश्वास तथा उनके मंगलकारी प्रभावों के प्रति आश्वस्त माधोदास जी की बातें बराबर आकृष्ट करतीं। साथ ही यह भी समझ में आया कि धर्म, दर्शन, वेद-वेदांत आदि की चर्चा करनेवाला व्यक्ति**

नीरस ज्ञान बघारनेवाला व्यक्ति नहीं वरन् उसके मर्म को समझनेवाला एक सजग नागरिक है जो वसुधैव कुटुम्बकम् की कामना करता है और सर्व कल्याण की भावना से अनुप्रेरित नाना प्रकार की गतिविधियों में अपने को व्यस्त रखता है। यह भी समझ में आया कि यह आवश्यक नहीं कि ज्ञान की बातें करनेवाला व्यक्ति नीरस और बोर ही हो। माधोदास जी जितना रस लेकर गंभीर विषयों पर बातें करते थे उतना ही रस लेकर ताश भी खेलते थे और उसमें हो-हल्ला भी करते थे। मेरे लिए वे कुछ दिन अत्यंत सुखद और प्रेरणादायक रहे।

कालांतर में उन्होंने अपने अध्ययन एवम् अनुभव-प्रसूत ज्ञान को लिपिबद्ध करना शुरू किया जिसके फलस्वरूप उनकी तीन पुस्तकें सामने आयीं--रसो वै सः, भारतीय तत्व-चिंतन तथा सुखी जीवन। पुस्तकों के शीर्षक से ही उनमें प्रतिपाद्य विषयों की जानकारी हो जाती है। भारतीय तत्वचिंतन हमारी जीवन-दृष्टि तथा संस्कृति का मूल आधार है। **उसके ठोस धरातल पर खड़े होकर माधोदास जी ने भारतीय रस परम्परा का विवेचन किया है, जीवन में उसके महत्व का प्रतिपादन किया है, उसके महत्व को रेखांकित किया है।** उनका अंतिम ग्रंथ सुखी जीवन तो मुझे पहले दो ग्रंथों का निचोड़ लगता है जिसमें सुखाकांक्षी मनुष्य की तुष्टि और इष्टसिद्धि के लिए लेखक ने ऐसे सहज-सरल तरीकों को बतलाया है जिनकी साधना मनुष्य सहज ही कर सकता है और इस प्रकार अपना तथा अन्य सबका जीवन मंगलमय बना सकता है, सृष्टि के मूल इष्ट के साधन में सहायक हो सकता है। मुझे खेद है कि मुझे उनके संसर्ग में रहने का और अवसर नहीं मिला, उनके साथ काम करके कुछ सीखने का सुयोग नहीं हुआ। आज यह छोटा सा लेख लिखकर मैं उनके प्रति अपनी श्रद्धा व्यक्त करती हूं और उनकी स्मृति को अपनी प्रणति निवेदित करती हूँ।

शालीमार अपार्टमेण्ट, फ्लैट नं. 61, छठा तल, 42/बी शेक्सपीयर सरणी, कोलकाता-700017 मो.-9830060290

उनकी तीन पुस्तकें सामने आयीं--रसो वै सः, भारतीय तत्व-चिंतन तथा सुखी जीवन। पुस्तकों के शीर्षक से ही उनमें प्रतिपाद्य विषयों की जानकारी हो जाती है। भारतीय तत्वचिंतन हमारी जीवन-दृष्टि तथा संस्कृति का मूल आधार है।

श्री माधोदास जी मूंधड़ा

(कुछ बात है कि हस्ती मिटती नहीं हमारी)

काशीप्रसाद खेरिया

श्री माधोदास जी मूंधड़ा के बारे में अब सोचता हूँ तो लगता है उनकी सुवासित धूम्ररेखा मेरे चतुर्दिक आज भी वृत्ताकार घूमती हुई मुझे अपनी परिधि में बांधती है। आज MDM हमारे बीच नहीं हैं लेकिन उनके स्नेह-सिक्त स्वर की गूंज अब तक विद्यमान है। उनका गहन आत्मीयता में डूबा हुआ वाक्य 'खेरिया जी! आज क्या कर रहे हैं, मिल सकते हैं क्या' - अनायास मेरे मानस में उभर आता है और मैं उनके लिण्डसे स्ट्रीट ऑफिस में दोपहर पहुँच जाता हूँ और चर्चा होती है सिर्फ भारतीय संस्कृति संसद की।

यूं तो संसद का नाम एक अहिन्दी भाषी राज्य में साहित्य-कला एवं संगीत के साथ भारतीय मर्यादा के परिवेश में स्मरणीय हो गया था, फिर भी MDM सोचते थे कि कहीं हम भटक तो नहीं गए हैं, और फिर अपनी दूरदर्शिता की छाप मौन रूप में अंकित कर देते थे।

कहा जाता है कि गुणी व्यक्ति का सम्मान करने से ज्ञान की उपलब्धि होती है तभी तो संसद का यह सौभाग्य रहा कि विभिन्न अवसरों पर भारत के शीर्षस्थ कवियों-कलाकारों-इतिहासकारों-दार्शनिकों इत्यादि का पूरा सम्मान करने का श्रेय MDM को रहा और सदैव इसके निमित्त प्रोत्साहित करते रहे।

संसद की रजत जयन्ती श्री लक्ष्मीनिवास जी बिरला--श्री हरिप्रसाद जी माहेश्वरी-श्री सीताराम जी सेकसरिया एवं श्री माधोदासजी मूंधड़ा के तत्वावधान में मनी। संसद के चार दशक की पूर्ति पर संस्थापक सदस्यों के सम्मान में कार्यक्रम रहा--उपस्थित थे श्री विजयकुमार बर्मन। किसी शायर के ये शब्द उद्धृत करना चाहूंगा -

कोई मस्जिद-गुरुद्वारे न सिवाले होंगे
सिर्फ तू होगा और तेरे चाहने वाले होंगे।

अन्ततः मैं निःसंकोच कह सकता हूँ कि श्रेष्ठतम चिंतन तथा प्रस्तुति के जिस विशिष्ट लक्ष्य को लेकर संस्थापकों ने संसद की स्थापना की थी, आज इतने वर्षों के अन्तराल में भी सम्भवतः संसद उसी दिशा में कार्यरत है और भविष्य में भी ऐसी अपेक्षा है। प्रगति की यह यात्रा आगे भी अनन्त तक जारी रहे, प्रभु से यही प्रार्थना है।

5, नेशनल लाईब्रेरी एवेन्यू, कोलकाता -27, मो.-9830096088

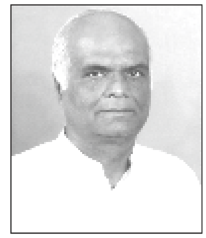

श्रद्धेय माधोदासजी

अरुण चूड़ीवाल

श्रद्धेय माधोदासजी की प्रथम झलक भारतीय संस्कृति संसद के प्रथम कथा समारोह 1965 में देखी थी। सातवें दशक में मानस चतु:शती एवं विशेषकर गाँधी शताब्दी के आयोजन में उनके सम्बन्ध में कुछ अधिक जानकारी मिली। बाऊजी (परमानन्दजी) एवं श्रद्धेय लक्ष्मीनिवासजी से माधोदासजी के सम्बन्ध में सुनता रहता था।

1972-73 में मैं संसद के कार्यक्रमों में सक्रिय हुआ, उसके पश्चात् तो माधोदासजी से निरंतर संपर्क में रहा। 1980 से 1999 तक प्राय: प्रत्येक सप्ताह से आचार्यजी (बाऊजी को माधोदासजी इसी नाम से संबोधित करते थे) के घर पर आते थे। वर्षों तक संसद के कार्य से दोपहर 1-2 बजे अपने लिण्डसे स्ट्रीट कार्यालय में बुलाकर संसद की गतिविधियों पर घंटों चर्चा करते थे।

वर्ष में तीन-चार बार संध्या के समय दिल्ली विमानपत्तन पर दिल्ली-कोलकाता के लिए चेकइन काउन्टर पर मिलना हो जाता था। उन दिनों मात्र इंडियन एयरलाइंस की विमान सेवा थी। माधोदासजी एग्जेक्यूटिव श्रेणी में यात्रा करते थे; उस श्रेणी का अतिरिक्त भाड़ा लगभग रु. 400/- था। चेकइन काउन्टर पर बोलते, "तुम मेरे साथ चलो"। उन दिनों रु. 400/- अतिरिक्त देना भारी लगता था पर उनकी आज्ञा का कभी उल्लंघन नहीं किया। उनके कार्यालय लिण्डसे स्ट्रीट में बैठकें होती जहां सांस्कृतिक कक्षाएं होती थी, वहीं वाणिज्यिक कक्षाएं भी होती थी। पहले वे अपनी दोनों अग्रणी कंपनियों का पूर्ण विवरण देते, फिर हमारे वस्त्र तथा कीटनाशक उद्योग का विवरण प्राप्त करते थे।

1990 के दशक में जब संसद में अधिक सक्रिय हो गया तब निरंतर प्रत्येक दिन प्रातः उनका फोन आता था। जिस आत्मीयता एवं अन्तरंगता से वे बाऊजी से बात करते थे उसी स्नेह से मुझसे भी चर्चा किया करते थे। उनसे बन गए प्रगाढ़ संबंध ही वह आधार था जिसके कारण हमारे परिवार में व्यावसायिक विभाजन में वे एक मध्यस्थ बने थे।

संगीत के प्रति मेरी कभी रुचि नहीं रही, अभी भी नहीं है। माधोदासजी ने मुझे अनेक बार कहा, "अरे मूर्ख! संगीत सुनेगा, तब समझ में आएगा," स्नेहिल 'मूर्ख' शब्द मेरे जीवन की धरोहर है।

1955 में स्थापित संसद को जीवन पर्यन्त उन्होंने "पुत्रीवत" पोषित किया; पर आजीवन वे कभी अध्यक्ष, उपाध्यक्ष, कर्म सचिव अथवा अर्थ सचिव नहीं बने। मात्र सूत्रधार के रूप में संसद का संचालन करते थे, इस रूप में वे कोलकाता की विशिष्ट सांस्कृतिक विभूतियों के पथ प्रदर्शक थे। संस्था किसी भी व्यक्ति से अधिक महत्वपूर्ण है, माधोदासजी ने इसे चरितार्थ किया था। 1981 में हरिप्रसादजी महेश्वरी का स्वर्गवास हुआ। हरिप्रसादजी माधोदासजी के अन्यतम मित्र थे। हरिप्रसादजी तत्कालीन कार्यकारिणी के परम आदरणीय एवं प्रिय सदस्य थे। कार्यकारिणी के वरिष्ठ सदस्यों (बाऊजी सहित) की इच्छा थी कि श्रीहरिप्रसादजी का तैल चित्र संसद कक्ष में लगाया जाय। माधोदासजी ने बाऊजी को कहा, "परमानन्दजी! आज हरि बाबू का चित्र लगाएंगे तो आगामी 20-30 वर्षों में संसद की दीवार मात्र चित्र दीर्घा बन कर रह जाएगी। कौन किसके चित्र का विरोध कर सकेगा!" इस पर तत्कालीन कार्यकारिणी एवं बाऊजी को दुःख तो हुआ था पर आज यही दृष्टि संसद की गरिमा का आधार है, अर्थात संस्कृति के चित्र, व्यक्तियों के नहीं! यह उच्च परंपरा बहुत ही कम संस्थाओं में देखने को मिलती है।

साहित्य, दर्शन, अध्यात्म, संगीत, नृत्य, चित्रकला, चिंतन, अभिव्यक्ति कौशल, षटरसास्वादन - संसद की सभी विधाओं पर माधोदासजी की सूक्ष्म दृष्टि रहती थी। प्रत्येक की पूर्ण गहराई में स्वयं जाते थे एवं अपने सहयोगियों को इसके लिए प्रेरित करते थे, प्रोत्साहित करते थे।

गत वर्षों से मेरा संसद से संपर्क छूट गया है, पर माधोदासजी एवं उनकी "पुत्री" (भा. सं. संसद) की स्मृतियां अमिट हैं।

मेरे इन सांस्कृतिक गुरु को शत् शत् नमन!

'मण्डावा शिखर' 151, शरत बोस रोड,
कोलकाता-700026, मो. 91-33-2465-8472
Email : arun@gitapath.com

साहित्य, दर्शन, अध्यात्म, संगीत, नृत्य, चित्रकला, चिंतन, अभिव्यक्ति कौशल, षटरसास्वादन - संसद की सभी विधाओं पर माधोदासजी की सूक्ष्म दृष्टि रहती थी। प्रत्येक की पूर्ण गहराई में स्वयं जाते थे एवं अपने सहयोगियों को इसके लिए प्रेरित करते थे, प्रोत्साहित करते थे।

आदरणीय माधोदासजी : कुछ संस्मरण

के.एल. बैद

सिम्पलेक्स इंफ्रास्ट्रक्चर्स लिमिटेड में काम करते हुए स्वर्गीय माधोदासजी से मेरा संपर्क लगभग 12 वर्ष का रहा। उनके संपर्क में आए हर व्यक्ति के पास उनके साथ बिताए पलों के संस्मरणों का खजाना भरा होगा, परन्तु कुछ विलक्षण संस्मरण जो मुझे अद्‌भुत लगे वो यहाँ प्रस्तुत कर रहा हूँ।

उनकी एक आदत थी कि किसी को अपने कक्ष में बुलाना होता था तो वह चपरासी से कहते, "उन्हें मेरा सलाम देना" किसी को बुलावा भेजने का ऐसा अद्‌भुत तरीका सिर्फ ऐसे व्यक्ति के पास ही हो सकता है जो दूसरे को मान-सम्मान देना जानता हो, फिर चाहे वो व्यक्ति किसी भी ओहदे या पद पर विराजमान हो।

दूसरी बात उनकी समय के प्रति पाबन्दी के बारे में है। उन्होंने अगर किसी को मिलने का समय निर्धारित कर दिया तो उस समय से पहले का कार्य समाप्त कर उस व्यक्ति को ठीक उसी समय मिलने का संदेश भेज देते थे। किन्तु अगर किसी कारणवश वो दिए गए समय में उस व्यक्ति से मिल पाने में असक्षम होते तो उस व्यक्ति को क्षमा याचना सहित पूर्व सूचना देकर समय परिवर्तन का आग्रह करते थे।

उतार-चढाव जीवन का लक्षण है। ठीक उसी प्रकार व्यवसाय में भी उतार-चढाव प्राकृतिक हैं। ऐसा ही एक समय हमारी व्यावसायिक संस्था "सिम्पलेक्स इंफ्रास्ट्रक्चर्स लिमिटेड" की दिल्ली शाखा में आया था। उस समय कर्मचारियों को तनख्वाह देने तक की वित्तीय व्यवस्था नहीं थी। नौबत कर्मचारियों को नौकरी से निकालने तक की आ गई थी। उस समय उन्होंने कहा कि जिन लोगों के कारण आज हमारी कंपनी ने इतनी उन्नति की है उन्हें हम छोड़ने की सोच भी कैसे सकते हैं और उन्होंने फिर उनकी तनख्वाह के लिए अपनी तरफ से वित्तीय व्यवस्था उपलब्ध करवाई। उसके बाद कंपनी दिन-दूनी, रात-चौगुनी तरक्की करने लगी। कर्मचारियों के प्रति उनकी इसी सोच का नतीजा है कि उस समय के कर्मचारी कंपनी में पूर्ण वफादारी से कार्यरत रहे।

एक और बात जो उनके बारे में उल्लेखनीय है वो है उनकी स्मरण शक्ति। उनको किसी भी विषय के बारे में सूचना देने से पहले हमें कई बार सोचना पड़ता था क्योंकि

भविष्य में उस सूचना में कोई भी बदलाव कर दिया तो वह टोक देते थे तथा कहते थे कि उस समय तो मुझे अमुक सूचना दी गई थी। कहने का तात्पर्य यह है कि कोई भी निर्णय लेने से पहले हमें कई बार सोचना पड़ता था। इसी कारण आज हम इतने सक्षम हो पाए हैं कि हमारा कार्य बहुधा त्रुटि रहित रहता है।

स्वर्गीय माधोदास जी मूंधड़ा के बारे में लिखने बैठूं तो एक पुस्तक की रचना हो जाएगी। परन्तु मेरी नजर में उपरोक्त कुछ गुण भी उनके जीवन से सीख लें तो हमारी कार्य शैली और जीवन दोनों संवर जायेंगे।

Email :
k.baid@simplexinfra.com>tome

"वैचारिकी" पत्रिका के स्वामित्व आदि की घोषणा
(प्रपत्र 4 - नियम 8)

1. प्रकाशन का स्थान	:	भारतीय विद्या मंदिर 12/1 नेली सेनगुप्ता सरणी, कोलकाता-700087
2. प्रकाशन की आवृत्ति	:	द्वैमासिक
3. मुद्रक - प्रकाशक	:	नाम - शंकरलाल सोमानी, राष्ट्रीयता - भारतीय
	:	पता - सचिव, भारतीय विद्या मंदिर 12/1 नेली सेनगुप्ता सरणी, कोलकाता-700087
4. संपादक	:	नाम - डॉ. बाबूलाल शर्मा, राष्ट्रीयता -भारतीय
5. उन व्यक्तियों, संस्थाओं आदि के नाम जो पत्र के स्वामी और साझेदार हैं अथवा कुल पूंजी के एक प्रतिशत से अधिक के अंशधारक हैं।	:	भारतीय विद्या मंदिर, कोलकाता

मैं शंकरलाल सोमानी एतद् द्वारा घोषित करता हूँ कि ऊपर दिया गया विवरण मेरी जानकारी व विश्वास के अनुसार सही है।

ह. शंकरलाल सोमानी
सचिव - भारतीय विद्या मंदिर
12/1 नेली सेनगुप्ता सरणी,
कोलकाता-700087

31 मार्च 2021

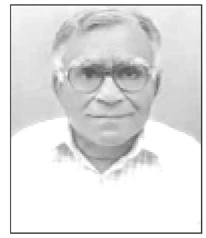

मेरे पितातुल्य : माधोदास जी मूँधड़ा

विजय कुमार दम्माणी

माधोदासजी से मेरी पहली मुलाकात सन् 1969-70 में हुई थी। मैंने C.A जरूर किया था पर अकोला (महाराष्ट्र) का होने के कारण कोलकाता के महानगरीय वातावरण में जरा सहमा हुआ सा था और अनुभव एवम् विश्वास की बहुत बड़ी कमी थी। मेरी छिपी हुई प्रतिभा को उन्होंने परखा तथा मुझे अपने सान्निध्य में ले लिया और निरन्तर मुझे प्रगति-मार्ग पर प्रशस्त करते गये।

एक सफल उद्योगपति के साथ-साथ कला-साहित्य और समाज सेवा के प्रति उनका रुझान उनके बहुआयामी व्यक्तित्व को दर्शाता है। वस्तुतः उनका पूरा परिवार ही साहित्य और कला के प्रति समर्पित है।

उनके व्यक्तित्व की तरफ नजर डालें तो उनकी उपस्थिति ही अपने आप में पूर्ण थी। गौर-वर्ण, लम्बा कद और हाथों को पीछे बाँधकर चलता देखकर उनका व्यक्तित्व एक युग-नायक की तरह मुखरित होता था और वास्तव में युग-नायक थे भी।

एक तरफ व्यापार को दिनों-दिन उन्नत बनाया दूसरी ओर समाज और साहित्य से भी उतने ही संलग्न थे।

हम सभी जानते हैं कि 'भारतीय संस्कृति संसद' जो विगत 63 वर्षों से कोलकाता में साहित्य और संगीत की एक अग्रणी धरोहर है, जिसे सशक्त बनाने में उनका बहुत बड़ा योगदान रहा। **ऐसे थे हमारे माधोदास जी...........**

कर्म-साधक, दूरद्रष्टा
सहजयोगी मधुरवक्ता।
ज्ञान-साधक, जोशवर्धक
कार्यशैली में विविधता।
नैतिक मूल्यों के संवाहक
संस्कारों के स्थापन कर्त्ता।

एक संस्मरण जो कि उनकी सादगी का परिचायक है, मुझे आज तक याद है। एक बार इंग्लैंड से लौटते समय उनका मेरे पास फोन आया कि मैं मध्यरात्रि के आसपास बम्बई

पहुँचूँगा और दूसरे दिन शाम को कलकत्ता जाऊँगा। मेरे मुंह से आनायास निकल गया कि किस होटेल में आपकी बुकिंग करवाऊँ? उनका उत्तर सुनकर मैं आवाक् रह गया कि होटेल में बुकिंग करवाने की क्या आवश्यकता है, मैं तो तेरे ही घर पर रुकूँगा और वह मुझे ज्यादा अच्छा लगेगा।

मुम्बई में हमारा 650 स्क्वेयर फुट का फ्लैट कहीं से भी उनके लायक नहीं था। यह था उनकी आत्मीयता और सरलता का परिचायक। आप, भोजाईजी (परिवार में माधोदासजी को भाईजी और उनकी पत्नी श्रीमती कृष्णाजी को भोजाईजी कहते थे) के साथ दिन भर हमारे ही घर पर रहे और घरवालों के साथ सहजता से घुले-मिले। भोजाईजी को मेरी माँ का साथ बहुत अच्छा लगा क्योंकि दोनों ही एकमत (पुष्टिमार्गीय) जो थी। मेरे जैसे साधारण व्यक्ति के लिये उनका घर पर रहना सुखद अनुभव था।

हमारे घर से उनका घरेलू सम्बन्ध ही रहा। मेरे काकाजी (गोपाल दास जी दम्माणी) भी उन्हीं की कंपनी में डायरेक्टर के रूप में कार्यरत थे। उनको तो उन्होंने एक छोटे भाई तथा अंतरंग मित्र की तरह रक्खा। गोपाल दासजी उनके हमउम्र तो नहीं थे पर हर जगह घूमने-फिरने में उनको हमेशा साथ लेकर जाते थे। वैसे **वे अपने प्रतिष्ठान में कार्य करने वाले हर आदमी के सुख-दुःख में उसके साथ रहते थे। अपने स्टाफ को साथ लेकर चलना उनके विलक्षण स्वभाव का परिचायक था।**

मेरे लिये तो वे पितातुल्य रहे। मैंने जिन्दगी में जो कुछ सीखा उसमें सबसे बड़ा योगदान उन्हीं का रहा। इतने वर्ष गुजर गये पर आज भी उनकी याद धूमिल नहीं हुई है। **उनके व्यक्तित्व का पूर्ण सार निम्नोक्त पंक्तियों में समाहित है।**

सुदृढ़ धातुमय उत्पलशरीर
अन्तःस्थल में निर्मल नीर
अटल अचल तू धीर गंभीर
समशीतोष्ण शांति सुविचार
ओ गौरव गिरि उच्च उदार - ('साकेत' मैथिलीशरण गुप्त)

मल्ल कंस्ट्रक्शन
204/205 सारिका कार्पोरेट,
पांडे लेआउट
(नागपुर)-400024

Ugccare.unipune.ac.in

UGC-Cell for Journal Analysis

UGC-CARE List

You searched for 'Indian Languages' Total Journals : 284 *(SL. No. Alphabetically)* Search वैचारिकी

Sl.No.	Journal Title	Publisher	ISSN	E-ISSN	Action
157	वैचारिकी (Print only)	Bharatiya Vidya Mandir	0975-6531	NA	View
You searched for 'V' Total Journals : 26					
4	Vaichariki (print only)	Bharatiya Vidya Mandir	0975-6531	NA	View

Copyright © 2021 Savitribai Phule Pune University. All rights reserved. | Disclaimer

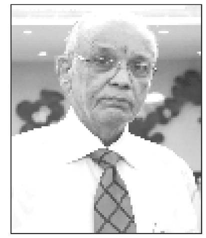

एक अद्वितीय व्यक्तित्व : स्व. माधोदासजी मूंधड़ा

राम मोहन लाखोटिया

उन्हें स्मरण करते ही एक ऐसे महा-मानव का चित्र हृदय में उतरने लगता है, जो स्वयं में भारतीय संस्कृति के आधार ग्रंथों में वर्णित कर्मयोग, ज्ञानयोग एवं भक्तियोग की त्रिधारा को अपने जीवन में उपलब्धिपूर्ण रूप से सफलता के साथ प्रायोजित करने में सदा समर्पित रहे। मेरा उनसे पहला परिचय सन् 1962 के उत्तरार्ध में हुआ था। मेरा विवाह 19 मई सन् 1962 में श्री हनुमानदासजी--श्रीमती श्रीकुंवर दमानी की बड़ी बेटी पुष्पा से हुआ। मेरे ससुरजी के बड़े भाई श्री गोकुलदासजी दमानी श्री मूंधड़ाजी के अंतरंग साथी-मित्र-भाई जैसे थे। श्री मूंधड़ाजी ने अपने कुछ अनन्य मित्रों के साथ अपूर्व उद्देश्यों की पूर्ति हेतु सन् 1955 में भारतीय संस्कृति संसद जैसी अनूठी संस्था की स्थापना कर ली थी। मेरा बचपन से ही साहित्य-संस्कृति-कला तथा सामाजिक कार्यों में उत्साह बना रहता था और इसी के चलते मैं अपनी युवावस्था में अपने कुछ मित्रों के माध्यम से, सम्मान के साथ उभरती संस्था भारतीय संस्कृति संसद के कुछ कार्यक्रमों में बिना सदस्यता के दर्शक रूप से भाग लेने लग गया था।

मेरी सासूमाँ श्रीमती श्रीकुंवरजी दमानी उस वक्त तक माहेश्वरी सभा, कोलकाता की महिला समिति की एक सक्रिय और समर्थ कार्यकर्त्री के रूप में उभर रही थी। उस समय मैं कोठारी ग्रुप में काम करता था, जहाँ अधिकांश काम करने वाले माहेश्वरी परिवारों से ही थे इसी से माहेश्वरी सभा की सूचनाएं नित्य ही मिल जाती थी। उसी समय समझ में आया कि श्री मूंधड़ाजी बीकानेर के ही नहीं, पूरे भारत के माहेश्वरी संगठनों से अत्यंत निकटता से जुड़े हुए थे और माहेश्वरी सभा, कोलकाता की तो नित्य-प्रति सूचनाओं की उन्हें जानकारी रहती थी। मेरी सासूमाँ पर उनका बड़े भाई जैसा स्नेह था और शायद इसी कारण से मुझे भी उन्होंने उसी स्नेह-आदर में लपेट लिया। भारतीय संस्कृति संसद के हर कार्यक्रम में मेरी उपस्थिति का वे आकलन करते रहे। इस कारण से मेरा भी संस्था से निकट सम्बन्ध बढ़ता गया।

संस्था के प्रथम सभापति डॉ. श्री कालीदासजी नाग मेरे पड़ोसी थे और उनके दोनों

दामाद प्रोफेसर पी. लाल और प्रोफेसर विश्वनाथन, सेंट जेवियर्स कॉलेज में बी.कॉम. की पढ़ाई के समय (सन् 1958-1960 में) मेरे अध्यापक रहे थे। बाद में कई वर्ष सभापति रहे श्री सीतारामजी सेकसरिया से मेरा पारिवारिक सम्बन्ध दादा-पौत्र जैसा रहा। श्री मूंधड़ाजी के अद्‌वितीय गुणवान मित्रों में सर्वश्री रामनिवासजी ढंढारिया, लक्ष्मीनिवासजी झुनझुनवाला, हरीप्रसादजी माहेश्वरी, रमणलालजी बिन्नानी, परमानंदजी चूड़ीवाल, जयकिशनदासजी सादानी, कृष्णगोपालजी कंधारी, नरनारायणजी हरलालका, विजयकुमारजी बर्मन एवं श्रीमती रविप्रभा बर्मन आदि परम स्नेही व्यक्तियों ने मुझे भारतीय संस्कृति-साहित्य-कलाओं के प्रति अपनी निष्ठा को सशक्त करने का बल दिया। संसद में आयोजित होने वाली अध्ययन गोष्ठी में मैं प्रायः भाग लेता था, जहाँ श्री मूंधड़ाजी के श्रद्धेय पं. अक्षयचंद्रजी शर्मा से मेरा परिचय बढ़ा। बाद में उनके साथ उनकी एक और शिष्या श्रीमती धर्मशीलाजी भुवालका की एक पुस्तक के संपादन-प्रकाशन में भी मुझे भाग लेने का अवसर मिला। इस प्रकार 'संसद' मेरे जीवन का अंग बनती गई। इस सबका श्रेय मैं श्री मूंधड़ाजी के मेरे प्रति स्नेह-भाव को देता हूँ। आज भी यह स्नेह उनके पूरे परिवार से मुझे मिलता है, जिसके आज अत्यंत योग्य, गुणवान, विद्वान, उदार-हृदय, भारतीय संस्कृति के साथ विश्व के विभिन्न दर्शन-शास्त्रों के ज्ञाता एवं माहेश्वरी गौरव से सम्मानित पुत्र उद्योगपति डॉ. बिट्ठलदासजी मूंधड़ा मुखिया हैं। जीवन के अनेक प्रसंगों में श्री माधोदासजी से मेरी व्यक्तिगत बातें होती थी। उनका आदेश था कि मैं अपने लेखन कर्म में, पठन-पाठन में और सामाजिक कार्यों में लगा रहूं, भारतीय संस्कृति में निष्ठा बनाये रखने के लिए संबंधित ग्रंथों का अध्ययन करता रहूं।

श्री मूंधड़ाजी केवल एक सामाजिक विकास-कर्ता ही नहीं, एक कुशल उद्योगपति होने के साथ अत्यंत ज्ञानवान प्रबंधक भी थे। **वे कहा करते थे कि कुशल और सफल प्रबंधन के लिए कर्मचारियों और कार्यकर्ताओं की योग्यता की सही पहचान होनी चाहिए, उनके अनुकूल कार्य-व्यवस्था होनी चाहिए, उन्हें उनके विकास के मार्ग का विश्वास होना चाहिए तथा उनके ज्ञान-अनुभव के अनुसार सही दिशा में उनकी शिक्षा का प्रबंध होना चाहिए, तभी व्यापार-कार्य व संगठन को सफलता मिल सकेगी।** स्व. श्री माधोदासजी मूंधड़ा द्वारा स्वयं के अनुभव किये जीवन-दर्शन पर लिखित पुस्तकें इसका जीवंत प्रमाण हैं।

यह कहना एक दम सही होगा कि स्व. श्री माधोदासजी मूंधड़ा स्वयं में एक विशाल संस्था थे। उसी मार्ग पर अग्रसर कर डॉ. बिट्ठलदासजी मूंधड़ा ने उनके द्वारा स्थापित उद्योग-प्रतिष्ठान सिम्पलेक्स ग्रुप को विश्व में एक अग्रणी स्थान दिलाने में सफलता प्राप्त की है। उन्हीं के पदचिह्नों पर चलते हुए डॉ. बिट्ठलदासजी मूंधड़ा भी समाज के गौरव ही नहीं, स्वयं में एक सशक्त संस्था हैं। मैं स्व. माधोदासजी के पूरे परिवार को अपनी श्रद्धा और सम्मान अर्पित करता हूँ।

लाखोटिया निकेतन, C/498, लेक गार्डेन्स, कोलकाता-700045
मो.-9830033478

बड़ा दिल रखते थे पूज्य भाईजी

मनमोहन बागड़ी

पूज्य भाईजी (माधोदासजी के प्रति पारिवारिक संबोधन) मेरे लिये न केवल प्रेरक थे। वे व्यक्तिगत सम्बन्धों को कितनी अहमियत देते थे, जिसकी कल्पना नहीं की जा सकती। मेरे पुत्र संजीव की शादी 14 फरवरी 1985 को सम्पन्न होने वाली थी। तय तारीख के कुछ ही दिन पूर्व मेरी सास (माधोदासजी के अग्रज स्व. गोविन्ददासजी की पत्नी) का स्वर्गवास हो गया। परिवार में सबसे बड़े होने के कारण उनका इस शादी में शरीक होना सम्भव नहीं था। बीकानेरी परम्परा के अनुसार उन्होंने निश्चय किया कि वे जा नहीं सकेंगे वरन् वे परिवार के किसी अन्य सदस्य को प्रतिनिधि स्वरूप भेज देंगे जो रीति रिवाजों को निभा देगा। हमारा सारा उत्साह खत्म हो गया कि यदि वे नहीं आयेंगे, तो बाकी लोग भी नहीं आयेंगे। मैंने अपनी सारी भावनाओं को श्री दामोदरदासजी डागा को बताया। दामोदरदासजी उनके बहुत करीबी थे। उन्होंने उन्हें फोन किया और कहा कि जाने वाला तो चला गया, कालान्तर में लोग भूल जावेंगे, परन्तु उषा (मेरी पत्नी) को तो जिन्दगी भर यह मलाल रहेगा कि उसके पुत्र के विवाह में उसके पीहर के सदस्य नहीं आ सके। खैर यह बात उन्हें जँच गई और उन्होंने आने की हामी भर दी। फिर क्या था, जब भाईजी ही जा रहे हैं, तो बाकी सब लोगों ने भी अपना प्रोग्राम बना लिया। इस तरह सभी लोग शादी में शरीक हुए और हम लोगों का उत्साह दोगुना हो गया। बड़ा दिल रखते थे पूज्य भाईजी।

कमल भवन, 5 जे.बी. नगर,
अंधेरी (पू), मुम्बई-400059,
मो.-09324587952

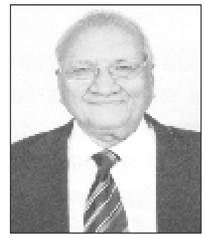

स्व. माधोदासजी की स्मृति को हार्दिक नमन

जोधराज लड्ढा

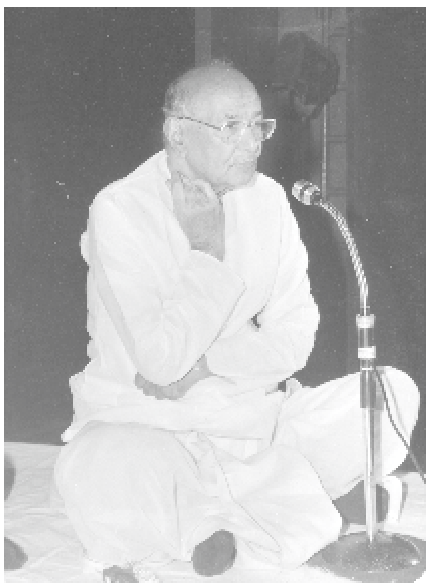

विभिन्न भूमिकाएं निभाने वाले महान समाजसेवी स्वर्गीय श्री माधोदासजी मुंधड़ा अपने आप में एक संस्था थे। उनकी विशेषताओं का व्याख्यान सीमित शब्दों में कर पाना असंभव है। वे उदारमना दानदाता, समाज सेवी, चिंतक, लेखक, सफल उद्योगपति, विचारशील, पांडित्यपूर्ण व्यापक दिमाग, परोपकारी, दयालु, आध्यात्मिक व्यक्तित्व के धनी, परिश्रमी, दूरदर्शी उद्योगपति होने के साथ-साथ विनम्र सामाजिक कार्यकर्त्ता एवं साहित्य सेवी थे। इनका समाज सेवा का फलक बहुत ही विस्तीर्ण था। आप धर्म, दर्शन, शिक्षा के प्रचार-प्रसार, स्वास्थ्य सेवा, महिला कल्याण, ग्रामोत्थान, संस्कृति के संरक्षण एवं प्रतिभाओं को अवसर देने जैसे महत्वपूर्ण कार्यों में रत थे। इनके अलावा कलाकारों, लेखकों, पत्रकारों एवं बुद्धिजीवियों को भी समय-समय पर सम्मानित करते थे।

मेरा एवं मेरे परिवार का श्री माधोदासजी एवं उनके परिवार के साथ पिछले कई दशक से काफी करीबी सम्पर्क रहा है।

श्री माधोदासजी न सिर्फ एक सफल उद्योगपति, एक सफल व्यवसायी, एक सक्रिय अधिवक्ता और समाज कल्याण कै चैम्पियन के रूप में जाने जाते थे, अपितु वे संगीत कला के प्रचारक भी थे, फिलॉसफी में उनकी गहरी रुचि थी और वे एक गहरे लेखक थे। उन्होंने कोलकाता में भारतीय संस्कृति संसद की स्थापना की, जो भारतीय संस्कृति,

परम्पराओं, इतिहास और विरासत के संरक्षण, संवर्द्धन और विस्तार के लिए काम करने वाले प्रमुख संगठनों में से एक है। उन्होंने अपने गृहनगर बीकानेर में अपनी माँ की याद में श्रीमती सूरजदेवी मुंधड़ा सैटेलाइट अस्पताल बनाया, जहाँ अत्याधुनिक बुनियादी ढांचा है और जो लोगों की सेवा और मानवता की भलाई के लिए प्रतिबद्ध है। श्री चैरिटी ट्रस्ट, कोलकाता के बैनर तले वे बीकानेर में श्री गिरधर दास मुंधड़ा शिक्षण संस्थान के संस्थापक बने, जिसके अंतर्गत गिरधर दास मुंधड़ा रात्रि विद्यालय और गिरधर दास मुंधड़ा बाल भारती माध्यमिक विद्यालय के साथ-साथ भारतीय विद्या मंदिर शोध प्रतिष्ठान है जो राजस्थान के प्रमुख शोध संस्थानों में एक है।

वे हमेशा समाज कल्याण और उत्थान, शिक्षा, साहित्य, संस्कृति, धर्म और दर्शन के लिए काम करने वाले किसी भी संगठन के प्रति अपनी सहायता के साथ आगे आते रहे। वे सामाजिक, नैतिक और आध्यात्मिक उत्थान के लिए किसी भी पहल में हमेशा उत्सुक रहते थे।

निर्माण उद्योग और अन्य व्यवसायों के लिए उनके समर्पण एवं अनपेक्षित योगदानों के लिए अग्रणी प्रयासों के आधार पर उन्हें विश्व में भारत के बड़े उद्यमियों के रूप में स्वीकार किया गया। उनके अथक प्रयासों की वजह से अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर अपनी पहचान रखने वाली निर्माण क्षेत्र की पब्लिक लिमिटेड कम्पनी सिम्पलेक्स इंफ्रास्ट्रक्चर्स लिमिटेड का काम देश और दुनिया के प्रमुख शहरों में फैला, कम्पनी ने देश के आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया। वे हमेशा निःस्वार्थता से पूरे देश में विभिन्न सामाजिक और सांस्कृतिक पहलों का पूरे दिल से समर्थन करते थे इसी से उन्हें सामाजिक कल्याण गतिविधियों के प्रमुख संरक्षक के रूप में जाना जाता था।

आज श्री माधोदासजी मुंधड़ा भले ही हमारे बीच नहीं हैं, लेकिन उनके द्वारा बनाए गए विभिन्न संस्थानों के रूप में उनकी विरासत एवं उनके द्वारा किए गए सामाजिक कार्यों की स्मृति हमारे दिलों में सदैव जीवित रहेगी। उन्होंने अपने जीवनकाल में जो सामाजिक सेवा एवं पोरपकारी कार्य किए हैं, वे सदैव अविस्मरणीय रहेंगे।

ऐसे महापुरुष के चरणों में सादर प्रणाम।

(निवर्तमान सभापति-
अ.भा. माहेश्वरी महासभा)
46सी, जवाहरलाल नेहरू रोड,
कोलकाता-700071, मो. 9830071200
Email : jrladdha@jrladdha.inom

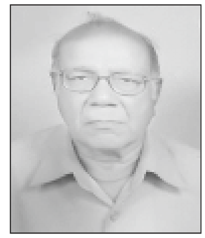

मेरे मार्गदर्शक माधोदासजी

घनश्याम दास दम्मानी

माधोदासजी से हमारा पारिवारिक संबंध था। इसलिए 1966-67 से मैं उन्हें जानता हूँ। सामाजिक रूप में उनसे संबंध 1969-70 में हुए, वे उस समय माहेश्वरी सभा के सभापति थे। उनसे हमारे व्यापारिक संबंध भी रहे। हम इनकी सिम्पलेक्स कम्पनी में माल सप्लाई करते थे। मेरे व्यापारिक संबंध बहुत अच्छे थे। मेरा छोटा भाई इनके परिवार का जमाई है। जिससे उनसे बहुत अच्छे संबंध हैं। भाई का नाम मनमोहन दम्मानी है। सामाजिक कार्यों के संबंध 1970 से 1995-96 तक रहे। हमारे 25 वर्ष ये सम्बन्ध रहने का कारण था माहेश्वरी सभा कलकत्ता। वे माहेश्वरी सभा कलकत्ता के एक आदरणीय सदस्य थे।

माधोदास जी 1969-70 में माहेश्वरी सभा के सभापति थे। उसी समय मैं माहेश्वरी सभा की कार्यकारिणी का सदस्य बना था। उसके बाद 71-72 में मैं सभा का मंत्री बना, उस समय वे माहेश्वरी भवन बोर्ड ट्रस्ट के मंत्री थे। तब मेरा उनके साथ काम करना शुरू हुआ। मैं भी माहेश्वरी भवन बोर्ड का 1980 में ट्रस्टी बन गया। तब तक माधोदासजी मंत्री थे। उनके साथ मेरी जो बातें होती थी वे माहेश्वरी सभा कोलकाता को लेकर होती थी क्योंकि दोनों एक्टिव सदस्य थे। सभा में क्या हो रहा, नहीं हो रहा उसका सारा आदान-प्रदान वे मुझसे करते थे। एक बार उन्होंने कहा कि अब मैं सभा का दायित्व छोड़ने की सोच रहा हूँ, यहाँ पर आज-कल झंझट-झमेले बहुत हो रहे हैं। यह 1995-96 के आस-पास की बात है। वे नये जेनरेशन के द्वारा क्रियेट किये हुए झमेलों से दूर रहना चाहते थे। तब मैंने उनसे एक बात कही, भाईजी थारा घर में अगर इस तरह का झमेला हो तो क्या आप अपना घर छोड़ देते? तब वे निरुत्तर हो गये थे। पर आखिर में उन्होंने एक बात ही कही, मैं अब नहीं

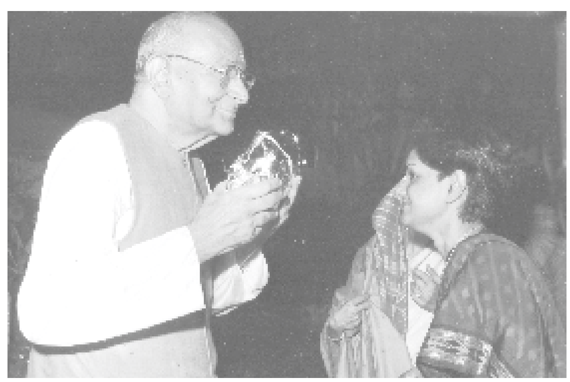

रहना चाहता। 1987 में मैं ट्रस्ट का मंत्री बन गया था जो अभी तक हूँ। इसलिए 1997-98 में मुझे उनकी बात माननी पड़ी। यह पद उन्होंने ही मुझे दिया और मार्गदर्शन भी उनका ही रहा और समय-समय पर मैं उनके पास जाता था। जो कोई भी कार्य होता था तो उनको मैं बता देता था कि यह कार्य ऐसा हो रहा, ऐसे नहीं हो पा रहा है तो वे बहुत अच्छा मार्गदर्शन करते थे। ट्रस्ट का संचालन मैंने उन्हीं से सीखा। 1987 से अभी तक ट्रस्ट के मंत्री पद पर उन्हीं के दिखाये मार्ग से चल रहा हूँ। मैं माहेश्वरी सभा ट्रस्ट के मंत्री पद का दायित्व सालों से निभा रहा हूँ।

माधोदासजी का एक ऐसा सुलझा हुआ व्यक्तित्व था जो समाज का मार्गदर्शन करने में संपूर्ण सक्षम था। उनकी सोच और उनका तरीका समाज के लिए बहुत ही उपयोगी थे। पर वे किसी झमेले में फंसना पसंद नहीं करते थे। उनका समाज के प्रति अति प्रेम था। उसके कार्यों में उनकी विशेष रुचि भी। इसी कारण सामाजिक कार्यों में उनसे बड़े भाई की तरह सलाह लेना, उनका मार्गदर्शन लेना मेरे लिए उपयोगी ही रहे।

230ए, आचार्य जगदीश चन्द्र बोस रोड,
कोलकाता-700020, मो. 9339304660

मेरे प्रेरक पूज्य माधोदासजी

संसद के कार्यक्रमों में मैं पिताजी के साथ 1966 से बराबर जाता रहा। प्रायः सभी कार्यक्रमों में मैं पूज्य भाईजी (माधोदासजी के प्रति पारिवारिक संबोधन) को सभागार में सबसे पीछे वाले स्थान पर बैठे देखता। उनके सौम्य और प्रभावशाली व्यक्तित्व से मैं बड़ा प्रभावित होता। मुझे देख कर वे भी मुस्कुरा दिया करते थे।

मेरे सहपाठी मित्र अशोक माहेश्वरी का एक दिन अचानक फोन आया कि भाईजी तुमसे मिलना चाहते हैं। इस तरह भाईजी से मेरा संपर्क सन 1987 से हुआ। मैं अशोक के साथ उनके ऑफिस गया। उन्होंने कहा कि संसद के कार्यक्रमों में मैंने तुम्हें कई बार देखा है, लगता है तुम कार्यक्रमों में रुचि लेते हो। फिर बड़ी ही आत्मीयता सहित उनका आदेश था कि तुम्हें संसद के कुछ कार्यक्रमों के संयोजन में सक्रिय रूप से जुड़ना चाहिए और साथ ही साथ उनका स्नेह भरा आश्वासन था कि हमेशा मुझको संभालते रहेंगे। फिर समय-समय पर संसद के कार्यक्रमों की चर्चा हेतु उनसे मिलना होता रहता था। उनके अपार स्नेह से मुझे बहुत सम्बल मिला। संसद के कार्यक्रमों में भाग लेकर मैंने बहुत कुछ सीखा। पूज्य भाईजी ने समाज की अनेक शैक्षणिक एवं सामाजिक संस्थाओं से जुड़ कर, समाज सेवा का गुरुतर भार वहन किया। साथ-साथ अपने कार्य-कौशल से, समाज में उद्यमी व्यावसायिक प्रतिष्ठा अर्जित की।

उन्हें मेरा शत शत प्रणाम।

- राजगोपाल सुरेका
उपाध्यक्ष-भारतीय संस्कृति संसद,
10, जवाहरलाल नेहरू रोड, कोलकाता-13

माधोदासजी : एक सुलझा हुआ व्यक्तित्व

रघुनाथदास सोमानी

माधोदास जी से मेरा संपर्क 1970 में हुआ, जब वे माहेश्वरी सभा के एक कार्यक्रम में मुख्य वक्ता बने और मुझे अतिथि का सम्मान दिया गया था। तबसे ही पहला मेरा उनसे संपर्क हुआ था।

1970 के बाद में उन्होंने मुझे भारतीय संस्कृति संसद का सदस्य बना लिया। वे जब तक जिन्दा थे तब तक हमारा संपर्क निरंतर बना रहा। 1972 में माहेश्वरी सभा का एक अधिवेशन हुआ, उसी समय कांग्रेस का अधिवेशन था, मैं कांग्रेस से सम्बद्ध था। मैंने उसमें उनको बुलाया था तब वे आये। इससे हमारे संपर्क में और निकटता बढ़ती गयी। महीने, पंद्रह दिन में उनसे संपर्क होता था क्योंकि वे जब बुलाते थे तो हम चले जाते थे। इससे हमारे संपर्क में निकटता बढ़ती चली गई।

माधोदास जी एक सुलझे हुए विचारों के व्यक्ति थे। अपने कार्यालय में निरंतर बैठते थे। उनसे 10-15 दिन में मिलना होता था। उनकी हर बात स्पष्ट होती थी। मुझे एक बार की बात याद है। मैं अपने गांव सांभर में एक कॉलेज स्थापित कर रहा था। उसके लिए गांव में और कलकत्ता से चंदा इक्ट्ठा कर रहा था। माधोदासजी से मैं मांगने नहीं गया। तब वे खुद मुझसे बोले कि क्या बात है आपने मुझसे चंदा नहीं मांगा। तब मैंने कहा यह कार्य बाछुलालजी तोतला के पास था कि वे आपसे चन्दा लेकर आयेंगे, इसलिए मैंने नहीं मांगा। तब वे बोले आप मांगेगे तो मैं ग्यारह हजार रुपया दूंगा, बाछुलालजी के आने से क्या होगा? तब उन्होंने मुझे ग्यारह हजार का ड्राफ्ट बना कर दिया। यह बात 1971-72 के आसपास की है। वे मुझसे बड़े थे। लेकिन हमसे समानता से बात करते थे। उनका यह बड़प्पन याद आता है। उनसे हमारे रिश्ते बहुत अच्छे थे।

उनकी सबसे बड़ी विशेषता थी कि वे जो भी बात करते थे स्पष्ट, बिना लाग-लपेट के करते थे। यही विशेषता उनके सुपुत्र विट्ठलदासजी में भी है जो हमारा सम्मान पिता की तरह करते हैं।

22/1, अलीपुर रोड, कोलकाता-700027,
फोन - 033-24791106

तपः - पुंज : मेरे पिताश्री

कुसुम जाजू

कैसे बांध पाउंगी आपको,
शब्दों में,
शब्दों की भी तो एक सीमा होती है।
और आपका सुदर्शन बहुआयामी व्यक्तित्व
अनूठा है, असीम है।
शब्द ढूंढ कर भी नहीं मिलते
आपकी जीवन जययात्रा का वर्णन करने।
वैसे भी सागर की गहराई
और हिमगिरि की ऊँचाई को,
कौन बांध पाया है शब्दों में।
प्रज्ञा के सागर को मथ कर,
आप जैसे तपःपूत मनस्वी चिंतक निकलते हैं।
रही बात हिमालय की तो उसने
कितने आतप, घात, संघात, वर्षा, आंधी
मधुबन, बसंत देखे होंगे आपकी तरह।
आपको देखकर मूर्तिमान विश्वास सजीव हो उठता था
उदात्त, शुभ्र, उन्नत ललाट, गौर वर्ण,
सौभाग्य से इस समष्टि में हमारे आसपास थी
सहज, सुलभ, निश्छल, सरल,
आप की छत्रछाया आश्वासन सी।
एक चुम्बकीय व्यक्तित्व, वटवृक्षत्व की अनुभूति
आर पार भेदने वाली विवेचक दृष्टि
और सौष्ठव बोध वाली, देह यष्टि के धनी आप।
स्वपठित स्वानुभूत ज्ञान द्वारा 'सुखी जीवन' 'रसौ वै सः'
'भारतीय तत्त्व चिंतन' जैसी गहन पुस्तकों के प्रणेता।
सृजनशील, साहित्यानुरागी, कोमल हृदय आप,
कैसे कर लेते थे?
रूखे ठोस कंक्रीट, सीमेंट से निर्माण, कोयला मशीनों का व्यापार।
समाज, साहित्य, मित्र मंडली, संस्थायें

सब सरितायें थी, आपके सागर जैसे ह्रदय में,
मिलती, उछलती, डूबती, उतराती थी।
इष्ट मदनमोहनलाल जी के उपासक आप
पिताश्री से प्राप्त संस्कार
उपासना करते-करते स्वयं, प्रभु की
सोलह कलाओं को स्वाति बूंद सा पीने लगे
अध्यात्म दर्शन में निष्ठा का अद्‌भुत सम्पुट था आप में।
चाहे बहुत मधुर गला नहीं था,
पर शास्त्रीय संगीत के उपासक थे
लय, ताल, तान में सचेतन होकर गाते थे।
कर्मयोगी, ज्ञानयोगी, रसयोगी, सफल जीवन-साधक आप
जमुना सरस्वती के संगम से गंगा
जो हम सबके बीच बहते थे।
क्या कहूँ?
आप हम सबके लिये अबूझ पहेली थे।
हम आपसे डरते, झिझकते थे।
पर आपकी वाणी में जो संस्कार संस्कृति के स्वर थे
सुनने को आतुर रहते थे।
'कस्तूरी मृग' से गंधवाहक थे,
आपके गुण चंदन, अगर, कपूर से महकते थे,
वे सब आज भी हमारी संपदा हैं।
आपकी जयंति एक प्रवाहमान धारा सी है।
देह का अवसान,
स्मृतियों-गुणों का अवसान नहीं होता।
वंश वाहक ज्येष्ठ पुत्र ने आपकी यश कीर्ति को,
अक्षुण्ण बनाए रखा है
आपकी पुस्तकों के संस्करण पर संस्करण प्रकाशित कर
आपकी स्मृति में गोष्ठियाँ, समारोह आयोजित कर।
क्यों आपको नहीं लगता कि,
आपके प्रति सच्ची श्रद्धा निवेदन का यह
श्लाध्नीय कार्य हो रहा है।
सिद्ध प्रज्ञा पुरुष आपको नमन नमन नमन।

एस 261, महावीर नगर, टोंक रोड, जयपुर-302018,
मो. - 9829015556

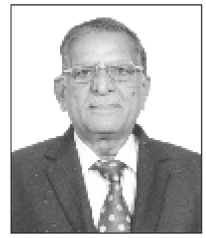

मेरे प्रेय : बाबू माधोदासजी मूंधड़ा

शंकरलाल सोमानी

मैं सन् 1988 में बांगड़ ग्रुप द्वारा संचालित मेसर्स डनबर मिल्स लिमिटेड में कार्यरत था। कारणवश यह कॉटन मिल बंद होने को थी। तब माहेश्वरी समाज के प्रमुख सामाजिक कार्यकर्त्ता स्व. केवलचन्दजी मिमानी ने मुझे सेठ माधोदासजी मूँधड़ा से मिलने का सुझाव दिया। मैं समय लेकर उनसे मिला और अपनी स्थिति से उन्हें अवगत कराया। उस वर्ष इलाहाबाद (प्रयागराज) में पूर्ण कुंभ था। श्री मिमानीजी के निवास स्थान पर उक्त कुंभ मेला में शारदापीठ (द्वारका) के पीठाधीश्वर अनन्त श्री विभूषित श्री जगद्‌गुरु शंकराचार्य स्वामी स्वरूपानन्द सरस्वती जी महाराज ज्योतिर्मठ (बदरिकाश्रम) के नेतृत्व में जाने की तैयारी हेतु कार्यकर्त्ताओं की सभा रविवार को आयोजित की गयी थी। उसमें श्री माधोदासजी मूंधड़ा अध्यक्ष के रूप में उपस्थित थे। उन्हें मेरी वर्तमान स्थिति की जानकारी थी। सभा के बाद उन्होंने मेरे कंधे पर हाथ रख कर कहा-सोमानी, सोमवार को सिम्पलेक्स ऑफिस आकर मुझसे मिलना। सोमवार को मैं उनसे मिला तो मुझे उन्होंने सिम्पलेक्स के निदेशक श्री ए. आर. बनर्जी के पास भेज दिया जिन्होंने मुझे श्री एस. एल. लाहोटी के नीचे कार्य पर नियुक्त किया। तत्पश्चात् उन्होंने कई सामाजिक संस्थाओं का कार्यभार मुझे दिया और फिर उन्होंने भारतीय सस्कृति संसद भवन में Renovation work की जिम्मेदारी दी। तत्पश्चात् श्री श्री गोरखनाथ ठाकुरजी ट्रस्ट में, श्री किसनचन्द बागड़ी को निर्देश देकर ट्रस्टी बनाया। फिर उन्होंने श्री जयकिशनदासजी सादानी से परिचय कराया जो अंग्रेजी भाषा में 8 खंडों में प्रकाशित होनेवाले Indian Culture ग्रंथ की तैयारी कर रहे थे। इस हेतु भारत के करीबन 400-500 विख्यात

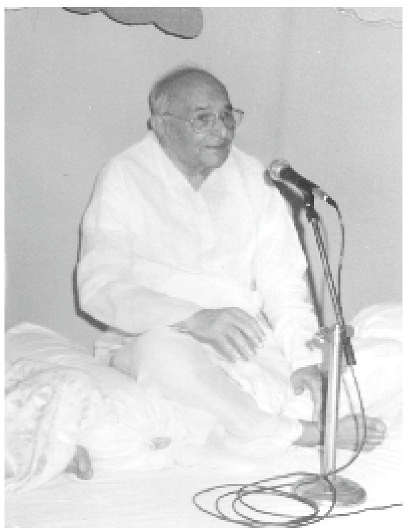

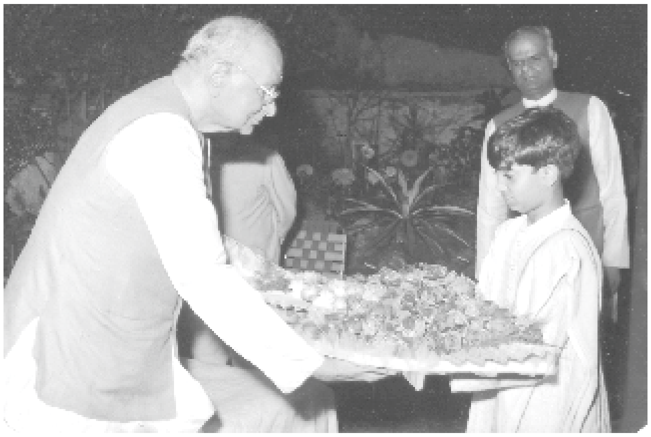

विद्वानों से पत्राचार कर उनसे आलेख संग्रह करने का दायित्व श्री माधोदासजी मूंधड़ा ने मुझे दिया। जब भी वे किसी सामाजिक कार्यक्रम में जाते तो मुझे साथ ले जाते थे। उन्होंने ही अपने जीवन के अंतिम पड़ाव में मेरा परिचय श्री बिट्ठलदासजी से कराया और कहा कि तुम अब इनके सारे साहित्यिक व सामाजिक कार्य भी देखोगे।

अधिकतर 'मौन रहना' उनका बहुत बड़ा गुण था। वे दृष्टि संयम, वाक् संयम और श्रुत संयम के प्रति सदैव जागरूक रहते थे। शास्त्रीय संगीत का घंटों रियाज करते थे, उनका साथ देते थे श्री रमणलालजी बिनानी और श्री आशारामजी सादानी। उनके साथ मुझे जसीडीह जाने का सौभाग्य भी मिला, उनके पूरे परिवार के साथ तथा श्रीकृष्णगोपालजी कन्धारी भी पूरे परिवार के साथ थे। उनको स्वादिष्ट व्यंजनों का काफी शौक था। वहां पर अजवायन की पकौड़ी बनवाते थे। ऐसे ही गोरखबंसरी में मेला का आयोजन था। मेरी बहन श्रीमती राजकुमारी खटोड़ ने दहीबड़ा का स्टॉल लगाया था। उन्होंने मुझसे चलाकर कहा- सोमानी दहीबड़ा तो चखाओ, वे उस स्टॉल पर आये और दहीबड़ा प्लेट लेकर उसका आनंद लेकर बहुत खुश हुए। मैं उनकी सेवा में घर पर भी जाता था। उनके अस्वस्थ होने पर बी. एम. बिड़ला हॉस्पीटल में भी रहा था।

1999 के मार्च-अप्रैल मास में मुझे मेरी जन्मभूमि झुंझुनूं जिले के सुलताना गांव में श्री हनुमान जयन्ती पर जाना था। वहां हमारा सोमानी परिवार का हनुमानजी का विख्यात मन्दिर है और उक्त अवसर पर परिवार के सदस्य दिल्ली, कलकत्ता, इलाहाबाद, इन्दौर, सीकर, उज्जैन व अन्य शहरों से चल कर आते हैं। रात्रि जागरण में संगीतमय भजन कीर्तन का आयोजन होता है। ये बातें मैंने आदरणीय श्री माधोदासजी मूंधड़ा को बताकर उनसे अनुमति चाही तो उन्होंने मुझे कहा कि सोमानी मेरी ओर से भी गांव की स्कूल के बच्चों में सवामनी का प्रसाद वितरण करना और इसके लिए उन्होंने मुझे रुपये 5100/- नगद दिए। मैंने सुलताना जाकर श्री हनुमानजी के मन्दिर में प्रसाद लगाकर वहां की स्कूल के बच्चों में बूंदिया-भूजिया का प्रसाद वितरित किया, बच्चे बहुत खुश हुए। मैंने इसकी सूचना फोन पर उनको दी तो वे बहुत खुश हुए और उन्होंने मुझसे कहा कि सोमानी मैं बहुत ठीक हूं, अब स्वास्थ्य भी सुधार की ओर है, जयश्रीकृष्ण। फिर मैं गांव से ट्रेन द्वारा कलकत्ता पहुंचा तो मुझे खबर मिली कि बड़े बाबू नहीं रहे। मैं स्तब्ध रह गया। उनकी बातों, उनके व्यवहार का अब भी स्मरण बराबर होता रहता है। मेरी हार्दिक श्रद्धांजलि।

श्रीपर्ना अपार्टमेंट, फ्लैट नं. -1बी
124ए, एन. एस. सी. बोस रोड,
टालीगंज, कोलकाता - 700092
मो.-9830559364

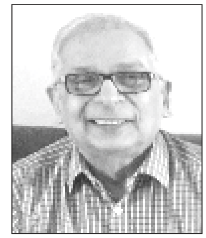

Most respected MadhoDasji Mundhra

Apurba Mukherjee

I consider myself blessed for having the good fortune of coming in close contact with Great MadhoDas-Ji Mundhra from very early stage of my career with Simplex around five decades back at Kolkata. I was also extremely fortunate to remain in closer contact with him after my transfer to Delhi office in early seventies at the behest of MadhoDas-Ji himself.

I had been a trained structural design engineer with postgraduate educational and professional qualification and working experience in England. I was inducted in Simplex by the then Director, late R K Dasgupta when there was a very urgent requirement of such an incumbent.

Looking back, I feel, being a structural design engineer helped me in getting involved with Geo-Miller & Co., an organisation specialized in Water and Sewage Treatment Plant which MadhoDas-Ji had acquired from British owners along Simplex after India gained independence in 1947.

Simplex used to be entrusted with the execution of major civil works of GeoMiller's Plants. The Effluent Treatment section of GeoMiller was later established at the initiative of MadhoDas-Ji. The responsibilities of handling civil works of Effluent Treatment plants starting from tender stage upto execution were given to me by Simplex. My involvement in these works would not have been possible without specific consent of MadhoDas-Ji.

I remember one incident in the context of execution of Barauni effluent treatment plant in late sixties. I had been pressing GeoMiller with a financial claim relating to increase in scope of works. The matter however was not resolved for quite a while.

Suddenly, one day MadhoDas-ji advised me that for resolving the dispute he would arbitrate as the Sole Arbitrator. Arbitration was held at MadhoDasJi's office at Hastings Street (now Kiran Shankar Roy Road). However, despite my convincing arguments the claim was disallowed by MadhoDas-Ji. I understood later, MadoDas-Ji, who had always been a very shrewd and most wise business-head, wanted disputes between organisations participating in execution, be it Owner/Client and contractor

or a contractor and Sub-contractor to be settled within shortest possible time keeping in mind the requirement of expeditious execution of contracts in harmonious environment, which would always render better results in business.

MadhoDas-Ji would not be easily convinced about a person's capability or potential to deliver. This I have learnt from my personal experience during early part of my career in Simplex, about two years after I joined. By that time I thought I had already proved myself in Simplex. I had produced nearly 100 working drawings in the first six or seven months for Gorakhpur Project. I was interacting with a very young and dynamic Mr. B. D. Mundhra, eldest son of MadhoDas-Ji, who at that time was based in Chennai and was taking keen interest in improving piling systems, for the design of much taller driven piling rig for installation of 600 mm dia. piles. I had also completed the design of Wazirabad Water Treatment Plant including design of shell roofs. But still I was in for surprise, because I could understand I was not yet fully tested by the Head of the organization, MadhoDas-Ji Mundhra.

I was in Simplex House office near Taratola Road, when I got a message that Mr. Lake wanted to see me in Mr. Dasgupta's room. I had heard Mr. T. I. Lake's name, he was from England and was Managing Director of Simplex till early sixties. He was on a visit to Kolkata. I went to Mr. Dasgupta's room, Mr. Lake was sitting alone. He started talking to me cordially. The discussion went on for almost three hours and covered all aspects of my studies, experience, problems I faced in execution, solutions and what not. Later I analysed and understood, Mr. Lake, who, even after he finally left for UK, remained a close associate of MadhoDas-Ji and would come to Kolkata off and on whenever requested by MadhoDas-Ji. He would not have spent three long hours with me unless he had been specifically advised by MadhoDas-Ji to take my in-depth interview.

MadhoDasJi's ways and means of progress and profit monitoring of jobs were totally different compared to the sophisticated systems we follow now. I must however emphasise, his follow ups with all Seniors were most effective which had always kept us on our toes particularly with regard to facts and figures about the contracts - progress & turnover, profit achieved, payment received, pending payments, when payments were expected to be received etc. etc. From the very beginning we were required to declare details with regard to profitability and turnover etc. for every job which would remain permanently etched or saved in his mind. Making such commitments to MadhoDas-Ji would not have been possible without thorough preparation and study of detailed programme of construction along with resource planning inclusive of financial planning. He would always catch us on the wrong foot and would be totally upset whenever the figures earlier committed would not match with actuals. Any excuse on these issues would be totally unacceptable to him. The actual profit status of previous month was required to be confirmed every following month based on detailed computation at site much before costing was done at office. He was absolutely firm and totally uncompromising on these issues.

During his time use of computers in

business houses was in an infant stage. But MadhoDasji's photographic memory with regard to facts and figures of every job of Simplex was simply bewildering. He would always recall the figures at any point of time without any hesitation. Not only that he had amazing memory, on financial matters and also in strategic planning he was the unparalleled Guru.

MadhoDas-Ji never wanted any kind of direct interaction with our Clients. However in some of the jobs where it was unavoidable, he had always been more than successful in settling issues in favour of Simplex. There was one such case I remember, in which there was a requirement of financial dispute (in which we were not on strong foundation) to be settled with a govt. organization - FACT (Fertilisers and Chemicals Travancore), for which they insisted on the presence of the Head of our organization for a crucial meeting. MadhoDas-Ji reluctantly agreed to attend and took Mr. B. D. Mundhra and myself along for the meeting which was held at Delhi. FACT was represented by five MDs from different Public Sector companies. I remember, his very strong but amiable personality together with his way of presentation enabled settlement of the dispute in one meeting, which was dragging on for years, with minimum damage to Simplex.

After I joined Simplex, for more than one year or so I never had any opportunity of interacting with MadhoDas-Ji. However I was always overawed by his very presence, tall, fair and handsome, always impeccably dressed whether it was in Indian or Western attires, with very pleasant but over-whelmingly overpowering personality. After he started interacting with me, I saw him as a very strong willed business-head with no-nonsense attitude, which he was, all through his life. But later I observed that he was a person with many facets. He was compassionate, philosopher, writer and above all an accomplished vocalist highly versed in North Indian classical music. I have seen that Pandit Jasraj, the renowned exponent of Indian Classical music, treated MadhoDas-Ji with high reverence and to MadhoDasJi he was like his younger brother.

I was fortunate that MadhoDas-Ji visited my residence at Delhi more than once.

The first time MadhoDas-Ji came to my home at South Extension, New Delhi, was in 1973 when I was indisposed. The very next day after his visit I learned, he had advised our office to arrange for a refrigerator at my place as he somehow understood that I did not have one. I was amazed with the humane side of MadhoDas-Ji. There are plenty of other such instances of his compassionate nature.

Over the years I was closer to MadhoDas-Ji and also to the Mundhra Family, in particular Bitthal Dasji Mundhra. I remember having sumptuous meals on many occasions at Mundhra Estate Kolkata and also at their Panchsheel residence at Delhi.

MadhoDasji's unwavering trust in me while being highly inspiring was some kind of huge added responsibility on me demanding total allegiance to him and the organization. With regular interactions with him, I developed true sense of belongingness to the organisation. I always had huge respect and admiration for him. However, his expectation that I would be

more than successful and excel in performance in every project in particular financially, was at times highly stressful for me. I had all along been very thankful to him for the independence he had given to me for securing and executing turnkey and other contracts in which I was by and large successful. However over a period of time I realized that MadhoDas-Ji had transformed me into a Commercial Executive, albeit a successful one and I had been neglecting my technical side. Structural design being my first love, this transition had bothered me a lot. My interaction with Indian and International Clients gave me lot of exposer and I got more than one highly lucrative offers, but never had any intension to leave the organization I belonged to. However once in early Nineties I got an exciting offer of getting myself involved once again in Structural Design works only and after lot of hesitation I somehow strengt-hened my mind and made a submission to my mentor, MadhoDas-Ji, requesting him to release me from the organization for persuing my goal. It was in Kolkata. He listened to me without any expression, asked me about my future prospects and advised me to see him on the following day. Next day I went to see him with heavy heart considering my impending separation from MadhoDas-Ji, BitthalDas-Ji and Simplex where I had by then spent nearly three decades of my life. I however needed madhoDas-Ji's blessings for embarking on the new platform! MadhoDas-Ji made me sit like at normal times. His face was expression less. After a lengthy pause he gave his decision in customary tone like he did in many other occasions stating (as I recollect), "I have decided you are not going anywhere, it will not be good for you". That was the end of it. Although his decision had disappointed me on that particular day, I was not left with any option, as the verdict came from my Guardian in true sense.

In the later part of his life MadhoDas-Ji took me into confidence and discussed about some of the intricate problems he had been having for which he did not have any satisfactory solution. He always had great affection for his sons, all of whom he wanted to be happy. He loved his grandsons very dearly and was quite proud about them. While I will never divulge any part of my discussion with the Great Man regarding his personal matters, I very honestly do not know whether I was of any help to him with my opinions which he insisted on having.

I had been in touch with MadhoDas-ji as long as he lived. At the very last stage of his life, after receiving a message I rushed to Kolkata from Delhi, and went to Mundhra Estate to meet him. I was escorted to the room on first floor where he was lying on a mat on the floor. He was fully conscious, gestured to me to sit beside him. His face was absolutely calm and peaceful, he extended his hand which I held. He asked me about my well-being. Then he talked to me very slowly but clearly and said - never leave Bitthal!

Today, while reminiscing, I thank my stars for being so fortunate to have come in close contact and to have been blessed by my Mentor, whose name I always take with highest respect - MadhoDas-Ji Mundhra.

12/1, Nellie Sengupta Sarani -700087
Mob. - 9830981081

Shri Madho Das Mundhra - As I Knew Him

Sukumar Dutt

My first meeting with ShriMadho Das Mundra dates back to the year 1994. I had joined Simplex Concrete Piles (India) Ltd in April, 1994. It was a typical hot summer month, the beginnings of an Indian summer. A few days after joining, my senior Mr. A. R Banerjee, took me to meet ShriMadho Das Mundra who, in those days, was respectfully and popularly known within the organization as "BoroBabu".

After a brief round of introduction, "BoroBabu" commented that I, as a new inductee into the company mayface problems which need to be responded properly.. As the days passed, he kept calling me to his room and I got to know more of him. He not only invoked respect and admiration with his subtle low key approach yet very hands-on style of management encouraging a degree of openness and transparency.

Perhaps encouraged by this openness and transparency, I asked him one day - "If you do not mind, can I ask you something? As far as I know, you've been a student of commerce. Then how did you so successfully run and expand an engineering company such as this? Realizing that I may have raised an embarrassing issue, I added: "please let the question pass, if it offends you." Slowly, in his characteristic style, he started with an example. He named a senior engineer and asked whether I knew him. When I nodded in agreement, he said that what the engineer was capable of doing, as well as what he was not capable of doing, he knew both. In other words, that particular engineer's capabilities and limitations, he knew like the back of his hand, perhaps even better than the extent to which his family knew. He went on to add that to be successful, one needs to recognize the right people, one needs to understand the engineers behind the engineering. Those words, spoken 24 years back, still rings in my ear. Needless to say, I was amazed at his wisdom, his foresight. In this era of artificial intelligence and digital invasion, I still believe it is the wisdom and sagacity of people like Shri MD Mundhrawhich leads towards human progress along its true path.

We used to have conversations on a variety of topics as he had an insatiable appetite for learning and the humility to not let ego come in its way. On topics like accounting with its new rules and regulations, income

tax and the accompanying changes, he used to ask incisive questions making sure that what he absorbed has been carefully distilled and weighed. On occasions when I felt that I had been unable to satisfy him, I would request to him that I would get back after doing further studies. This perfection, even in his learning, was exemplary and may be counted as another trait of greatness that he so humbly sought to downplay. On one of those days, during a conversation, he gave a very valuable advice which I hold dear to my heart to this day. While discussing a particular situation and what decision may be taken with regards to that situation, he advised me that in all critical decision making matters, I should always listen to all points of view raised, but, take my own decision without being prejudiced by any particular perspective.

In this context, I recall a humorous incident. There was a very senior technical executive who was stationed out of Kolkata. Whenever he came to our Kolkata office, he would drop to my chamber and have a cup of tea. One day, he came to my chamber huffing and puffing. On first enquiry, he said that he had been accosted by a tiger. Startled, I asked when it happened. He replied that it happened just a few minutes back. Puzzled, I asked him where he saw the tiger . He refused to elaborate further except for pointing his finger at a particular direction. When I further probed with questions like whether the aforementioned tiger sits in the ground floor, his floodgates burst. In one breath, he mentioned that just a few minutes back, he had been attacked by a series of questions and his answers have led to further questions exposing all that he was trying to cover behind various statistics and play of words. Of course, the last part I had to figure out by myself and everything became clear -the person he was referring to and the cause of his sheer panic in his voice.

I've had the opportunity of listening to his questioning a number of times and each time I was amazed by the line of reasoning that his questions sought to take. Just to give an idea, I would mention one particular incident. As far as I can recall, it was while discussing lower than expected profit margins and cashflowsof a particular contract, that he started asking questions to the person who was responsible. The initial questionswere fairly innocent. For example, it could be a questionas to whether checking of the profit margins had been properly done before tender submission. He would then ask the concerned person to go back, recalculate the margin and also revert with reasons for low margin. To help with the investigation and analysis, he would throw in a few pointer questions like finding reasons for higher cement or sand wastage, what factors had been accounted for, and so on. Somewhere at this discussion , the cat would come out of the bag as it was impossible to confuse him and lead him astray. Once the responsible person had owned up and opened up, he would then ask as to what kind of support the concerned person would need and offered all help in the course rectification. The best part of the entire exercise, the beauty of it, lay in the fact that he would do all this from memory without reference to any documents or notes.

In 1994, when I joined, I had only a few years left for retirement with a Multinational Company (MNC) that I used to work for. At that time, I heard of this gentleman and his firm, Simplex Concrete Piles from a friend. My friend told me that Simplex was a place where no one was asked to leave, that Mr. MD Mundhra, an astute and successful industrialist, had a

heart of gold. He treated his employees like a part of his family. With advanced age, a person would be given suitable work and responsibility commen-surate with his ability just as one does in a large joint family, with their senior family members. It sounded like a fairy tale to me only to find every word of it is true. The loyalty he inspired amongst his employees, the love they had for him, is truly incomparable in today's time and age.

I recall another incident to show some insights into his behaviour and value system. It was reported that an employee had spent some money for personal use which was actually given to him for some critical official work. After detection of his dishonesty, the concerned man was sent to the Mr. M. D. Mundhra.No one knew what transpired but the man kept working as usual. After a few days, that man's boss met Mr. M. D. Mundhra and asked him about his plans regarding the employee who had resorted to dishonesty. He replied that he had given him a strong scolding the other day. He summed up saying that to err is human. Only if the concerned person repeats his mistake, further action maybe thoughtof. Otherwise, needless policing would lower employee morale. Such incidents make me unhesitatingly state that it has been my privilege to have come in contact with such a great soul.

Till now, I've only discussed only one aspect of ShriMadho Das Mundhra, i.e, his business life. He was a man of simple living and high thinking coupled with fine taste, but to do justice to his multi-faceted personality, a few words must be said about his cultural and charitable activities, and the various trusts that he ran like BharatiyaVidyamandir, Shree Charity Trust, Bharatiya Sanskriti Samsad, etc. He spent considerable time and effort to publish books on our cultural heritage, and was behind many conferences, seminars in this regard. Many of these trusts groomed and patronized by him have done yeoman service in the arena of education through the various schools and other educational institutions that are managed by them.

A multifaceted personality, he was fond of classical music and regularly used to play sitar under an accomplished musician. Many a days, after office, he would spent time with eastern music maestros who would come down on his personal invitation to create an evening of musical magic.

In some ways, he was the stuff legends are made of. It would be no exaggeration to describe him as an expert on the Arthashastra, the Dharmashastra, a connoisseur of music and fine arts, a philanthropist, a highly successful industrialist and a philosopher with a value system. I'm sure the reader would very much agree with my usage of the adjective 'philosopher' if he gets a chance to read "SukhiJeevan", a book where he expounds his philosophy giving guidelines on how to lead a happy family life based on the teachings of the Gita, Upanishads, etc. In fact, in his office itself, he maintained a library of various religious books.

In his birth centenary year, I've endeavored to draw a brief portrait of ShriMadho Das Mundhra based on what I saw of him and the interactions we've had over a period of around 2 years. I'm sure that all those who've had the privilege of knowing him from close quarters for a longer period, has been benefited by a life changing influence and he shall be remembered by all of us with deep admiration, respect and love.

Simplex Infrastructure Lld.,

27 Shakespear Sarani -700087

स्व. माधोदासजी मूंधड़ा अपने अंतिम दिनों में पूरी तरह चिंतन-मनन व लेखन में लग गए थे। उनके लेखन की एक झलक देने के उद्देश्य से यहां प्रस्तुत हैं उनकी तीनों पुस्तकों के अग्रलेख। - सम्पादक

रसो वै सः (प्रथम संस्करण 1992)

प्राक्कथन

भारतीय संग्रहालय के निदेशक के रूप में मेरे कलकत्ता प्रवास की अवधि में एक महत्त्वपूर्ण संयोग घटित हुआ, वह था डॉ. प्रभाकर माचवे (अब स्वर्गीय) द्वारा भारतीय संस्कृति संसद से न केवल परिचय अपितु वहाँ के कुछ विद्वानों व प्रबन्धकों से निकटता स्थापित कराना। ऐसा प्रतीत हुआ कि संभवतः दिवंगत होने के पूर्व संसद सम्बन्धी कुछ उत्तरदायित्व वे मुझे सौंप गए थे। यद्यपि अपनी अल्पज्ञतावश मैंने उस विलक्षण प्रतिभा-सम्पन्न विभूति की इच्छा को गम्भीरता से नहीं लिया, किन्तु संसद के दायित्व का निरन्तर बोध होता है। मैं भी राष्ट्रभाषा के माध्यम से साहित्य, कला और संस्कृति की अजस्र त्रिवेणी स्वरूप भारतीय संस्कृति संसद से अपने दूरस्थ नैकट्य को सौभाग्य सूचक मानता हूँ।

इसी दिव्य संयोग की शृंखला में संसद के कार्यकलापों के प्रेरणास्रोत श्री माधोदासजी मूँधड़ा का मुझ पर विशेष स्नेह रहा। संसद में मेरे कुछ व्याख्यान उन्होंने सुने, विचार और तर्क-वितर्क हुआ और उन्होंने गोष्ठी-परिचय को स्थायित्व प्रदान करने का संकल्प ले लिया। फलतः अपनी पुस्तक 'रसो वै सः' की पाण्डुलिपि का अन्तिम आलेख ले वे कलकत्ता से दिल्ली पहुँच गए और इसकी भूमिका या प्राक्कथन लिखने का आग्रह किया। मेरे लिए यह बड़े संकोच का अवसर कि मैं पुस्तक की भूमिका लिखूँ किन्तु उनकी आत्मीयता और स्नेह की बाढ़ ने संकोच प्रवाहित कर दिया और सहमति के अतिरिक्त कोई विकल्प नहीं रह गया।

वैदिक सूक्ति है 'अग्निः पूर्वेभिः ऋषिभिः ईड्यो नूतनैरिव' अर्थात् अग्नि की उपासना पूर्व ऋषियों ने की और नए मुनि भी करते रहेंगे। अग्नियज्ञ के समान ज्ञानयज्ञ भी है जिसमें मनीषी अपने अध्ययन, अनुशीलन और चिन्तन की आहुति

डालकर स्वयं तो कृतकार्य होता ही है, साथ ही लोकोपकार अथवा लोक-मंगल की भी सिद्धि करता है। इसी परम्परा में बहुज्ञ, बहुश्रुत एवं सुधी चिन्तक श्री माधोदासजी मूँधड़ा की प्रस्तुत कृति है।

इसके छः अध्यायों में 'शेषे पष्ठी' का स्मरण करते हुए भारतीय चिन्तन धारा के विशिष्ट सोपानों को षड् दर्शन की भाँति मानता हूँ। वेद, गीता, भागवत, धर्म एवं कला के सौंदर्य के माध्यम से वे परम रस तत्त्व तक पहुँच गए हैं। इनमें ज्ञान, वैराग्य, कर्म, भक्ति और लालित्य सभी पक्षों को आलोकित किया है। ये निबन्ध गम्भीर चिन्तन और अनुभूति के समन्वय से निस्सृत हैं। ये इसमें षड्चक्र की तीलियों की भांति एक ही केन्द्र बिन्दु अर्थात् श्रीकृष्ण की सत्ता से प्रस्फुटित हो एक विशिष्ट आध्यात्मिक आभा मंडल की परिधि का निर्माण करते हैं।

इन छः अध्यायों में पारमार्थिक चिन्तन के साथ जीवन के शाश्वत मूल्यों की भी व्याख्या, प्रतिष्ठा और अपरिहार्यता को भी दिग्दर्शित किया गया है। भारतीय दर्शन को आधार मानते हुए कहीं-कहीं पाश्चात्य दर्शन के माध्यम से भी मन्तव्य को पुष्ट किया गया है।

धर्म और सम्प्रदाय का विवेचन करते हुए विद्वान लेखक ने कितनी सरलता से यह सत्य उद्घाटित किया है-**'धर्म भूमि है उस पर नाना पथ हैं। सम्प्रदाय ही पथ हैं, वे भूमि नहीं हैं। वे बनते, बदलते और मिटते हैं।'**

इसी प्रकार कल की समीक्षा भी बड़ी सार गर्भित बन पड़ी है। **'यदि वह (कला) यथार्थ का ही चित्रण है तो उसमें कलाकार की सर्जनात्मक चेतना की अभिव्यक्ति नहीं होगी। उसमें सत्यम् सुन्दरम् की प्राणवत्ता नहीं रहेगी। अपने विचारों एवं भावों को विराट चेतना के स्तर पर अभिव्यक्त करना कला की श्रेष्ठतम उपलब्धि है।'**

अध्याय के आरम्भ में कला की व्युत्पत्ति दी है। इसमें मेरी यह संभावना भी विचरणीय है 'कं आनन्दं लालयित इति कला' अर्थात् जो आनन्द की वृद्धि करती है, वह कला है। ललित शब्द की वृद्धि करने से आनन्द के साथ लालित्य का संवर्धन भी अपेक्षित हो जाता है।

लेखक ने गीता-सार विवेचन के प्रस्तुतीकरण में इस अप्रतिम महत्त्व के ग्रन्थ पर मन्तव्य व्यक्त किया है कि यह ग्रन्थ मानव मात्र के उद्धार तथा उसके कर्त्तव्यों को बतलाता है, इस दृष्टिकोण से यह ग्रन्थ किसी भी सम्प्रदाय, देश, समुदाय तथा किसी वर्ग विशेष का नहीं है। यह समस्त मानवजाति के हित का है और उसके लिए है। श्री अरविंद ने भी गीता पर अनेक निबन्ध लिखते हुए मत व्यक्त किये हैं कि गीता का अपनी इच्छा के अनुसार उसका अभिप्राय निकालने लगते हैं लोग। परंतु यह तो एक दीप स्तम्भ की भाँति है जिससे हम स्वयं को आलोकित करें न कि अपने स्वयं के विचार अथवा पूर्वाग्रह उसकी व्याख्या में थोपें।

भारतीय दर्शन के आदि व अजस्र स्रोत वेदों के महत्व पर विचार व्यक्त करते हुए सार रूप में लेखक का कथन कितना स्पृहणीय है, 'वेदों में उस तत्त्व का दर्शन प्रस्तुत हुआ है जो मानव मात्र को असत् से सत् की ओर, अंधेरे से प्रकाश की ओर, मृत्यु से अमरत्व की ओर ले जाता है। इस परम तत्त्व के साक्षात्कार से परमानन्द की अनुभूति प्राप्त होती है।'

भागवत, गीता व रसो वै सः सम्बन्धी निबन्ध श्री मूँधड़ाजी की इष्ट प्रवृत्ति के द्योतक होने के साथ ही विश्लेषण, चिन्तन एवं भक्ति के समन्वय के माध्यम से परम सत्ता को हृदयंगम करने के भिन्न सोपान हैं।

मुझे इन सभी निबन्धों को आद्योपान्त पढ़

आत्यन्तिक सुखानुभूति हुई। आशा है, भारतीय संस्कृति कला व दर्शन के अनुष्ठाताओं को ये लेख सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक चेतना के उन्नयन के लिए प्रेरित व स्पन्दित करने में समर्थ होंगे और यही श्री मूँधड़ाजी के दीर्घचिन्तन, अध्ययन, अनुशीलन और अनुगुणन का सुफल होगा।

मैं उनके दीर्घायुष्य की कामना करता हुआ पुस्तक प्रणयन के साथ परिपक्व ज्ञान व अनुभव की महत्वपूर्ण थाती सौंपने के लिए उन्हें बधाई व साधुवाद देता हूँ।

- डॉ. रमेशचन्द्र शर्मा
(महानिदेशक एवं कुलपति)
राष्ट्रीय संग्रहालय एवं संस्थान, नई दिल्ली
10.2.92

आमुख

भारतीय अध्यात्म को समझने की अनेक वर्षों से इच्छा थी। गत तीन-चार वर्षों से यह भावना और भी तीव्र हो गयी। पुष्टिमार्गीय वल्लभ सम्प्रदाय में जन्म लेने के कारण कुछ तो संस्कार आरम्भ से ही पड़े हुए थे फिर छोटी अवस्था में नित्य लीलास्थ पूज्य गोस्वामी श्री दीक्षितजी महाराज के साथ अनेक दिन रहने का सौभाग्य मिला। वे मुझसे 5-7 वर्ष बड़े थे और एक तरह उनके साथ मेरा आत्मीय भाव स्थापित हो गया था। उन्होंने संस्कृत साहित्य के "मेघदूत" काव्य एवं श्रीमद् भागवत के रासपंचाध्यायी, विशेषतः गोपी गीत को सहज एवं सरसता के साथ मुझे समझाया। उसकी अमिट छाप अभी तक मेरे मन पर पड़ी हुई है। कुछ वर्षों उनके साथ बम्बई में रहा। उस समय उन्होंने वैदिक दर्शन के विभिन्न पक्षों के संबंध में भी जानकारी प्रदान की। इन वर्षों में नित्य लीलास्थ पूज्य श्री रणछोड़लालजी महाराज प्रथमेश का सान्निध्य भी प्राप्त होता रहता था। उनका मुझ पर अत्यन्त स्नेह था। उन्होंने गीता और भागवत के मुख्य तत्त्वों से मुझे अवगत कराया।

इस संबंध में भारतीय संस्कृति संसद का उल्लेख करना समीचीन होगा। वहाँ पर समय-समय पर विद्वानों, संतों एवं महात्माओं के प्रवचन आध्यात्मिक विषयों पर होते रहते ही हैं। इनमें स्वर्गीय स्वामी आत्मानन्दजी का नाम प्रमुख है। संसद में गोष्ठी, अध्ययन गोष्ठी नियमित रूप से होती आ रही हैं। इन गोष्ठियों के माध्यम से मुझे अध्ययन एवं चिन्तन करने का अवसर प्राप्त रहा था। संसद आध्यात्मिक एवं सांस्कृतिक अभिरुचियों को विकसित करने की प्रेरणा देती रही है। यही कारण है कि इन गंभीर विषयों पर अनेक जिज्ञासाएँ होती रही जिनके समाधान के लिए इन लेखों में प्रस्तुत विषयों के संबंध में अनेक ग्रंथों को पढ़ा, संत और महात्माओं के प्रवचन सुने, विद्वानों से विचार-विमर्श किया, मित्रों से भी बराबर परामर्श करता रहा एवं साथ ही साथ स्वयं भी मनन-चिन्तन करता रहा। ऐसा प्रतीत हुआ कि जब तक इन विचारों को लिपिबद्ध नहीं किया जायेगा तब तक सुस्पष्टता नहीं बन पायेगी। यह लेख माला उसी की परिणति है। यह विषय अत्यन्त गम्भीर है और इसका संपूर्ण रूप से विवेचन इन छोटे-छोटे लेखों के द्वारा करना संभव नहीं है। किन्तु बड़े ग्रन्थों का अध्ययन सबके लिए संभव नहीं होता। अतः मेरा यह विनम्र प्रयास है कि युवा पीढ़ी इन लेखों को पढ़कर इन विषयों का एक संक्षिप्त परिचय प्राप्त करे। ये लेख उनके समक्ष इन विषयों का एक रेखाचित्र प्रस्तुत करते हैं। जिनको विशेष ज्ञान की इच्छा होगी वे स्वयं विशेषज्ञों द्वारा लिखे हुए सूक्ष्म चिंतनपरक ग्रन्थों का अध्ययन करेंगे। इन विषयों पर गम्भीर पुस्तकों को पढ़ने का आजकल धैर्य कम लोगों में है। अतः इन लेखों में भाषा को सरल रूप में अभिव्यक्त करने का प्रयास

किया गया है। किन्तु विषय ही इतने गम्भीर हैं जिनके कारण शायद जगह-जगह पर जटिलता भी आ गयी हो तो इसे एक विवशता ही समझना चाहिए।

इन लेखों में विषयों का चयन करने में एक क्रमबद्धता रखी गयी है। प्रथम लेख वेद से संबंधित है। वेद विश्व साहित्य के आदि ग्रन्थ हैं-- इनमें दर्शन के मूल तत्त्व बीज रूप में समाहित हैं। दर्शन हमारे जीवन के लक्ष्य का निर्धारण करता है। इस तत्त्व को किस तरह प्राप्त किया जाय इसके लिए धर्म का आधार आवश्यक है अतः दूसरे धर्म विषयक लेख में धर्म का विवेचन एवं उसके विविध आयामों का संक्षेप में वर्णन किया गया है।

गीता हमारे अध्यात्म जीवन का एक उत्कृष्ट ग्रन्थ है। इसमें ज्ञान, कर्म और भक्ति का समन्वयात्मक ढंग से निरूपण हुआ है। मानव की प्रकृति अलग-अलग होती है। जो मार्ग उसे अपने अनुकूल लगता है उसी के अनुसार वह साधना करे। गीता पढ़ने से हमें हमारे कर्तव्य बोध का ज्ञान होता है और तदनुरूप आचरण करने से आत्म साक्षात्कार भी सम्भव है। ज्ञान और सत्य तो ब्रह्म ही है परन्तु रसपूर्ण भावना के बिना वह अधूरा ही रहता है। इस बात को ध्यान में रखते हुए वेदव्यास जी ने श्रीमद्भागवत पुराण की रचना की जिसमें प्रेम लक्षणा भक्ति का सुन्दर वर्णन हुआ है। मानवीय प्रेम उदात्त होकर दिव्य प्रेम में परिणत हो जाता है। भक्त के सारे कार्य भगवत् प्रीत्यर्थ हो जाते हैं। प्रभु का निरन्तर स्मरण करने से शरणागति का भाव दृढ़ हो जाता है। यह साधना हर व्यक्ति के लिए सहज एवं सुलभ है। यद्यपि विद्वानों के लिए भी भागवत में पर्याप्त चिन्तन उपलब्ध है। परन्तु भागवत मूलतः प्रेम लक्षणा भक्ति को ही प्रतिपादित करती है। ज्ञान और प्रेम का इसमें अद्भुत समन्वय हुआ है। "रसो वै सः" शीर्षक निबन्ध में भगवान के रस रूप का सविस्तार विवेचन हुआ है। इसके अध्ययन से यह स्पष्ट हो जाता है। **हमारे सारे शास्त्रीय ग्रन्थ संस्कृत भाषा में लिखे गये हैं उनको पढ़ना और समझना जन-साधारण के लिये अत्यन्त दुरूह है अतः ज्ञान, कर्म, योग, भक्ति, निर्गुण ब्रह्म तथा सगुण ब्रह्म इन सब विधाओं को हमारे संत एवं भक्त कवियों ने जन-जन की भाषा में अपने सरस पदों द्वारा अभिव्यक्त किया है। यही कारण है कि भारतीय जनता दर्शन के मूल सिद्धान्तों को जानती है- ज्ञान और भक्ति की बात समझती है। भारतीय जनता इसीलिए स्वभाव से धर्म प्राण बन गई है।**

धर्म में जीने के लिए कुछ बातें आवश्यक हैं। जीवन संस्कार युक्त और सुसंस्कृत हो इसके बिना साधना कठिन हो जाती है। "संस्कृति" लेख में इसी विषय का प्रतिपादन किया गया है। मानव की प्रवृत्ति सौन्दर्योन्मुखी है और वह उससे रस प्राप्त करता है। उसका मुख्य माध्यम कला ही है। अतः "कला" शीर्षक लेख में इसकी संक्षिप्त चर्चा हुई है तथा उसके विभिन्न पक्षों का इस लेख में विधिवत विवेचन किया गया है। इसके अन्तर्गत सौन्दर्य-बोध, अध्यात्म एवं संस्कृति का निरूपण किया गया है। मनुष्य सदैव ही सुखी रहना चाहता है। सच्चा सुख कैसे प्राप्त हो यह जानना अत्यन्त आवश्यक है। "सुख एक चिन्तन" निबंध इस विषय की ओर इंगित करता है।

"मौन" के संबंध में हम लोगों के मन में अनेक भ्रांतियाँ हैं। मूकता और मौन को हम पर्यायवाची मान लेते हैं वस्तुतः दोनों भिन्न स्थितियाँ हैं। मौन मन का तप है और व्यक्ति यदि वास्तव में सच्चे मौन की स्थिति में पहुँच जाता है तो यह उत्कृष्ट उपलब्धि होगी। ब्रह्म की अभिव्यक्ति शब्दों द्वारा बतानी संभव नहीं है। मौन रहकर ही हम उसकी अभिव्यक्ति करते हैं। अतः इस पुस्तक का

उपसंहार "मौन" लेख से संपन्न किया है।

इस लेख माला के इन गंभीर विषयों पर अनेक विद्वानों द्वारा सैकड़ों ग्रन्थ लिखे गए हैं एवं लिखे जा रहे हैं। मेरे जैसे अदने व्यक्ति के लिये भूल एवं भ्रान्तियाँ होनी अत्यन्त स्वाभाविक हैं। आशा है सुधी पाठक वृन्द इसे मेरी अज्ञता समझकर क्षमा करेंगे।

इस लेख माला को सम्पन्न करने में काफी समय लगा है और इस कार्य में मुझे अनेक व्यक्तियों से सहयोग प्राप्त हुआ है। सर्वप्रथम मैं श्री जयकिशनदासजी सादानी के संबंध में दो शब्द कहना चाहूँगा। मैंतो कार्य की कठिनता को देखकर हार-सा गया था- लेकिन उन्होंने मुझे बराबर प्रोत्साहित किया। उनके सहयोग के बिना यह कार्य संपन्न होना अत्यन्त ही मुश्किल था। उनके सान्निध्य में बैठकर प्रत्येक विषय पर गंभीर रूप से विचार विनिमय होता रहा। इन लेखों में किन-किन विषयों को लिया जाय और इसकी क्रमबद्धता क्या हो इस संबंध में उनका सहयोग प्राप्त हुआ। भाव जहाँ पर भाषा में सुस्पष्ट नहीं हो पा रहे थे, वे स्थल उन्होंने सुधारे एवं विद्वत्तापूर्ण ढंग से संपादित किए। इस पुस्तक में वर्णित लेखों में संस्कृत के अनेक श्लोकों का उद्धरण देकर उन्हें यथा-स्थान इन लेखों में दर्शाया गया है-- उनका चयन भी उन्होंने ही करके दिया था। दूसरे शब्दों में कहें तो यह निबंध माला उनके सहयोग एवं मार्गदर्शन का ही फल है। इस आत्मीय सहयोग के लिए मैं उनका चिर-ऋणी हूँ।

पं. श्री अक्षयचन्द्रजी शर्मा जिनसे मेरा लगभग 45 वर्षों से संबंध है-- वे हमारे घर में शिक्षक थे। परिवार के सभी लोगों के तो गुरुजी हैं। उनसे मैंने गीता एवं उपनिषद् पढ़े थे। उन्होंने भी अनेक सुन्दर सुझाव दिये और साथ ही श्रीकल्याणमलजी लोढ़ा ने इन लेखों की पाण्डुलिपि को आद्योपांत पढ़ा। मैं कविवर कन्हैयालालजी सेठिया का आभारी हूँ, जिन्होंने अत्यन्त स्नेह से मेरे सभी लेखों को पढ़ा। इनके सुचिंतित विचारों से मैं बहुत ही लाभान्वित हुआ हूँ। इन महानुभावों ने केवल मात्र अपने अमूल्य सुझाव ही नहीं दिये बल्कि विषय संबंधी जो बातें छूट गयी थी तत्संबंधी मार्ग-दर्शन भी किया। मैं इन लोगों का हृदय से आभारी हूँ।

मेरे मित्र श्री परमानन्दजी चूड़ीवाल, श्री रमणलालजी बिन्नानी भी धन्यवाद के पात्र हैं जिन्होंने इन लेखों को पढ़ा और अपने सुझावों से मुझे अवगत कराया। दर्शन से संबंधित लेख में श्री गौरीशंकरजी मोहता का भी अवदान प्राप्त हुआ, अतः वे भी धन्यवाद के पात्र हैं। गीतासार विवेचन शीर्षक लेखक को पूज्य स्वामी रामसुखदासजी महाराज ने कृपा पूर्वक पढ़ा और योग विषय पर नवीन चिंतन से अवगत कराया, मैं उनका कृतज्ञ हूँ। सच कहा जाय तो यह लेख माला इन सारे महानुभावों का सम्मिलित प्रयास ही कहा जाय तो उचित होगा।

इस पुस्तक का प्राक्कथन राष्ट्रीय संग्राहलय के महानिदेशक एवं कुलपति डॉ. रमेशचन्द्रजी शर्मा ने विद्वत्तापूर्ण लिखा है- मैं उनका आभारी हूँ। इस पुस्तक के चार निबंध उनके पास नहीं पहुँच पाये थे अतः उन्होंने छह निबंधों के संबंध में ही लिखा है।

जगद्गुरु शंकराचार्य पूज्य स्वामी स्वरूपानन्दजी महाराज ने इस पुस्तक के लोकार्पण की स्वीकृति प्रदान की है। मैं अपनी पत्नी श्रीमती कृष्णा देवी मूँधड़ा का भी आभारी हूँ जिसने मुझे अध्यात्म चिन्तन की ओर प्रेरित किया।

इन विविध एवं गंभीर विषयों के विवेचन में यत्र-तत्र त्रुटियाँ होनी स्वाभाविक हैं। सुधी पाठकों के सुझावों का सादर स्वागत है।

- माधोदास मूँधड़ा

कलकत्ता, 1992

भारतीय तत्त्व चिंतन : एक में अनेक (1998)

आमुख : एक में अनेक

इस संसार का आद्य विद्या विधान है वेद। वेदों से अधिक प्राचीन ग्रंथ संसार के किसी भी राष्ट्र में अभी तक उपलब्ध हुआ नहीं है और न आगे चलकर उपलब्ध होने की संभावना है। पौराणिक सन्दर्भों के अनुसार चारों वेदों की 1138 शाखाएं थीं। आज उनमें से केवल 12 शाखाएँ उपलब्ध हैं। परम्परागत आर्य पद्धति से वेदों का अध्ययन करने वाले दशग्रंथी घनपाठी कुछ वैदिक पंडित आज केवल दक्षिण भारत में यत्र-तत्र विद्यमान हैं। उत्तर भारत में (राजस्थान से असम तक) एक भी वैदिक विद्वान नहीं है। वैदिक कुण्डमण्डपाना विधि विधान में निपुण श्रेष्ठ पुरोहित-वर्ग का एवं वेदमूलक विविध शास्त्र दर्शनों के प्रौढ़ पाण्डित्य का स्वराज्यकाल में अस्त हो रहा है।

जिन वेदों का सर्वकाल विलय आज हो रहा है, उसका असाधारण माहात्म्य - (1) अस्य महतो भूतस्य निःश्वसितभू (वृहदारण्यक) अर्थात परमात्मा के निःश्वास (2) सर्वज्ञानमयो हिसः (भगवान मनु) (3) अलौकिक पुरुषार्थोपायः (सायणाचार्य) (4) प्रदीपवत् सर्वार्धावद्योसी सर्वज्ञकल्पः (श्री शंकराचार्य) अर्थात् दीपक के समान सभी दृष्टादृष्ट विषयों को प्रकाशित करने वाला सर्वज्ञानी इत्यादि अनेक प्रशंसामय वचनों में, हमारे पूर्वजों ने अतिश्रद्धा से उद्घोषित किया है। आज वेद वाङ्मय वैदिक पांडित्य एवं वैदिक संस्कार के विषय का दृश्य इस राष्ट्र में हम सर्वत्र देख रहे हैं?

पुराणों के अनुसार प्राचीन युग में भी वेदों का विलय प्रलयपयोधि में हुआ था, तब साक्षात् परमात्मा ने मत्स्यावतार कर या हयग्रीव-अवतार के रूप में वेदोद्धार किया था। साधु-परित्राण और दुष्कृतविनाश के समान, धर्मसंस्थापनार्थ वेदोद्धार भी एक ईश्वरीय कार्य है।

वैदिक ज्ञान-विज्ञान से ही तथाकथित अवैदिक दर्शनों का भी उद्भव एवं विकास, प्रतिक्रिया के रूप में इस हिंदूराष्ट्र में हुआ। जैन सम्प्रदायों में प्रमाणभूत द्वादशागम तथा बौद्ध सम्प्रदायों में प्रमाणभूत त्रिपिटक ग्रंथों का भी महत्व हमारे समग्र राष्ट्रीय विद्या क्षेत्र में स्पृहणीय है। वैदिक आचार्यों के समान "त्रिपिटकाचार्य" बौद्ध तथा जैनागमों के मर्मज्ञ जैनाचार्य आज अत्यअल्पतम हैं।

वेद, जैनागम, त्रिपिटक इन आकार स्वरूप ग्रंथों की श्रवण-मनन निदिध्यासनात्मक साधना के कारण इस देश में एक महनीय तत्वदर्शी महापुरुषों की देदीप्यमान परम्परा यथाकाल उदित हुई, जिसमें वेद व्यास, वैशम्पायन, याज्ञवल्क्य, ऐतरेय महीदास, शाकल्य, पिप्पलाद, श्वेताश्वतर, कात्यायन, शौनक, यास्क, पिंगल, गौतम, कणाद, कपिल, जैमिनी, लग्ध, पाणिनि, पतंजलि, शंकराचार्य, रामानुजाचार्य, मध्वाचार्य, निम्बार्काचार्य, वल्लभाचार्य, सायणाचार्य विद्यारण्य, वाचस्पति मिश्र इत्यादि अनेक वैदिक महापुरुषों के तथा पार्श्वनाथ, महावीर, स्थूलभद्र, भद्रबाहु, उद्योतनभट्ट, जिनकीर्तिसूरि, शुभ श्रलगणि, शांतिसूरि, देवेन्द्रगणी, हरिभद्र सूरि, कुन्दकुन्दाचार्य, उमास्वाती, प्रभाचन्द्र, शुभचन्द्र, देवसेन, आशाधर, मल्लिसेन, धर्मसूरि, दयासागर सूरि, ईश्वरसूरि इत्यादि श्रेष्ठ जैनाचार्यो एवं बुद्धघोष, अश्वघोष, जगदीश काश्यप, मोग्गीपुत्ततिष्य, पाश्विक, वासुमित्र, आचार्य पद्मसंभव, कुमारजित, बुद्धप्पिय, भोग्गलीन इत्यादि सुप्रबुद्ध बौद्ध आचार्यों के नाम चिरस्मरणीय हैं।

भारत के राजकीय इतिहास में कालिपय, विक्रम, शालिवाहन अशोक आदि राजा महाराजाओं की नामावली का जो महत्व है, इससे कई गुना अधिक महत्त्व धार्मिक एवं सांस्कृतिक विद्या के इतिहास में उपरिर्निर्दिष्ट (तथा अनिर्दिष्ट भी) विद्वानों के नामों का है। भारतीय ज्ञानदेवता के सर्वोत्तम अलंकार, ये सारे ज्ञानतपस्वी महापुरुष थे।

इन वरेण्य विद्वर्यो के मनन-निदिध्यासन के फलस्वरूप भारत के दार्शनिक क्षेत्र में कुछ मतमतांतर निर्माण हुए। वैदिक परम्परा में अद्वैतवाद, विशिष्टाद्वैतवाद, द्वैताद्वैतवाद, भेदाभेदवाद, अचिन्त्य भेदाभेदवाद-नामक मतभेदमूलक वाद परम्परा का विकास हुआ। जैन परम्परा में स्याद्‌वाद अनेकान्तवाद, कान्त नित्यवाद, एकान्त अनित्यवाद, रत्नभयवाद, नयवाद, निरीश्वरवाद तथा बौद्ध परम्परा में शाश्वतवाद, अन्तानन्तिकवाद, उच्छेदवाद (इत्यादि गौतम बुद्धकालीन 62 प्रकार के वाद) तथा आर्यसत्यवाद, पंचस्कन्धवाद, वैभाषिक, सौमान्तिक, योगाचार, माध्यमिक इत्यादि मतभेद मूलक विविध वाद, विद्वानों द्वारा प्रतिपादित हुए। इन वादों के अवान्तर भेद भी अनेक हैं। इन सभी वादों में केवल वैचारिक संघर्ष निरन्तर चलता रहा। तत्त्वबोध के लिये पूर्वपक्ष उत्तरपक्ष के शास्त्रार्थ सर्वत्र होते थे, किन्तु सभी गुरुकुलों में सभी मतों के आचार्य, स्नेहभाव से निवास करते थे। बणभट्ट के हर्षचरित में दिवाकर मित्र आचार्य के गुरुकुल का वर्णन, इसका उत्तम निदर्शन है।

विविध मतवादों के कारण वैदिक, जैन, बौद्ध, शैव, वैष्णव इत्यादि प्राचीन तथा सिक्ख, आर्य समाज जैसे आधुनिक सम्प्रदायों में विविध पंथोपपंथ हमारे सामाजिक जीवन में प्रस्थापित हुए। भारत एक धर्मप्राण राष्ट्र है। **वैदिक काल से आज तक अनेकानेक मतसंप्रदाय अन्यान्य प्रदेशों में, कारणवश निर्मण हुए और यथाकाल असंगत भी हुए। यही प्रणाली आगे भी चलती रहेगी। परंतु इस दृश्यमान अनेकता के अंतरंग में एक अद्‌भुत एकता का पुण्य प्रवाह निरंतर अपनी ऊर्जा से अखण्ड प्रवाहित हो रहा है। इस एकता का आकलन होना अत्यन्त आवश्यक है।** यह आंतरिक एकात्मा ही भारत का सत्य और स्वत्व भी है। यही इस सनातन राष्ट्र की प्राणशक्ति है। इसी की आधुनिक संज्ञा है हिन्दुत्व। यही विश्वबंधुता और विश्वशांति का मूलमंत्र है।

इस सनातन शाश्वत एकता को ग्रन्थ द्वारा प्रदर्शित करना एक वाङ्‌मयी राष्ट्रसेवा है। प्रस्तुत

ग्रंथ के विद्वान लेखक, भारतीय संस्कृति संसद के संस्थापक श्री माधोदासजी मूँधड़ा ने इस दिशा में जो प्रयास किया है, उसका मैं अन्तःकरण पूर्वक अभिनन्दन करता हूँ। 160 से अधिक पृष्ठों के इस प्रबन्ध में ईश, केन, कठ आदि 11 उपनिषदों के अन्तरंग का समुचित परिचय (पृष्ठ संख्या 42 तक), पृ. 43 से 74 तक जैन धर्म का अनुशीलन, पृष्ठ 75 से 100 तक शैव धर्म एवं चिन्तन परम्परा और पृष्ठ 101 से 134 तक बौद्ध धर्म दर्शन, इन चार अध्यायों में भारत की आध्यात्मिक विचारधारा के प्रमुख प्रकारों का सर्वकाल परिचय देने का श्लाघ्य यत्न श्री मूँधड़ाजी ने किया है।

इसमें भगवद्भक्ति को पंचमपुरुषार्थ मानने वाले वासुदेव धर्म अथवा वैष्णव सम्प्रदाय का प्रतिपादन करने वाले पांचरात्र संहिता, श्रीमद्भगवद्गीता, श्रीमद्भागवत (चतुर्थ प्रस्थान) जैसे श्रेष्ठ ग्रंथों पर आधारित वैष्णव विचारधारा का संक्षिप्त पिरचय उचित स्वरूप में दिया गया है। दक्षिण भारत के विष्णुचित, कुलशेखर, श्रीनीलन, तिरुप्पन, श्रीमती आंडाल इत्यादि बारह आलवार संतों तथा रामानुज, रामानन्द, मीराबाई, रैदास, नामदेव, ज्ञानेश्वर, तुलसीदास, तुकाराम, समर्थ रामदास, वल्लभाचार्य, नरसी मेहता, चैतन्यमहाप्रभु, मध्वाचार्य इत्याादि श्रीकृष्ण एवं श्री राम के उपासक महापुरुषों और उनके द्वरा प्रवर्तित रुद्रसंप्रदाय, सनकादि सम्प्रदाय, ब्रह्म संप्रदाय, श्रीसंप्रदाय, प्रकाश संप्रदाय, चैतन्य संप्रदाय, स्वरूप संप्रदाय, महानुभाव संप्रदाय आदि वैष्णव पंथोपपंथों का संक्षिप्त परिचय भी आने से प्रतिपाद्य विषय में परिपूर्णता आई है।

पुस्तक के आमुख लेख के रूप में "एक में अनेक" इस विषय पर जो सिद्धान्त प्रतिपादन हुआ है उसी का विवरणभाष्य याने प्रस्तुत अभ्यासपूर्ण प्रबन्ध है। **एक में अनेकता देखना या अनेकता में एकता जानना यही सात्विक ज्ञान है। श्री माधोदासजी मूँधड़ा ने अपने सात्विक ज्ञान का आविष्कार प्रस्तुत प्रबन्ध द्वारा किया है।**

भारतीय तत्वज्ञान एवं धर्म संप्रदायों की शास्त्रीय परिभाषा, आख्यान आदि का परिवादविवर्जित पद्धति से यथोचित ज्ञान देने का श्री मूँधड़ाजी का यह प्रयत्न सर्वथा अभिनन्दनीय है। इस प्रबन्ध का आमुख लिखने का सुअवसर कलकत्ता निवास की अल्पावधि में मुझे मिला, इसका मुझे आनंद है। मैं माधोदासजी मूँधड़ा का पुनः अभिनन्दन करता हूँ।

विनीत,
श्रीधर भाष्कर वर्णेकर, 'प्रज्ञाभारती'
कुलाचार्य
श्री सत्यानन्द महापीठ
यादवपुर, कलकत्ता-700032
श्री सत्यानंद जयंती (दि. 13/2/98)

प्राक्कथन

बीसवीं शती समाप्त हो रही है, इक्कीसवीं शती के स्वर्णिम् विहान की अरुणिमाा क्षितिज पर दृष्टिगोचर हो रही है। यह स्वाभाविक है कि एक शती की परिसमाप्ति और दूसरी के प्रारंभ के संधिकाल में हम आत्म-चिंतन के लिए प्रेरित हों और अपनी अस्मिता, अपनी सांस्कृतिक विरासत, अपने धर्म, दर्शन और अपने देश की एकता और अखण्डता का सिंहावलोकन और नई शती के शुभारंभ के लिए शुभ संकल्प करें। प्रस्तुत ग्रंथ इसी दिशा में किए गए आत्ममंथन के फलस्वरूप प्राप्त नवनीत है।

भारत एक विशाल और समृद्ध राष्ट्र है। प्रकृति ने इसमें छोटे-बड़े अनेक प्रदेश बनाये हैं। प्रत्येक प्रदेश आबोहवा, उपज, खानपान और रहनसहन की दृष्टि से अलग है। ऐसा होते हुए भी, प्रकृतिक दृष्टि से यह विराट राष्ट्र एक इकाई है। उत्तर में हिममंडित नगाधिराज हिमालय अपनी प्रलम्ब भुजाओं को फैलाए रक्षक की तरह खड़ा है। गुजरात जिसकी दाहिनी ओर असम जिसकी वाम भुजा है। पूर्वी और पश्चिमी घाट जिसकी जंघाएँ हैं और हिन्द महासागर जिसके पद निरंतर पखार रहा है। प्रकृति का ऐसा अद्भुत, अपूर्व नमूना हमारा देश है। विश्व कवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने 'नील सिंधु जल धौत चरणतल' कहकर इस देश की वंदना की है। 'समृद्ध अनेकता और उसमें निहित सार्वभौम एकता', यही इस देश की स्थिति है, और नियति भी यही है।

जब मैं इस देश की विविधता और उसमें निहित एकता पर दृष्टिपात करता हूँ तो मुझे लगता है कि यह महान देश मानो प्रकृति की एक प्रयोगशाला है। प्रकृति विविध धर्म, जाति एवं संस्कृति के अनुयायी काले, पीले, गोरे, गेहुएँ लोगों को एक साथ रखकर, गड्ड-मड्ड करके, यह देखना चाहती है कि विविध वंशों, धर्मों व उपासना पद्धतियों को मानने वाले और अलग-अलग भाषाएं बोलने वाले लोग एक होकर, एक साथ रह सकते हैं अथवा नहीं। यह प्रयोग अनादि काल से चला आ रहा है और तब तक चलता रहेगा, जब तक प्रकृति की यह प्रयोगशाला किसी सुनिश्चित परिणाम की ओर न पहुँच जायेगी।

श्री माधोदासजी मूँधड़ा ने भारत में प्रचलित विविध धर्मों, दर्शनों और विचार धाराओं का दोहन करके उनके मूल में स्थित एकता को अपने प्रस्तुत ग्रंथ में उजागर किया है। उन्होंने सोदाहरण, सप्रमाण सिद्ध किया है कि इस देश की मनीषा, चिंतनधारा वैविध्यपूर्ण होते हुए भी एक है। एक ही सत्य को सब धर्म, दर्शन और मनीषी अपने-अपने ढंग से व्याख्यायित कर रहे हैं, 'एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्ति।' (ऋग्वेद 1/164/46)।

भारत भूमि की यह मौलिक एकता देश के नामकरण में भी निहित है। 'भारत वर्ष' नाम एकता सूचक है। यह नाम सूचित करता है कि यह सारा भूखंड एक ही वृष्टि-संस्थान के अंतर्गत है। इस वृहत वर्षणक्षेत्र का नाम ही 'भारत-वर्ष' है। 'भारत' शब्द से एक दूसरा अर्थ भी ध्वनित होता है। 'भारत' में 'भा' का अर्थ है प्रकाश और 'रत' का अर्थ है लीन। अर्थात् यह देश प्रकाश की खोज में लीन मनीषियों का देश है। प्रकाश (तत्त्वज्ञान) की खोज पुराने समय में हमारे ऋषि-मुनि करते थे, आज यह काम हमारे मनीषी, विचारक, चिंतक कर रहे हैं।

श्री माधोदासजी मूँधड़ा भी उन्हीं मनीषियों में से एक हैं। व्यवसाय से उद्योगपति होते हुए, हमारे देश के जिन श्रेष्ठियों ने सरस्वती की सच्चे हृदय से आराधना की है, मूँधड़ा जी उनमें अग्रगण्य हैं। धर्म, दर्शन, कला, साहित्य में उनकी गहरी रुचि है। भारतीय तत्त्वचिंतन के फलस्वरूप सभी धर्मों, दर्शनों के मूल में स्थित जिस सत्य का उन्होंने साक्षात्कार किया, उसी का सुफल यह अद्भुत ग्रंथ है।

मूंधड़ा जी ने इस ग्रंथ को हृदय में कलम डुबोकर लिखा है। इसीलिए यह ग्रंथ प्रत्येक सहृदय पाठक को आन्दोलित करके प्रभावित करता है और यह मानने के लिए बाध्य करता है कि हमारा राष्ट्र युग-युग से एक अखण्ड है, हमारी संस्कृति सदा से सामासिक रही है और हमारे धर्म, दर्शन, उपासना, साहित्य, कला आदि के मूल में भिन्नत्व के बीच अभिन्नत्व और विविधता के बीच ऐसी रहस्यमयी एकता विद्यमान है कि जिसे सारे भेद एक साथ मिल जायें तो भी मिटा नहीं सकते। इस विषय पर यदि

कोई दार्शनिक लिखने बैठता तो यह ग्रंथ शुष्क हो जाता और यदि कोई धर्मगुरु लिखता तो यह ग्रंथ पक्षपातपूर्ण हो जाता। पर एक बहुज्ञ, बहुश्रुत, तटस्थ अध्येता और भावुक भक्त की लेखनी से लिखे जाने के कारण मुझे विश्वास है, यह ग्रंथ विद्वानों और सामान्य पाठकों के लिए समान रूप से उपयोगी सिद्ध होगा।

ऐसा नहीं है कि इस विषय पर तत्त्ववेत्ताओं ने विचार न किया हो। अनेक महत्वपूर्ण ग्रंथ भारतीय धर्म, दर्शन और भारतीय संस्कृति की मूलभूत एकता पर लिखे गए हैं। किंतु वे सब वक्तव्य ही वक्तव्य, तथ्य ही तथ्य हैं, जैसे किसी सूखे फल में बीज ही बीज हों। तथ्यों को मथकर उनमें से सत्य का नवनीत खोज निकालना गूढ़ विषयों पर लिखने वाले लेखकों का प्रतिपाद्य होना चाहिए। संत दादू ने बहुत अच्छा कहा है :

"दादू बकता बहुत हैं, मथकढ़ै ते और।"

बकने वाले तो अनेक हैं, मंथन करके सारतत्त्व को प्रस्तुत करने वाले बिरले ही होते हैं। मंथन का यह दुरूह, दुष्कर, परिश्रम-साध्य कार्य इस ग्रंथ में मूँधड़ा जी ने किया है, इसलिए वे अभिनन्दन के पात्र हैं।

भारतीय धर्म, दर्शन और संस्कृति का चिंतन-मनन श्री मूँधड़ा जी काफी पहले से करते चले आ रहे हैं। उनके सुप्रसिद्ध ग्रंथ "रसौ वै सः" की समीक्षा मैंने 'भाषा-सेतु' पत्रिका के अक्टूबर, 1992 के अंक में की थी। तब मैं उन्हें एक उद्योगपति और 'भारतीय संस्कृति संसद' के संस्थापक के रूप में ही जानता था। उनकी मनीषा और लेखन-क्षमता का पूरा परिचय उस समय मुझे नहीं था। फिर भी मैंने उस ग्रंथ को 'साहित्य संस्कृति और कला का त्रिवेणी संगम' कहा था। उस ग्रंथ को मैंने समीक्षा करते समय तो पढ़ा ही था, उसके बाद भी मैंने बराबर पढ़ा है। मैंने देखा कि भारतीय अध्यात्म, धर्म, दर्शन, साहित्य, संस्कृति, भाषा और कला आदि में उनकी पैठ बहुत गहरी है। अब तो इस ग्रंथ का दूसरा संस्करण भी हो गया है। श्री मूँधड़ा जी का यह दूसरा ग्रंथ 'भारतीय तत्त्वचिंतन' उसी दिशा में एक अगला कदम है। मरजीवे की भाँति ज्ञान के अथाह समुद्र में वे गोते लगाते हैं और हर बार अमूल्य रत्न बटोर कर लाते हैं। और फिर उन्हें सांस्कृतिक सूत्र में पिरोकर लोकहितार्थ लोकार्पित कर देते हैं।

प्रस्तुत ग्रंथ 'भारतीय तत्त्व चिंतन : एक में अनेक' में मूँधड़ा जी के पाँच महत्वपूर्ण आलेख संकलित हैं। आलेखों के विषय हैं : उपनिषद, जैन धर्म, बौद्ध धर्म, शैव धर्म और भागवत धर्म। इन सब लेखों का प्रतिपाद्य यही है कि भारतीय चिंतनधारा का अमूल्य उत्स एक होने के कारण उनका अंतिम निष्कर्ष भी एक ही है। आत्मा अमर है, कर्मबंधन से जन्म-जन्मांतरों के बाद कर्म, ज्ञान, भक्ति योग आदि से कर्मबंधन से मुक्त होकर आत्मा पुनः अपने मूल आनन्द स्वरूप (परमात्म) में लीन होती है। चिंतनधाराओं की इस एकता को दर्शाने के लिए और भारतीय संस्कृति की सामासिकता को प्रतिपादित करने के लिए ग्रंथारंभ में एक आमुख लेख 'एक में अनेक' है। इसमें अनादि काल से चली आ रही भारतीय राष्ट्र की एकता और अखण्डता को सोदाहरण प्रमाणित किया गया है।

आज देश जिस दौर से गुजर रहा है, उसमें सबसे बड़ी आवश्यकता देश की एकता और अखण्डता को बचाये रखने की है। यह कार्य राष्ट्र-प्रेम से ही संभव है। धर्म और धरती के समान, राष्ट्र को एक सूत्र में बाँधकर रखनेवाली कोई दूसरी चीज नहीं है। एक भूमि, एक राष्ट्र, एकजन, यही नव जीवन और नए जमाने का महान सत्य है। ऐक्य का गंगाजल ही आज देश में फैले भाषा, प्रादेशिकता, जातिवाद आदि दोषों का परिहार कर

सकता है। गाँव, जनपद, प्रांत, प्रदेश के हितों को राष्ट्रहित के लिए न्योछावर करने से ही हमारा देश एक अखण्ड और शक्ति-संपन्न राष्ट्र बन सकता है। यह महती भावना श्री माधोदासजी मूँधड़ा का यह ग्रंथ उत्पन्न करता है, इसलिए मैं इस ग्रंथ के प्रणयन के लिए उनका अभिनन्दन करता हूँ।

अथर्व वेद के पृथ्वी सूक्त के जिस मंत्र (जनं विभ्रती बहुधा विवाचसम्) को श्री मूँधड़ा जी ने ग्रंथ में उद्धृत किया है, उसी के हिन्दी भावानुवाद से मैं इस प्राक्कथन को समाप्त करना चााहूँगा।

'धारण करती है यह पृथ्वी
अनेक भाषा भाषियों को,
अनेक धर्मावलंबियों को,
किंतु, अलग-अलग होते हुए भी
वे बँधे रहते हैं एक सूत्र में
मात्रा-पुत्र वत्!
और धरती, धर्म-धेनुसी
पोषित करती है
उन अनेकों को एक समान।'

अथर्ववेद (12/1/45)

मुझे विश्वास है कि राष्ट्रीय एकान्विति के इस बोधवर्धक ग्रंथ का हिन्दी जगत में यथोचित स्वागत होगा।

- डॉ. अम्बाशंकर नागर
अध्यक्ष-गुजरात राज्य हिन्दी अकादमी
संपादक-भाषा सेतु
अहमदाबाद, (09.04.1998)

प्रस्तावना

भारत प्राचीन राष्ट्र है और प्राचीन हैं इसकी सांस्कृतिक परंपराएं, जो इसे वैदिक काल से अमूल्य धरोहर के रूप में प्राप्त हैं। यह सांस्कृतिक चेतना अन्तःसलिला की तरह शताब्दियों से अविरल रूप से प्रवाहमान है। उत्तरोत्तर प्रसार करती हुई यह लोक मानस को प्रेरित और प्रभावित करती है। जन-जन की जीवन प्रणाली निर्माण करते हुए सुसंस्कृत बनाती है, और समस्त राष्ट्र को एक सूत्र में बाँधती है। राष्ट्र मात्र भौगोलिक क्षेत्रफल से नहीं नापा जाता। वस्तव में वही समर्थ राष्ट्र है जिसका धर्म, दर्शन, साहित्य, भाषा एवं ललित-कलाएं प्रमुख रूप से एक हों। भारत एक ऐसा महान देश है जिसमें विभिन्नता प्रचुर मात्रा में दृष्टिगत होती है फिर भी मूल संस्कृति एक होने के कारण वह सुदृढ़ राष्ट्र है। भाषायी विभिन्नता होने पर भी संस्कृत सभी भाषाओं का स्रोत होने के कारण भारतीय भाषाएँ परस्पर जुड़ी हुई हैं। एक भाषा में लिखे हुए पदों को अन्य भाषा-भाषी बड़े स्नेह एवं भाव विभोर होकर गाते हैं। अतः विभिन्नता में एकता या यूँ कहें "एक में अनेक" की अनुभूति हमें निरंतर होती रहती है। यह तो हमारा स्वभाव ही बन गया है। यह तो राष्ट्रीय चरित्र ही है।

विभिन्नता के मध्य प्रतीत होने वाली एकता सर्वत्र विद्यमान है। हमारे दर्शन एवं चिंतन में यह स्पष्ट रूप से विद्यमान है। यह विशिष्टता हमारी सांस्कृतिक वरीयता की द्योतक भी है। अनेक विचारकों, विद्वद्जनों द्वारा प्रतिपादित अनेक संप्रदाय, अनेक मतमतान्तरों के होते हुए भी चिन्तन धारा का उत्स एक होने के कारण अंतिम निष्कर्ष एक ही है। आत्मा दिव्य, अजर, अमर एवं नित्य शुद्ध बुद्ध और प्रबुद्ध है। कर्मों के फलों से पुनर्जन्म बारबार होता रहता है। कर्म बन्धनों से मुक्त होने पर आत्मा पुनः अपने आनंद स्वरूप में प्रतिष्ठित हो जाती है, यही मोक्ष है। यही अपने स्वरूप में स्थित होकर पुनर्जन्म की शृंखला से छुटकारा पाना है, यही है जीवन का उच्च अंतिम लक्ष्य। यही स्थितप्रज्ञ स्थिति है। भारत के सभी धर्म

इसे स्वीकार करते हैं। कर्म और पुनर्जन्म की कथाएं आती हैं। जातक कथाओं में बुद्ध की एवं जैन आगमों में जैन सिद्धों एवं तीर्थंकरों के पूर्व जन्मों की कथाएं आती हैं। इस स्थिति को प्राप्त करने का साधन मार्ग त्याग, तपश्चर्या एवं यम-नियम पालन करते हुए वीतराग होकर द्वन्द्वातीत स्थिति प्राप्त करना है। इसके लिए शुद्ध एवं नैतिक आचरण अनिवार्य है। यह ज्ञान, धर्म, भक्ति एवं योग से प्राप्त होता है। इसका विपुल वर्णन भक्तों एवं मनीषियों ने किया है जिसका विहंगम दर्शन इस पुस्तक में प्रस्तुत है। **सर्वत्र व्याप्त अनेकता, एकता में ही समाहित है। यह एकता जन-जीवन में इतना घुलमिल गयी है कि यह भारतीय अस्मिता का निगूढ़ धन ही है जिसने भारत जैसे विशाल राष्ट्र को अखण्डता एवं एकरूपता प्रदान की है।** यह मात्र प्रवचनों एवं बौद्धिकता से प्राप्त नहीं हुई है। हमारे मनीषी महात्मा जन-जन के मध्य विचरण करते हुए तत्त्वज्ञान का प्रचार करते थे और आज भी करते हैं। इसी ऋषि परम्परा का परिणाम है कि हम सब बौद्धिक स्तर पर, संवेदन के स्तर पर, आध्यात्मिक स्तर पर एक हैं। यह एकत्व भारत की मूल प्रकृति है जिसमें अनेकत्व समाहित है। यही हमारी अखण्ड राष्ट्रीय चेतना का रहस्य है "एक में अनेक"। प्रस्तुत पुस्तक में दर्शन संबंधी लेख समन्वित हैं।

मैं दार्शनिक नहीं हूँ और न मेरी भारतीय दर्शन के अनुशीलन में विशेष गति है, फिर भी समय-समय पर विद्वानों के साथ किए हुए वार्तालाप, कतिपय पुस्तकों का सहारा लेते हुए जितना मैं समझ पाया उसी के आधार पर ये लेख प्रस्तुत हैं। इनमें यत्र-तत्र त्रुटियाँ होनी स्वाभाविक है, उनके लिए 'क्षमस्व'।

इस पुस्तक के सभी लेखों में कविवर साहित्य मनीषी श्री कन्हैयालालजी सेठिया ने एक-एक लाइन गंभीरता पूर्वक पढ़कर उनमें यथा-स्थान संशोधन एवं परिमार्जन भी किया। इस कार्य के लिए वे मुझे सदा उत्साहित करते रहते हैं। मैं उनका हृदय से आभारी हूँ। भाई जयकिशनदासजी सादानी के सहयोग के बिना यह कार्य मेरे लिए संभव नहीं हो पाता। उन्होंने कुशलता से सारे लेखों को सम्पादित किया। आदरणीय प्रो. कल्याणमलजी लोढ़ा ने सभी लेखों को पढ़कर सुझाव दिए जिनसे ये लेख पुष्ट हुए हैं। पण्डित अक्षयचंद्रजी शर्मा तो हमारे पारिवारिक गुरु हैं। इनका परामर्श सदा प्राप्त होता है जो इन लेखों में अत्यन्त उपयोगी रहा है। दार्शनिक एवं दर्शन शास्त्र के प्राध्यापक डॉ. केदारनाथजी मिश्र ने जैन धर्म एवं बौद्ध धर्म के लेखों को न केवल पढ़ा अपितु विपुल सुझाव दिए व सामग्री प्रदान की। इन सभी महानुभावों का मैं आभारी हूँ जिन्होंने अपने बहुमूल्य सुझावों द्वरा मेरा मार्ग प्रशस्त किया है। यह पुस्तक उसीकी परिणति है। प्रज्ञाभारती विद्वदवर्य आदरणीय डॉ. श्रीधर भास्कर वर्णेकरजी का मैं आभारी हूँ, जिन्होंने आमुख लिखकर मुझे कृतार्थ किया है।

गुजरात राज्य हिन्दी अकादमी के अध्यक्ष आचार्य डॉ. अम्बाशंकरजी नागर का आभारी हूँ जिन्होंने प्राक्कथन लिखने की कृपा की है।

भारतीय धर्म, दर्शन, संस्कृति पर अनेक विशिष्ट ग्रंथ लिखे गये हैं, जो विषय की दुरूहता के कारण आम पाठक के लिए सहज ग्राह्य नहीं होते। अतः भारतीय तत्त्व चिन्तन में प्राप्त "एक में अनेक" दृष्टि को पाँच निबन्धों में पिरोया गया है। भाषा सहज होने के कारण सर्व जन ग्राह्य होगी। विषय की जटिलता के कारण पारिभाषिक शब्दों का यथावत उल्लेख किया है, लेकिन उनका सहज अर्थ भी साथ में दिया है। विश्वास है, पाठकगण इसे उपयोगी पाएँगे।

- माधोदास मूँधड़ा

सुखी जीवन (1999)

(द्वि. सं. 2013, तृ. सं 2015)

(अंग्रेजी, गुजराती, बंगला, तमिल, कन्नड़ में अनूदित)

पुरोवाक्

(प्रथम संस्करण)

मानवीय संवेदना के जीवन्त प्रतीक श्री माधोदास मूँधड़ा की कृति **'सुखी जीवन'** उनके संयत जीवन के अनुभवों की निष्पत्ति है। इस लघुकाय पुस्तिका में जो कुछ छपा है, वह मनुष्य को परिवार और समाज से अलग पड़ जाने की दुखद स्थिति से बचाता है। आज पश्चिमी अपसंस्कृति के कारण संयुक्त परिवार और सामाजिक नैतिक नियमों के अवमूल्यन ने व्यक्ति को देह-केन्द्रित बना दिया है। सृष्टि में ऐसा कोई प्राणी नहीं है जो सुख नहीं चाहता हो, पर चाहने पर कोई सुखी नहीं बन सकता। मनुष्य को सुखी बनने के लिए अपने मन, वचन और कर्म को अनुशासित करना होगा। सृष्टि में मनुष्य को छोड़कर ऐसा कोई थलचर, नभचर, जलचर और उद्‌भिज प्राणी नहीं है जिसके मन हो। मन नहीं होने के कारण उन्हें स्वयं को अपने होने का बोध नहीं है, क्योंकि ये सब अमन हैं। मनुष्य की उत्पत्ति मनसे होने के कारण उसकी संज्ञा मनुष्य है।

जिजीविषा से भिन्न मनु को स्वयं का अभिबोध।। (स्वागत)

अन्य जीवों से अलग मनुष्य को स्वयं के होने का ज्ञान होता है। मनुष्य के अतिरिक्त जो भी देहधारी चेतन हैं वे-- अपनी मूल वृत्ति से प्रेरित होकर क्रिया करते हैं। इस मूल प्रवृत्ति के अन्तर्गत मनुष्य ने आहार, निद्रा, भय और मैथुन को माना है, पर चेतनाधारी पशु आदि इस मूल प्रवृत्ति को नहीं जानते क्योंकि वे अमन हैं। मनुष्य की तरह वे सोच विचार नहीं कर सकते, पर उनके सुख-दु:ख को मनुष्य जान सकता है। जो अमन प्राणी हैं वे जीवन मरण को भी नहीं जानते। जैसे किसी गोवत्स के मर जाने पर गो की आँखों से अश्रु झरते हुए हम देख सकते हैं। पर, गो स्वयं नहीं जानती कि वह रो रही है, या रोना क्या होता है? बादल की गर्जन सुनकर सिंह दहाड़ता है, पर वह नहीं जानता कि यह बादल की गर्जना क्या है और वह क्यों दहाड़ता है? वैसे ही अमन प्राणी कोयल बसन्त आते ही पंचम स्वर में गाती है, सावन आने पर मयूर नृत्य करते हैं पर इन क्रियाओं के मूल में नैसर्गिक वृत्ति ही है। जबकि मनुष्य मन के कारण ही जीवन, मरण, राग, द्वेष, तृष्णा, अबाध भोग, हठधर्मिता, अहंकार, परदोष दर्शन, स्वस्तुति करता है। वैसे ही वह मन से चाहे तो दुर्गुणों से बच सकता है, अगर वह अपनी बुद्धि को विवेक से संचालित करता है।

पूज्य भाईजी श्री माधोदासजी से प्रायः तीस वर्ष से मेरा घनिष्ठ सम्बन्ध है। वे प्रतिक्षण दृष्टि संयम, वाक् संयम और श्रुत संयम के प्रति जागरूक रहते हैं। पर मेरा मानना है कि यह सब उनके पूर्व जन्मों में किये गये पुण्य कर्मों की ही अभिव्यक्ति है। जिन्होंने पूर्व जन्मों में घातक कर्म किये हैं वे सब असत् से प्रेरित होकर कर्म करते हैं, भले ही उन्हें शास्त्रों का ज्ञान हो या उन्होंने संतों की वाणियाँ सुनी हों, पर वे अपने मन का परिमार्जन नहीं कर सकते। जैसे चिकने घड़े पर बूँद नहीं ठहरती, उसी तरह उन पर सत् उपदेशों का कोई प्रभाव नहीं पड़ता। जैसे अन्धे मनुष्यों के सामने ज्योतित दीप रख दिया जाय पर वे उसके प्रकाश को नहीं देख सकते। ऐसे व्यक्ति जब किसी सुन्दर वस्तु को देखते हैं तो वे उसका उपभोग करने के लिए व्यग्र हो जाते हैं और सुन्दर के पहले के दो शब्दों सत्यम्-शिवम् को विस्मृत कर देते हैं। इसका कारण यह है कि उनकी दृष्टि में संयम नहीं है, वैसे ही जब वे बोलते हैं तो उनके बोलने में वाक्-संयम नहीं होता। उनकी आत्मा पाप कर्मों से आछन्न है, इस कारण वे सत पथ पर नहीं चल सकते।

हुवै न सत री परम्परा सत अन्तस रो बोध
पीढ़ी चालै असत् री तत नै समझ अबोध।।

(सतवाणी)

सत्य की परम्परा नहीं होती, उसका तो अन्तःकरण में बोध (अभिज्ञान) होता है।

मैंने पूज्य भाईजी में जो निरपेक्ष भाव देखा है वह विरले व्यक्तियों में ही होता है। वे जैसे अर्जन करते हैं, वैसे ही बिना किसी अपेक्षा के विसर्जन भी करते हैं। वे जो कुछ भी करते हैं उसे अपना कर्त्तव्य मानकर करते हैं। भाईजी अपनी प्रशंसा सुनकर न तो आह्लादित होते हैं और न निन्दा सुनकर उद्वेलित होते हैं। यह उनका श्रुत संयम है। वे सदैव ही समभाव में रहते हैं। उन्हें अपनी किसी भी उपलब्धि का श्रेय लेने का मोह नहीं है। भाईजी का दृष्टि संयम उन्हें स्थूल से सूक्ष्म की ओर ले जाता है जो उर्ध्वगमन की मधुमति भूमिका है। भाईजी के सौन्दर्य बोध के साथ सत्यम् शिवम् की अन्विति है। श्रुत संयम उनकी आत्म-चेतना से जुड़ा हुआ है। इस पुस्तिका में अठारह निबन्धों के माध्यम से उनके द्वारा व्यावहारिक जीवन को सुखमय बनाने के लिए अत्यंत महत्त्वपूर्ण दिशा निर्देश हुआ है। इससे मर्मज्ञ पाठक निश्चित रूप से सुखानुभूति करेंगे, ऐसी मेरी मान्यता है।

- कन्हैयालाल सेठिया (पद्मश्री)
6, आशुतोष मुखर्जी रोड, कोलकाता - 20

प्रस्तावना

(प्रथम संस्करण)

आदरणीय माधोदासजी मूँधड़ा अत्यन्त सांस्कृतिक पुरुष थे। जीवन के हर क्षेत्र में उनका सराहनीय सहयोग रहा है। कुशल उद्योगपति होने साथ-साथ उनका भारतीय संस्कृति से घनिष्ठ संबंध था। धर्म, दर्शन, ललित कलायें, शिक्षा, शोध कार्य, समाज सेवा, चिकित्सा आदि से संबंधित सभी संस्थाओं में उनका महत्त्वपूर्ण योगदान है। उनके प्रकाशित ग्रंथ **'रसो वै सः'** एवं **'भारतीय तत्त्व चिन्तन- एक में अनेक'** में उनका सांस्कृतिक चिन्तन अभिव्यक्त हुआ है। उनकी अंतिम कृति **'सुखी जीवन'** में उनके जीवन-दर्शन के व्यावहारिक स्वरूप का दिग्दर्शन हुआ है। बड़े दुःख के साथ लिखना पड़ रहा है कि इसके प्रकाशन की अवधि में ही उनका स्वर्गवास 1 अप्रैल 1999 को हो गया। उनके अवसान से हमारे सांस्कृतिक जीवन में ऐसी रिक्तता आ गई है कि जिसकी संपूर्ति कभी नहीं हो सकती। सांस्कृतिक गतिविधियों को

वे सदैव ही प्रोत्साहित करते थे। अनेक संस्थाओं की उन्होंने स्थापना की जिनकी सेवाएं आज अक्षुण्ण रूप से सभी लोगों को सुलभ हैं।

उनकी अंतिम कृति **'सुखी जीवन'** हम पाठकों के समक्ष प्रस्तुत कर रहे हैं। मानव मात्र में सुख की प्राप्ति एवं दुःख से निवृत्ति की आकांक्षा सदा बनी रहती है। इस विषय के विभिन्न पहलुओं पर चिन्तन करते हुए आदरणीय माधोदासजी ने अठारह निबंधों के माध्यम से अपने विचारों को अभिव्यक्त किया है, जो हमारे दैनिक जीवन के लिए अत्यन्त ही महत्वपूर्ण हैं। हमारा विश्वास है कि उनको आत्मसात् करने एवं जीवन में व्यावहारिक रूप देने से हम निश्चित ही सुखी जीवन की ओर अग्रसर होंगे। इनमें उच्च आदर्शों के साथ-साथ मृदुल व्यवहार इतना घुल मिल गया है कि पुस्तक सभी के लिए एक सुन्दर **मार्गदर्शिका** बन सकती है।

पाठकगण इसका निश्चित रूप से लाभ उठायेंगे, इससे भारतीय संस्कृति के प्रति उनका अनुराग सदा संवर्धित होगा।

- जयकिशनदास सादानी
17, शेक्सपियर सरणी, कोलकाता-700 071

आत्म-निवेदन
(प्रथम संस्करण)

मनुष्य की सारी प्रवृत्ति सुख प्राप्त करने की ओर लगी रहती है। प्रत्येक प्राणी की यह स्वाभाविक आकांक्षा रहती है कि उसके जीवन में सुख की निरन्तर वृद्धि और दुःख की निवृत्ति हो। परिणामतः वह जीवन में भौतिक सुख समृद्धि के लिए प्रयास करता है, किन्तु जीवन में दुःख को नकारा नहीं जा सकता। व्यावहारिक जीवन में सुख-दुःख का कालचक्र सदा चलता ही रहता है। फिर भी कुछ प्रश्न मन में उभरते रहते हैं--

(1) किस मार्ग पर चलने से जीवन सुखी हो सकता है? (2) सच्चा एवं नित्य सुख क्या है? (3) सुख कैसे प्राप्त किया जा सकता है? यह जिज्ञासा मन में सदा बनी रहती है। प्रज्ञावान ऋषियों ने अपने चिन्तन के द्वारा सुखमय जीवन व्यतीत करने हेतु सैद्धान्तिक दृष्टिकोण से कतिपय आचार संहिताएं निर्दिष्ट की हैं जिनका अनुसरण कर मनुष्य उन्हें अपने जीवन में अपनाकर निःसन्देह जीवन को सुखी एवं समृद्धिशाली बना सकते हैं। जीवन में अनुकूलता तो सदैव नहीं रहती। प्रतिकूलता कब आ जायेगी यह भी हम नहीं जानते। ऐसी स्थिति में सात्विक सद्गुणों के समावेश और परस्पर कौटुम्बिक भावना के साथ मैत्रीपूर्ण सद्वृत्तियों की तरफ निरन्तर अग्रसर होकर ही हम नित्य सुख में प्रवेश कर सकते हैं।

प्रत्येक मनुष्य अपने सुख-दुःख का कारण स्वयं ही है। इसके लिए दूसरे को उत्तरदायी समझना अज्ञान है। मनुष्य जैसा कर्म करता है, वैसा ही फल उसे भोगना पड़ता है, इस जगत का शाश्वत नियम यही है। हमें अपनी प्रवृत्ति को सत्कर्मों, श्रेष्ठ कार्यों की ओर लगाना चाहिए। क्योंकि सांसारिक स्थितियों में जीवन का कर्म के साथ अटूट संबंध है। वर्तमान स्थिति के कर्मों के साथ ही उनके परिणाम अवश्यंभावी हैं। जीवन के सुविकास व सम्पूर्णता के लिए आध्यत्मिक एवं भौतिक दोनों स्तर पर प्रगति होनी चाहिए।

जीवन को सुखमय बनाने के लिए विविध चिन्तन धाराओं को इस पुस्तिका में अठारह निबंधों के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है। जीवन में सुख-दुःख के अनेक प्रसंग धूप और छांव की तरह आया-जाया करते हैं। उनमें सामंजस्य स्थापित करने से जीवन में सुख एवं शान्ति का संचार होता है। हमारे

व्यावहारिक जीवन में कई जटिल समस्याएं चुनौती के रूप में उभरकर आती हैं, उन सबका सहृदयता एवं सहिष्णुता से समाधान किया जा सकता है। सौमनस्य की उर्वर भूमि पर ही सुखी जीवन अंकुरित, पल्लवित, पुष्पित एवं फलित होता है।

'सुखी जीवन' पाठकों के हाथ में रखते हुए मुझे विशेष प्रसन्नता हो रही है। पुस्तक में वर्णित लेखमाला आध्यात्मिक साहित्य के अनुशीलन के आधार पर तैयार की गई है। पुस्तक के लेखों का संपादन भाई श्री जयकिशनदासजी सादानी ने अत्यन्त ही मनोयोग से किया, इसके लिए मैं उनका आभारी हूँ। आदरणीय प्रो. कल्याणलजी लोढ़ा एवं पं. अक्षयचन्द्रजी शर्मा ने पुस्तक की पाण्डुलिपि को अक्षरसः पढ़कर दिये गये उनके सुचिन्तित सुझावों को पाकर मैं निश्चय ही लाभान्वित हुआ हूँ। एतदर्थ मैं इन्हें धन्यवाद ज्ञापित करता हूँ। साहित्य मनीषी श्री कन्हैयालाल जी सेठिया ने पुस्तक की इतनी सारगर्भित भूमिका लिखकर मुझे उपकृत किया है, इसके लिए मैं उनका हृदय से आभारी हूँ। आज के संक्रामक समय के तनावों के मध्य यह पुस्तक जन-जन के लिए, विशेष कर युवा पीढ़ी को सुख एवं शान्ति की दिशा की ओर यदि किंचित मात्र भी प्रोत्साहित करे तो मैं अपना प्रयास सार्थक मानूँगा। मानव मात्र का जीवन सुखी एवं मंगलमय हो, यही प्रभु से प्रार्थना है।

- माधोदास मूँधड़ा

126, साउदर्न एवेन्यू, कोलकाता - 700 029

प्राक्कथन

(तृतीय संस्करण)

मैंने श्रेद्धेय श्री माधोदास मूँधड़ा विरचित कृति **'सुखी जीवन'** का आद्यन्त पारायण किया। इसमें अट्ठारह निबन्धों के माध्यम से मानव अपने जीवन को किस प्रकार सुखी बना सकता है, इसके उपाय बताए हैं।

मूलभूत तथ्य यह है कि अपने को सुखी या दुःखी बनाना मनुष्य के अपने हाथ में है। बचपन में कभी एक पहानी पढ़ी थी। एक साधु एक गाँव में रहता था। वह अपने हाथ से पकाता खाता था। एक दिन उसने भोजन बनाया। अपने गाँव के दो लोगों को उसने खाने पर निमन्त्रित किया। दाल, चावल, साग-सब्जी उसने बनाये, चटनी भी बनाई। जब भोजन परोसने लगे तो और चीजें उसने बराबर-बराबर दोनों को दीं पर चटनी में भेदभाव कर दिया। एक को चटनी दी और और दूसरे को नहीं दी। दूसरा सोचता कि उसे चटनी क्यों नहीं दी गई। पर वह कुछ बोला नहीं। दूसरा चटनी का स्वाद ले रहा था, उसने और मांगी। उसे और भी दे दी गई। इधर पहला जलभुन कर खाक हो रहा था। जब भोजन समाप्त होने को था तो उससे रहा न गया। वह साधु से बोला कि उसने उसे चटनी क्यों नहीं दी। साधु बोला- अच्छा, तुम्हें लेनी है। उसने उसे चटनी परोस दी। जैसे ही उसने उसे मुँह में रखा वह उसे सहन न कर सका और उसे थूक दिया। चटनी नीम के पत्तों की थी। उसे समझ नहीं आया कि कैसे उसका साथी उसे खा रहा है और उसे स्वाद आ रहा है। साधु ने उससे कहा कि मन की बात है। कड़वाहट में भी स्वाद का अनुभव हो सकता है। यही सकारात्मक प्रवृत्ति है।

मन की सकारात्मक प्रवृत्ति मनुष्य को दुःख में भी सुख का बोध करा सकती है। सब कुछ मन के हाथ में है। इसीलिए प्रार्थना की गई--**तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु।** मेरा मन सत्संकल्पयुक्त हो, उसमें अच्छे विचार आयें। मन ही मनुष्यों के बन्धन और मोक्ष (मुक्ति) का कारण है-- **मन एव**

मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयोः। इसी मन में मित्रता, परोपकार, ऋजुता, दया आदि भावों का भी उदय हो सकता है और इसी मन में ईर्ष्या, द्वेष, हिंसा आदि भावों का भी। इसीलिए मन की प्रवृत्ति ठीक रखने पर शास्त्रों ने बल दिया है। एक मात्र उपाय इसका उन्होंने धर्म बतलाया है। धर्म का अभिप्राय किसी सम्प्रदाय, मत या कर्मकाण्ड से नहीं है अपितु उस गुण-समुदाय से है जिस पर सब कुछ टिका है- -**धारणाद्धर्मं इत्याहुर्धर्मो धारयते प्रजाः।** इसके धृति (धैर्य), क्षमा आदि दस लक्षण (पहचान के चिह्न) बतलाये गये हैं। इनमें भी प्रमुखता के आधार पर संक्षेप कर पाँच को अत्यावश्यक माना गया है-

अहिंसा सत्यमस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
एतं सामाजिकं धर्मं चातुर्वर्ण्ये-ऽब्रवीन्मनुः।।

मनु महाराज ने चारों वर्णों के लिए संक्षेप में (सामाजिक) धर्म के पाँच तत्त्व बतलाये हैं-- अहिंसा, सच बोलना (सत्य), चोरी न करना (अस्तेय), मन, वचन और शरीर की पवित्रता (शौच) और इन्द्रियसंयम (इन्द्रिय निग्रह)। आगे संक्षेप में इन सभी को एक ही गुण में समेट दिया गया-

श्रूयतां धर्मसर्वस्वं श्रुत्वा चैवावधार्यताम्।
आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्।।

"धर्म का सार क्या है, इसे सुनिये और सुनकर मन में रख लीजिए। जो चीज अपने को अच्छी नहीं लगती उसे दूसरों के साथ मत कीजिये।"

बस इतना ही धर्म है। इसका पालन कीजिये। जीवन सुखी हो जायेगा। कोई व्यक्ति आप का अपमान करता है, क्रोध में आकर आपके बारे में कुवाच्य बोलता है, आपको ठगता है, आपके सामने अकड़ता है, ईर्ष्या द्वेष के वशीभूत हो आपको हानि पहुंचाने में लगा रहता है, इससे आपका मन दुखता है। जो वह करता है वह आप मत कीजिए। यदि प्रत्येक व्यक्ति इस पर आचरण करने लगेगा तो समाज में वैर, वैमनस्य, विरोध शान्त हो जायेंगे और इसके साथ ही दूर हो जाएगा दुःख भी। दुःख का अभाव ही सुख है।

जो दूसरों को दुःख पहुँचाता है वह कभी सुखी नहीं रह सकता। दूसरों के सुख में ही अपना सुख है। **परहितं स्वश्रेयसे,** दूसरे के कल्याण में अपना कल्याण है।

अपनी अद्वितीय कृति में श्री माधोदास मूँधड़ा ने उन जीवन मूल्यों को रेखांकित किया है जिन्हें अपनाने से मनुष्य उन सब कुप्रवृत्तियों से, जिन्हें जैन दर्शन में कषाय कहा गया है, दूर रह कर स्वयं भी सुख पाता है और दूसरों को भी सुख देता है। इन जीवन मूल्यों की उन्होंने बहुत सरल-सरस व्याख्या की है। आज जीवन मूल्यों का ह्रास दिखाई दे रहा है, तब उनकी पुनः स्थापना पर बल देने वाली प्रस्तुत कृति की कितनी आवश्यकता है, यह कहने की आवश्यकता नहीं है। इस अमूल्य कृति क जन-जन तक पहुँचना समय की माँग है।

'भारतीय विद्या मन्दिर' का निर्णय, इसका अंग्रेजी एवं अन्य भाषाओं में रूपान्तरण स्वागत योग्य है। इस निर्णय के अन्तर्गत इसका अंग्रेजी अनुवाद प्रकाशित हो रहा है। इन अनुवादों के माध्यम से अहिन्दी भाषी भी इसका लाभ उठा सकेंगे।

- डॉ. सत्यव्रत शास्त्री (पद्मभूषण)
सम्प्रति- अध्यक्ष, संस्कृत आयोग,
भारत सरकार, सी-248, डिफेंस कॉलोनी,
नई दिल्ली-110024
दि. 24 जनवरी, 2015

पृष्ठ 10 से क्रमशः.....सम्पादकीय का शेष

राजस्थान दिवस (30 मार्च) पर हार्दिक शुभकामनाएं

तथा पश्चिम में पाकिस्तान से 1070 किमी. लगती हैं। भौगोलिक दृष्टि से राजस्थान में थार का मरुस्थल और विश्व की प्राचीनतम पर्वत श्रेणी अरावली उल्लेखनीय हैं। उक्त सातों चरणों में से चौथे चरण वृहद राजस्थान के गठन की तिथि 30 मार्च 1949 को राजस्थान के स्थापना दिवस के रूप में मनाया जाता है।

'राजस्थान' के गठन में शामिल उक्त रियासतों की अपनी-अपनी शौर्य-गाथाएं हैं, परन्तु इनमें से **सर्वाधिक माननीय सिरमोर रियासत** थी राजस्थान के दक्षिण में स्थित **मेवाड़** जिसकी राजधानी चित्तौड़ थी जो बाद में उदयपुर हो गई। यह राजस्थान की पूर्व रियासतों में से एकमात्र रियासत है जिसका उज्ज्वल इतिहास आज समस्त राजस्थान, राजस्थानियों को गरिमामंडित किए हुए है। मेवाड़ के **राणा कुंभा** (1433-1468), **राणा सांगा** (1509-1527), **राणा प्रताप** (1572-1597) जैसे प्रतापी शासकों का शौर्य, उनकी आन-बान व मर्यादा-निष्ठा समस्त राजस्थान ही नहीं देश के लिए गर्व-गरिमा का विषय है। प्रातःस्मरणीय राणा प्रताप ने अपने स्वाभिमान, स्वातंत्र्य एवं मर्यादा रक्षण के लिए जो शौर्य दिखाया, जो कष्ट सहे और त्याग किया, उसे लेकर तो हिन्दी, राजस्थानी, बांग्ला, असमिया, तमिल आदि में शताधिक काव्यों, कहानियों, नाटकों, उपन्यासों की रचना हुई। संभवतः किसी ऐतिहासिक महापुरुष को लेकर रचित ग्रंथों की यह संख्या सर्वाधिक है। **राणा प्रताप** आज लोकपूज्य होकर राजस्थान के आईकॉन तथा **राष्ट्र गौरव** हैं।

चित्तौड़ के रावल रत्नसिंह अथवा रत्नसेन (1302-1303) की **रानी पद्मावती** आज लोकपूज्य हैं जिसने आततायी अल्लाउद्दीन खिलजी से अपनी रक्षा के लिए सैकड़ों राजपूत स्त्रियों सहित अग्निस्नान कर जौहर किया जो विश्व इतिहास में एक अद्‌भुत रोमांचकारी उदाहरण है। रानी पद्मावती को लेकर मोहम्मद मलिक जायसी द्वारा रचित महाकाव्य 'पद्मावत' प्रसिद्ध है।

ऐसा ही रोमांचकारी उदाहरण है चित्तौड़ की **पन्नाधाय** द्वारा अपने पुत्र चंदन के बलिदान की घटना जो इस प्रकार है-- राणा सांगा (1509-1527) के चार पुत्रों में से ज्येष्ठ पुत्र भोजराज (मीरां के पति) का देहांत राणा सांगा के रहते ही, बीमारी से हो गया था। आक्रमणकारी बाबर से आगरा के पास खानवा के मैदान में हुए युद्ध में बाबरी सेना की तोपों के सामने मेवाड़ी सेना को पीछे हटना पड़ा, परन्तु बाबर भी युद्ध में मेवाड़ी सेना का शौर्य देखने के बाद आगे नहीं बढ़कर वापस दिल्ली लौट गया। इस युद्ध में राणा सांगा के वीरगति प्राप्त कर लेने पर उनका दूसरा पुत्र रत्नसिंह (1528-1531) मेवाड़ के सिंहासन पर बैठा। राणा रत्नसिंह की मृत्यु निस्संतान ही हो जाने पर, राणा सांगा का तीसरा पुत्र विक्रमादित्य (1531-1536) राणा बना। यह मूढ़, अहंकारी और अयोग्य शासक था। इसी के शासनकाल में गुजरात के बादशाह ने मेवाड़ पर आक्रमण कर मेवाड़ को बहुत क्षति पहुंचाई और इससे अपनी रक्षा के लिए रानी कर्मावती ने 13 सौ महिलाओं के साथ अग्निस्नान कर जौहर किया। इसी राणा विक्रमादित्य ने मीरांबाई को बहुत कष्ट दिए जिससे वह चित्तौड़ छोड़कर अपने पीहर मेड़ता चली गई थी। राणा सांगा के पिता राणा रायसिंह से एक दासी से उत्पन्न पुत्र बनवीर ने राणा विक्रमादित्य का वध कर चित्तौड़ दखल कर लिया। अब वह राणा सांगा के चौथे पुत्र और चित्तौड़ के शेष बचे एकमात्र उत्तराधिकारी 6-7 वर्षीय बालक उदयसिंह का वध करने उसकी गुर्जर जातीय धाय माँ पन्ना के कक्ष में गया। कक्ष में उदयसिंह और उसका समवयस्क पन्ना का पुत्र चंदन सोये हुए थे।

रक्तसनी तलवार लिए बनबीर ने गरज कर पूछा, इन दोनों में से उदयसिंह कौन-सा है। तब तक पन्ना ने ममता और कर्त्तव्य में से कर्त्तव्य को चुन लिया था, **उसने अपने पुत्र चन्दन की ओर इशारा कर दिया। तलवार चली और खच से बालक चन्दन का सिर धड़ से अलग** कर बनबीर चला गया। माँ ने चन्दन पर पथरायी नजर डाली और तुरन्त उदयसिंह को गोद में लेकर चित्तौड़ से निकल कर घोर कष्टपूर्ण यात्रा के बाद कुम्भलगढ़ पहुंची। कालांतर में यहीं उदयसिंह का राज्याभिषेक हुआ और फिर उसने चित्तौड़ को बनबीर (1534-1537) के शासन से मुक्त कराया। इन्हीं उदयसिंह (1537-1572) के बाद उनके पुत्र राणा प्रताप (1572-1597) मेवाड़ के शासक हुए जिन्होंने आजीवन बादशाह अकबर से संघर्ष करते हुए घोर कष्ट उठाए परंतु उसकी गुलामी स्वीकार नहीं की। धन्य है यह स्वाभिमान, यह कर्त्तव्यनिष्ठा।

कर्त्तव्यनिष्ठा और जातीय गौरव का ऐसा ही ज्वल्लंत उदाहरण है मेवाड़ के स्वर्णिम इतिहास में अंकित **हाडी रानी** का नाम। यह उस समय की बात है जब मेवाड़ पर महाराणा राजसिंह (1652-1680 ई.) का शासन था। महाराणा राजसिंह द्वारा मुगल बादशाह औरंगजेब के भय से ब्रजमंडल छोड़कर आए श्रीनाथजी (पुष्टिमार्गीय प्रधानपूज्य मूर्ति) व गोस्वामियों को मेवाड़ में शरण देने व स्वतंत्र शासक जैसा व्यवहार करने से नाराज औरंगजेब आक्रमण के लिए मेवाड़ की तरफ बढ़ चला, परंतु महाराणा की सैनिक शक्ति की जानकारी होने पर उसने दिल्ली से और फौज मंगाई। उसी दौरान मेवाड़ के एक सामन्त सलुम्बर के राव रतनसिंह चुण्डावत की हाडा राजपूत सरदार की बेटी से शादी हुई थी। शादी के सात दिन बाद ही राव रतनसिंह चुण्डावत को महाराणा राजसिंह का संदेश प्राप्त हुआ कि दिल्ली से औरंगजेब की सहायता के लिए आ रही अतिरिक्त सेना को रोको। यह संदेश मिलते ही चुण्डावत रतनसिंह ने अपनी सेना को युद्ध की तैयारी का आदेश तो दिया पर बुझे मन से क्योंकि वह अपनी नवविवाहिता सुन्दर पत्नी हाडी रानी को छोड़कर जाना नहीं चाहता था। अपने पति की यह मनोदशा देखकर रानी ने कहा-- मेरे प्रति आसक्त होकर युद्ध से विमुख होना एक क्षत्रिय के लिए अनुचित और अशोभनीय है, यह मेरे लिए भी लज्जाजनक है (याद आया भगवद्गीता में स्वजनों में आसक्त कर्त्तव्य विमुख अर्जुन को श्रीकृष्ण का निर्देश-- उत्तिष्ठ कौन्तेय युद्धाय कृतनिश्चयः, उठो कौन्तेय निश्चयपूर्वक युद्ध करो)। अंततः राव चुण्डावत ने हाँ भरी तो युद्ध के लिए सज्जित कर रानी ने बड़े उत्साह से अपने पति को विदा कर दिया। वह घोड़े पर चढ़ गया, परंतु उसका मन तो पत्नी में अटका हुआ था। आगे बढ़ते हुए भी वह बार-बार झरोखे में बैठी रानी को देख रहा था, आखिर उसने सेवक को भेज कर रानी से अपनी कोई निशानी देने को कहा। रानी के तन-बदन में जैसे आग लग गई। उसने सेवक से कहा-- हाँ निशानी देती हूं, अपने सरदार को संभला देना, कहना-- मैं स्वर्ग में आपकी बाट जोह रही हूं और इसके साथ ही उसने बाएं हाथ में अपने सुन्दर लम्बे केशों को समेट कर दाएं हाथ की तलवार से- **सिर काट दे दियो क्षत्राणी** (मेघराज 'मुकुल' की प्रसिद्ध लम्बी कविता 'सैनाणी' युद्ध के नगाड़े जोर से गूंज उठे-- जय हो, जय हो क्षत्राणी। राव चुण्डावत ने सेवक के हाथों में रखे थाल पर से सुहाग-चूनर को हटाया तो एकबारगी स्तब्ध हो गया, परंतु तत्काल ही उसके रोम-रोम से शौर्य-ज्वाला फूट पड़ी, कवच की कड़ियां तिड़कने लगी, उसने रानी के शीश को गले में माला की तरह पहना और घोड़े के एड़ लगादी। सेना सहित मुगल फौज में पहुंच कर भीषण संग्राम करते हुए वीरगति को प्राप्त हुआ और अपनी प्रिया हाडी रानी से मिलने प्रस्थान कर गया, परंतु मुगल सेना के भी पांव उखड़ गए और फिर औरंगजेब को वापस लौटना पड़ा। इसी हाडी रानी की स्मृति में राजस्थान पुलिस ने 'हाडी रानी महिला

बटालियन' का गठन कर इस वीरांगना को नमन किया है।

राजस्थान की गौरवगाथा **साक्षात भक्तिस्वरूपा मीरांबाई** (1498-1546) के बिना कैसे पूर्ण हो सकती है। चित्तौड़ के ही राणा सांगा के ज्येष्ठ पुत्र भोजराज की पत्नी मीरांबाई (जो 4-5 वर्ष के वैवाहिक जीवन के बाद ही विधवा हो गई थी) की अनन्य कृष्ण-भक्ति अनुपम है और पूरे मध्यकालीन भारतीय काव्य में बेजोड़ हैं उनके द्वारा रचित पद जिनमें अपने इष्ट के प्रति उनके निस्संकोच, निडर समर्पण की सहज अभिव्यक्ति का अद्‌भुत सौंदर्य बिखरा पड़ा है-- जाके सिर मोर मुकुट मेरो पति सोई, माई मैं तो लियो गोबिन्दो मोल। उनके पदों का सौंदर्य कहना कठिन है, केवल अनुभव किया जा सकता है। बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के भारत कला भवन में एक जर्मन स्कॉलर महिला से भेंट हुई। उन्होंने मुझ से पूछा, आप कहां से आये हैं। मैंने कहा, राजस्थान से। उन्होंने प्रसन्नता से आंखें फैलाकर कहा-ओह, मीरांबाई के राजस्थान से! मीरांबाई का राजस्थान और भी अनेक रामभक्तों, कृष्ण भक्तों के अलावा दादू दयाल, जाम्भोजी, जसनाथजी, रामचरणजी जैसे संतों की पुण्य भूमि है। भक्ति सम्प्रदायों को आश्रय देने का भी गौरव प्राप्त है।

अंत में एक ज्वलंत मुद्दे, समृद्ध साहित्य परम्परा और वर्तमान में भी बड़ी संख्या में रचित-प्रकाशित साहित्य और राजस्थानियों की पुरजोर मांग के बावजूद **राजस्थानी भाषा को संविधान की 8वीं सूची में मान्यता नहीं मिलने की चर्चा।** राजस्थान के गठन के समय यहां जिस तरह कई रियासतें थी वैसे ही मारवाड़ी, ढूंढाड़ी, मेवाड़ी, मेवाती, हाडोती, बागड़ी इत्यादि कई बोलियां-भाषाएं थी। उद्योतन सूरि ने प्रसिद्ध ग्रंथ 'कुवलयमाल' में इस भूभाग की 18 देशी बोलियों-भाषाओं को 'मरुभाषा' कहा जबकि 15वीं शताब्दी के प्रसिद्ध ग्रंथ ढोलामारु रा दूहा के रचयिता कुशललाभ और अकबर के दरबारी लेखक अबुल फजल ने 'आइने अकबरी' में इन्हें 'मारवाड़ी' लिखा है। बाद में सर जार्ज अब्राहम ग्रियर्सन ने दो खंडों में प्रकाशित Linguistic Survey of India (1907-1908) में राजपूताना क्षेत्र की भाषा को सर्वप्रथम 'राजस्थानी' नाम देकर उसकी क्षेत्रीय उपभाषा-बोलियों का वर्गीकरण किया था। पूर्व मध्यकाल अथवा 11-12वीं शताब्दी से ही इस भू-भाग में चारण कवियों द्वारा रचित वीर-गाथा परक और जैन कवियों द्वारा रचित भक्ति-परक काव्य उपलब्ध है। इस काव्य की भाषा मध्यकाल में डिंगल कही जाने लगी, जबकि उस समय यहां की काव्य-भाषा में ब्रज भाषा का मिश्रण होने लगा था, जिसे पिंगल कहा जाने लगा। डिंगल में तो लगभग पूरी तरह और पिंगल में लगभग 50 प्रतिशत शब्द मारवाड़ी के प्रयुक्त हो रहे थे। मारवाड़ी की व्यापकता मारवाड़ (जोधपुर, जालोर, नागौर, बीकानेर, बाड़मेर) के अलावा मेवाड़, सिरोही, जैसलमेर, शेखावाटी और 'छै' सहायक क्रिया तथा विभक्ति 'र-रा-री' की जगह 'क-का-की' के अलावा ढूंढाड़ी (जयपुर), हाडोती (बूंदी-कोटा) व मेरवाड़ी (अजमेर) तक में है।

साहित्य-सृजन और व्यवहार, दोनों दृष्टियों से, प्राचीन काल से समृद्ध मारवाड़ी में ही वर्तमान में भी सर्वाधिक साहित्य-सृजन हो रहा है। राजस्थान के प्रसिद्ध स्वतंत्रता सेनानी व लोकप्रिय नेता जयनारायणजी व्यास मारवाड़ी में लिखते थे और इसी मारवाड़ी को राजस्थानी नाम से संवैधानिक मान्यता की बात उन्होंने तत्कालीन प्रधानमंत्री पं. नेहरू के सामने उठायी थी, परंतु नेहरूजी ने मना कर दिया। तत्पश्चात लम्बे समय बाद यह मांग फिर उठी और अभी निरंतर उठ रही है। इसके विरुद्ध पूछा जाता है कि राजस्थान की विभिन्न क्षेत्रीय बोलियों-भाषाओं में से कौन सी राजस्थानी? मेरा सुझाव है कि इस पर स्पष्ट कहा जाना चाहिए--

'मारवाड़ी', जिस तरह राजस्थान से बाहर देश-विदेश में राजस्थानियों को सदियों से मारवाड़ी कहा जाता है। एक दिक्कत और आ रही है कि राजस्थान के ब्रज-भाषी क्षेत्र भरतपुर-धौलपुर से ब्रज भाषा को मान्यता देने की मांग की जा रही है, जबकि ब्रजभाषा का मूल और बड़ा क्षेत्र तो उत्तर प्रदेश में है? राजनीतिक स्तर पर अभी मामला राजस्थानी भाषा वर्सेज ब्रज भाषा पर अटका हुआ बताते हैं। राजस्थान की राजनीति में भाषाओं को लेकर 'अकादमिक' खेल भी खुब होता रहा है। यहां हिन्दी साहित्य अकादमी, ब्रज भाषा-साहित्य अकादमी, उर्दू अकादमी, संस्कृत अकादमी और राजस्थानी भाषा साहित्य एवं संस्कृति अकादमी (जिसमें संस्कृति विषयक कोई काम नहीं होता) है, संभवतः सिन्धी अकादमी नहीं है। शायद ही किसी अन्य प्रांत में इतनी अकादमी हों। गत दिनों, संभवतः राजस्थानी को संवैधानिक मान्यता के संदर्भ में ही एक नई मांग अखबारों में पढ़ने में आई जिसके अनुसार राजस्थान के श्रीगंगानगर, हनुमानगढ़, जोधपुर, पाली, जालोर, सिरोही, बाड़मेर, बीकानेर, जैसलमेर, चूरू, नागौर, सीकर, झुन्झुनू जिलों को मिलाकर 'मरुभूमि' नाम से अलग राज्य बनाने की बात कही गई है।

राजस्थान में रोमांचित कर देने वाले अनेक ऐतिहासिक स्थलों, गढ़ों, हवेलियों, महलों, मंदिरों, नैसर्गिक नजारों व तीन बाघ अभयारण्यों (मुकुन्दरा हिल्स, रणथम्भौर एवं सरिस्का) तथा केवलादेव राष्ट्रीय उद्यान को देखने के लिए प्रतिवर्ष बड़ी संख्या में पर्यटक आते हैं। मुझे लगभग पूरे राजस्थान में घूमने का अवसर प्राप्त हुआ, जिसमें मैंने बड़ी संख्या में विदेश और बंगाल, महाराष्ट्र, गुजरात, तमिलनाडु के पर्यटकों को देखा, पर राजस्थानी बंधु नगण्य से ही देखने में आये। संभवतः उनकी अपनी महान विरासत को देखने में उतनी रुचि नहीं है? **हमारे प्रवासी राजस्थानी बंधु, बेशक यूरोप-अमेरिका घूमे हैं, पर राजस्थान नहीं के बराबर?** अस्तु, राजस्थान दिवस 2021 की पुनः बधाई के साथ दैनिक भास्कर, जयपुर के विभिन्न अंकों में प्रकाशित सामग्री के आधार पर यहां के नैसर्गिक सौंदर्य, विश्व को गणितीय योगदान, पुरातत्व की बानगी के बाद आधुनिक राजस्थान में प्रगति के कुछ आयामों की चर्चा, खासकर राजस्थानियों के लिए।

अरावली का यह अद्‌भुत नजारा :- वर्षाकाल में पाली जिले के मारवाड़ जंक्शन से गोरमघाट अथवा उदयपुर के कामलीघाट से गोरमघाट की मीटरगेज रेल यात्रा में पहाड़ियों पर पसरे हरे-भरे घने जंगल में से ब्रिटिशकालीन 8 पुलों व 2 टनलों से सर्पिलाकार पटरियों पर जब रेल गुजरती है तो यात्री वाह-वाह, ओह, क्या खूब कहकर प्राकृतिक नजारों को आंखों में भरने लगते हैं। कहीं-कहीं तो गाड़ी का इंजन और एकदम पिछला डिब्बा लगभग समानान्तर हो उठते हैं। इसी बीच राजस्थान में सर्वाधिक ऊंचाई से गिरने वाला भीलबेरी का झरना, कर्नाटक और गोवा की सीमा पर स्थित दूधसागर झरने-सा दिखाई पड़ता है।

चंबल का नेकलेस व्यू :- कोटा शहर से 20 कि.मी. पर मुकंदरा हिल्स टाइगर रिजर्व में चंबल नदी एक जगह भूभाग के गिर्द इस तरह घूमती है कि हार जैसा दृश्य बन जाता है। यह दृश्य इतना लुभावना है कि देखते रहने से जी नहीं भरता। यहीं प्रसिद्ध प्राचीन गराड़िया महादेव का मंदिर है।

गंभीरी और बेड़च नदियों का संगम :- चित्तौड़गढ़ जिले के भाईखेड़ा में गंभीरी और बेड़च नदियों के संगम का अद्‌भुत नजारा है। यहीं 9वीं सदी में निर्मित (लगभग 1270 वर्ष प्राचीन) संगमेश्वर महादेव का दर्शनीय मंदिर है। इस पूर्वाभिमुख शिवालय में त्रिरथ गर्भगृह, अंतराल, समतल वितान लिए मंडप की रचना व शिखर उल्लेखनीय हैं। गर्भगृह में शिवलिंग के साथ दुर्लभ चतुर्मुख विष्णु प्रतिमा है। बाह्य भाग में सात घोड़ों के रथ पर सवार सूर्य, गणेश, कल्याण सुंदर आदि प्रतिमाएं हैं।

120 फीट की खाई में महादेव :- उदयपुर से 80 किमी दूर पिंडवाड़ा हाईवे पर फिरवल गाँव से देवला की ओर जाने पर देवला चौराहे से 7 किमी पहले 12 किमी अंदर तिलकेश्वर महादेव मंदिर का झरना है। जिस खाई में झरना गिरता है उसी में 120 फीट की गहराई में तिलकेश्वर महादेव नामक शिवलिंग विराजमान है। कहते हैं भूमनु के पुत्र राजा तिलक ने यहां महादेव को तिल अर्पित कर तपस्या की और अकूत सम्पदा प्राप्त की। अभी भी यहां भोलेनाथ को केवल तिल या तिल से बनी चीजें अर्पित की जाती हैं। इनके दर्शन हेतु नीचे उतरने से पहले झरने पर एक चट्टान पर लगी घंटी को, सकुशल वापस आने की कामना से बजाकर झरने के समानान्तर बंधी दो जंजीरों को पकड़-पकड़ कर नीचे उतरना पड़ता है। चट्टानों के बीच रास्ता इतना संकरा कि एक बार में एक व्यक्ति ही जंजीर पकड़े हुए सीढ़ियों पर पैर जमा-जमा कर उतर सकता है। चट्टानों के बीच निरंतर बहते पानी से जमी काई पर फिसलन अलग। इस यात्रा का पहला पड़ाव एक अंधेरी गुफा है जिसमें से चमगादड़ों से बचते हुए गुजरना पड़ता है। गुफा में चट्टानों से बनी बहुत सी नाग आकृतियां डराती हैं। आगे का सफर पेड़ों के सहारे होता है। फिर सीधी खाई और चट्टानों पर काई जहां लोहे की 5 जंजीरें लटकी हुई हैं जिन्हें पकड़कर ऊपर से गिरते झरने के साथ-साथ नीचे उतरना पड़ता है। जरा सी चूक और 50 फीट गहरी खाई में। इस रोमांचक यात्रा के बाद एक लोहे की सीढ़ी से चढ़कर गुफा में शिवलिंग और नंदी के दर्शन होते हैं। गुफा की छत पर नागों की आकृतियां हैं। गुफा के सामने झरना गिर रहा है। दर्शन के बाद, जैसे नीचे गये वैसे ही ऊपर आना पड़ता है।

सर्वप्रथम शून्य का प्रयोग राजस्थान में :- राजस्थान ने दुनिया को बताया शून्य (0) और बीज गणित का प्रयोग। सन् 598 में राजस्थान के जालौर जिले में संस्कृत के महाकवि और दानवीर माघ की जन्मस्थली भीनमाल (श्रीमाल) में गणितज्ञ ब्रह्मगुप्त ने 30 वर्ष की आयु में 'ब्राह्मस्फुट सिद्धांत' और 'खण्ड खाद्य' ग्रंथों की रचना शक संवत 550 (सन् 628) में की। यूरोप के प्रथम संस्कृत विद्वान और गणितज्ञ हेनरी थॉमस कोलब्रुक (1765-1837) ने इन ग्रंथों का अनुवाद कर बताया कि शून्य, गणित और बीजगणित का ज्ञान इस भारतीय गणितज्ञ से अरबों को मिला, जो फिर यूरोप पहुंचा। पेंगुइन लन्दन से प्रकाशित इस प्रसिद्ध गणितज्ञ की पुस्तक **'द नमिंग दैट इज : ए नेचुरल हिस्ट्री ऑव जीरो'** में लिखा है कि 'गणित में जीरो के आविष्कारक माने जाने वाले बेबिलॉनियन या अरबों से बहुत पहले ब्रह्मगुप्त ने अपनी पुस्तक 'ब्रह्मस्फुट सिद्धांत' में शून्य और नकारात्मक अंक गणना का उल्लेख किया है'। उल्लेखनीय है कि भीनमाल से प्राप्त शिलालेखों में सर्वप्रथम शून्य का प्रयोग हुआ है। ब्रह्मगुप्त ने बीजगणित को 'कुट्टक' कहकर कुट्टकाध्याय लिखा। उन्होंने इसका प्रयोग तारों की गणना में सर्वप्रथम किया। भास्कराचार्य ने उन्हें 'गणकचक्र चूड़ामणि' कहकर लिखा कि ब्रह्मगुप्त ने समीकरणों के नए हल सुझा कर गणित को सर्वोच्च शिखर पर पहुंचाया। गुणाकर मुले अपने प्रसिद्ध ग्रंथ 'प्राचीन भारत के महान वैज्ञानिक' (पृ. 71) में लिखते हैं, ब्रह्मगुप्त ने शून्य के बाद ज्योतिष के नए यंत्रों का आविष्कार किया। इन यंत्रों की खोज से ही वेधशालाएं बनी, ग्रहों की गणना का विज्ञान विकसित हुआ। 712 में सिंध पर बगदाद के मुस्लिम खलीफा का अधिकार होने के बाद ब्रह्मगुप्त के उक्त दोनों ग्रंथ बगदाद पहुंचे जिनसे अरबों को शून्य की जानकारी हुई।

चौमुखा राणकपुर मंदिर : एक अद्‌भुत कृति :- राजस्थान के पाली जिले में स्थित जैन धर्म के पांच प्रमुख तीर्थस्थलों में से एक राणकपुर या रणकपुर जैन मंदिर इंजीनियरिंग का अद्‌भुत नमूना है। चारों

दिशाओं में दरवाजे होने से इसे चौमुखा मंदिर भी कहते हैं। इस मंदिर में कोई दीवार नहीं है, छोटे-बड़े सुंदर नक्काशी वाले 1444 स्तम्भ हैं जिन्हें इस तरह बनाया गया है कि कहीं से भी देखने पर मंदिर के पूज्य मूलनायक आदिनाथ भगवान के दर्शन होते हैं। 40,000 स्क्वायर फीट में फैले इस मंदिर में 5 तल हैं जिनमें से एक जमीन के अंदर है। मेवाड़ के राणा कुंभा द्वारा प्रदत्त भूखंड पर धरना शाह ने इसका निर्माण 600 वर्ष पूर्व ईस्वी 14वीं शताब्दी में कराया था। इसके निर्माण में 50 वर्ष लगे थे। मंदिर के 84 जिनालयों में 350 प्रतिमाएं हैं। अंदर एक कल्पवृक्ष बनाया गया है जिसमें एक पत्ता है और 108 ॐ बनाए गए हैं। मंदिर का नक्शा दीपा सोमपुरा ने बनाकर इसका 'नलिनी गुल्म विमान' नाम रखा था। मंदिर में एक स्तम्भ अधूरा है और एक टेढ़ा है, कहते हैं इसलिए कि मंदिर को नजर न लग जाए। पाली से उदयपुर जाने वाले मार्ग पर अरावली की सुरम्य घाटी में स्थित इस मंदिर का शिल्प सौंदर्य ऐसा है जो देखने वाले को अभिभूत कर उसमें आस्था का संचार कर देता है।

राजस्थान का पहला मैदानी किला :- राजस्थान में सामान्यतः सभी किले या गढ़ ऊंचे स्थलों या पहाड़ों पर बने हैं, लेकिन बीकानेर का जूनागढ़ मैदान में बना पहला किला है। इसकी नींव राजा रायसिंह ने वि.सं. 1645 (सन 1588 ई.) में रखी थी और फिर 5 साल में इसका प्रारम्भिक निर्माण दीवान कर्मचन्द की देखरेख में पूरा हुआ था। बाद में इसमें विभिन्न राजाओं ने अपने लिए महल बनाए जो करण महल, रतन निवास, सुजान निवास, डूंगर निवास, गंगा निवास नामों से जाने जाते हैं। पहले इसे गढ़ ही कहा जाता था, परंतु महाराजा गंगासिंह द्वारा लालगढ़ नामक अलग नये गढ़ का निर्माण करा लेने पर इसे जूनागढ़ (पुरानागढ़) कहा जाने लगा। जूनागढ़ में बहुत सी दर्शनीय वस्तुएं हैं, जिनमें 1914 से 1918 तक चले प्रथम विश्वयुद्ध में उपयोग हुआ 100 साल पुराना विमान उल्लेखनीय है। महाराजा गंगासिंह के नेतृत्व में बीकानेर के गंगा रिसाला ने इस युद्ध में ब्रिटेन की तरफ से भाग लिया था, अतः ब्रिटिश सरकार ने यह विमान उपहार के रूप में उन्हें दिया था।

सबसे ऊंचे महादेव :- नाथद्वारा में श्रीनाथजी के दर्शन तो मुख्य हैं ही, अब वहां 250 करोड़ की लागत के एक और दर्शनीय स्थल स्टेच्यू ऑफ बिलीफ का निर्माण पूर्ण होने को है। यह है नाथद्वारा की गणेश टेकरी पर विश्व में सबसे ऊंची शिव प्रतिमा जिसके दर्शन 20 कि.मी. दूर से भी हो जाते हैं। 16 एकड़ में फैले प्रतिमा स्थल में प्रतिमा का आधार 110 फीट ऊंचा है जहां पहुंचने के लिए दो लिफ्ट लगी हैं। प्रतिमा का सिर 70 फीट लंबा है। प्रतिमा अंदर से वातानुकूलित है। दो मंजिला पार्किंग में 250 कारें व 200 दुपहिया खड़े हो सकते हैं। 17 हजार 500 स्क्वायर फीट में लेजर फाउंटेन बनाया गया है। फूड कोर्ट में 400 लोग बैठ सकते हैं। प्रतिमा में 5-5 हजार लीटर क्षमता के दो वाटर हॉल बनाए गए हैं जिनमें से एक शिवजी के अभिषेक के लिए और दूसरा अग्निशमन के लिए है।

सात आश्चर्य एक जगह :- दुनिया के सात आश्चर्यों का परिसर कोटा में किशोर सागर पर बना 'सेवन वंडर्स' आजकल सैलानियों के द्वारा खूब देखा जा रहा है। यहां क्राइस्ट द रिडीमर (रियो डी जेनेरिया) 2.50 मीटर ऊंचा है जिसे 6 मीटर की ऊंचाई पर बनाया गया है। ताजमहल (भारत) की ऊंचाई 7.50 मीटर है। मिस्र का पिरामिड 7.50 मीटर ऊंचा है। रोम का कॉलिजियम 15 x12 मीटर का है। पीसा की झुकी मीनार की ऊंचाई 18 मीटर है। एफिल टॉवर (पेरिस) 30 मीटर ऊंचा है और पेडस्टल सहित स्टेच्यू ऑफ लिबर्टी

(अमेरिका) की ऊंचाई 10 मीटर है।

अनूठी अभियांत्रिकी : कोटा का हैंगिंग ब्रिज :- देश के 3272.8 किमी लंबे ईस्ट-वेस्ट कॉरिडोर में सबसे खूबसूरत और अनुठी अभियांत्रिकी का नमूना कोटा सिक्स लेन हैंगिंग ब्रिज है जो एनएच 27 पर चंबल नदी पर बना है। 277.67 करोड़ की लागत से बने देश के पांचवें और राजस्थान के इस पहले हैंगिंग ब्रिज में 350 मीटर का हिस्सा हैंगिंग है जबकि मुम्बई सी-लिंक का 250 मीटर, इलाहाबाद के नैनी ब्रिज में 260 मीटर और कोलकाता के दो ब्रिजों में 200 मीटर व 110 मीटर है।

देश का सबसे पुराना एयरबेस जोधपुर में :- विश्व के चुनिंदा एयरबेसों में शामिल जोधपुर का 90 वर्ष पुराना एयरबेस देश का सबसे पुराना एयरबेस है। इंडियन एयर फोर्स (तब रॉयल फोर्स) की स्थापना से एक वर्ष पूर्व 1931 में महाराजा उम्मेद सिंह ने जोधपुर फ्लाइंग क्लब की स्थापना की थी। उनके द्वारा ही 1924-25 में इस एयरबेस का निर्माण प्रारम्भ किया गया था जो 1932 में पूरा हुआ। वर्तमान में जोधपुर एयरपोर्ट से चाहे 8-10 घरेलू उड़ाने हैं, परंतु अतीत में यहां से घरेलू उड़ानों के अलावा इंटरनेशनल फ्लाइट्स भी संचालित होती थी जो लंदन, पेरिस, रंगून, सिंगापुर, जकार्ता और जापान तक जाती थी। उस समय विमान में शौकिया कुछ देर बैठकर उतर जाने के 5 रुपए थे और जोधपुर नगर का चक्कर लगाने का भाड़ा 10 रुपए था। इंडियन एयरफोर्स का यह सबसे बड़ा एयरबेस अब इंटरनेशनल एयरपोर्ट बनने की तैयारी में है।

देश का सबसे बड़ा बैटल फील्ड :- पं. नेहरू के समय 1962 में चीन ने आक्रमण किया, जिसमें हमारे 4000 से ज्यादा जवान शहीद हुए और चीन ने हमारे बड़े भूभाग (लगभग 3000 वर्ग किमी) पर कब्जा कर लिया। चीन के एटम बम से डरी सरकार बगलें झांकती रह गई। 1964 में संसद में अटलबिहारी वाजपेयी ने कहा-- एटम बम का जवाब एटम बम है और यह जवाब दिया गया राजस्थान में रामदेवरा से थोड़ी दूर स्थित पोकरण में जहां 18 मई बुद्ध पूर्णिमा 1974 को इंदिरा गांधी के प्रधानमंत्रित्व काल में लोहरकी नामक स्थान में पहला परमाणु परीक्षण हुआ और 'बुद्ध मुस्कराए'। इसके बाद 1998 में प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी ने 11 मई को यहीं खेतोलाई नामक जगह में तीन परमाणु धमाके किए। पोकरण वह क्षेत्र है जहां थार के मरुस्थल में भारत के सुपरपावर बनने की भूमिका लिखी गई। पोकरण आज देश का सबसे बड़ा बैटल फील्ड है, जहां सैकड़ों किमी के दायरे में सबसे बड़ी फायरिंग रेंज है जहां निरंतर हथियारों का परीक्षण और युद्धाभ्यास चलता रहता है। यहीं दुनिया में सबसे तेज गति से उड़ान भरनेवाली ब्रह्मोस मिसाइल, धनुष मिसाइल, अमेरिका से प्राप्त हॉविजर गन एम-777, स्वदेशी उन्नत युद्धक टैंक अर्जुन मार्क-1ए (हंटर किलर) की क्षमताओं का परीक्षण हुआ।

राजस्थान के ये एयरबेस : दुश्मन में दहशत :- राजस्थान में जोधपुर तथा सूरतगढ़ जैसे 6 एयरबेस हैं जहां से पाकिस्तान के किसी भी हमले को 20 मिनट में नाकाम किया जा सकता है। यहां सुपरसोनिक विमान सुखोई व जगुआर तैनात हैं और अब स्वदेशी तेजस की भी तैनाती होगी। एयरफोर्स के राडार, अवाक्स और सैटेलाइट से यहां का सर्विलांस सिस्टम भी मजबूत है। कायलाना का सर्विलांस सिस्टम हमले से पहले ही अलर्ट कर देता है। जोधपुर का हाफ सेंटर एयरबेस पश्चिमी सीमा का सबसे ताकतवर एयरबेस है। भारत द्वारा पाकिस्तान में की गई बालाकोट एयरस्ट्राइक का बैकअप यहीं से गया था। सूरतगढ़ एयरबेस की जद में पाकिस्तान का बहावलपुर (जहां आतंकी जैश-ए-मोहम्मद का ठिकाना है) और आधा पंजाब है।

यहां सुर्खियों में रहे विंग कमांडर अभिनंदन वर्धमान तैनात रह चुके हैं। फलौदी का एयरबेस लाजस्टिक सपोर्ट देने के लिए बनाया गया है जहां एमआई-17वी 5 हेलीकाप्टर की स्क्वाड्रन तैनात है। यहां से चांदन फील्ड फायरिंग रेंज नजदीक है। अतः वहां युद्धाभ्यास के दौरान विमान यहीं से भेजे जाते हैं। जैसलमेर में पाकिस्तानी सीमा के नजदीक फ्रंट लाइनर बेस है। 1971 के युद्ध में यहीं से हंटर विमानों ने उड़ान भरकर लोंगेवाला में पाकिस्तान के 36 टैंकों, 100 वाहनों एवं 200 सैनिकों की कब्रगाह बना दी थी। बीकानेर में नाल एयरबेस पाकिस्तानी हवाई सीमा के बहुत नजदीक है जिससे यहां का रिएक्शन टाइम सबसे अच्छा है। यहां जगुआर विमान की स्क्वाड्रन तैनात है। बाड़मेर उतरलाई एयरबेस सबसे पुराना फ्रंट एयरबेस है जिसे अंडरग्राउण्ड स्क्वाड्रन वाला एयरबेस भी कहते हैं। यहां मिग-21 बाइसन की स्क्वाड्रन तैनात है। यहां का एयर डिफेंस सिस्टम अत्यंत मारक है।

एशिया का सबसे बड़ा न्यूक्लियर फ्यूल काम्पलेक्स :- देश को यूरेनियम फ्यूल निर्माण में आत्मनिर्भर बनाने के लिए कोटा के रावतभाटा में एशिया का सबसे बड़ा न्यूक्लियर फ्यूल काम्पलेक्स निर्माणाधीन है जिससे उत्तर भारत के परमाणु रिएक्टरों को यूरेनियम फ्यूल बंडलों की आपूर्ति होगी। रावतभाटा में 6 परमाणु बिजलीघर इकाइयां हैं जिनमें से 5 इकाइयों में 1080 मेगावाट का विद्युत उत्पादन होता है। अब यहां 7वीं इकाई का सिविल कार्य पूरा हो चुका है और 8वीं का 80 प्रतिशत काम पूरा हो चुका है। इन इकाइयों का कार्य पूर्ण होते ही 1400 मेगावाट बिजली का उत्पादन होने लगेगा। इस केंद्रीय विद्युत परियोजना से राजस्थान को 50 प्रतिशत बिजली मिलेगी।

आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस का प्रमुख केंद्र जोधपुर :- जोधपुर आईआईटी में टेक्नोलॉजी एंड इनोवेशन हब शुरू होगा। आईआईटी जोधपुर आनेवाले समय में आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस रिसर्च का प्रमुख केंद्र बनेगा। जोधपुर आईआईटी में देश का पहला सुपर कंप्यूटर लैब स्थापित हो चुका है। इस एआई सुपर कंप्यूटर की क्षमता सामान्य से 20 लाख गुना अधिक है। यह लैब लक्षणों के आधार पर एक्सरे, एमआरआई बना देगी। मेडिकल व साइबर एजुकेशन में इस एआई कंप्यूटर का जबरदस्त फायदा होगा। इस आईआईटी कैंपस में सैमसंग की ऑडियो रियलिटी व वीडियो रियलिटी (एआर-वीआर) लैब भी स्थापित की गई है जिससे विद्यार्थियों को इंडस्ट्रियल डिजाइन, रोबोटिक, इंफ्रास्ट्रक्चर मैनेजमेंट आदि से जुड़ी जानकारी प्राप्त होगी। अब आईआईटी जोधपुर आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस रिसर्च का प्रमुख केंद्र भी बनने जा रहा है। इस इनोवेशन हब ऑन कंप्यूटर विजन को 'आईहब दृष्टि' नाम दिया गया है। इस टेक्नोलॉजी हब में इन पांच विषयों पर काम होगा- बायो एंड मेडिकल इमेजिंग फॉर हैल्थकेयर, कंप्यूटर विजन फॉर डिजिटल लर्निंग, कम्प्यूटर विजन फॉर ऑटोनोमस सिस्टम, एआई ड्रिवन ऑगमेंट एंड वर्चुअल रियलिटी एप तथा कंप्यूटर विजन एंड एआर-वीआर फॉर इंडस्ट्री 4.01।

एमएनआईटी जयपुर के कई इनोवेशन :- एमएनआईटी जयपुर ने कोरोनाकाल में कई इनोवेशन कर राजस्थान का नाम रोशन किया है। इस संस्थान ने सेना के लिए शीट फाइबर रेन्फोर्स्ड फाइबर कम्पोजिट और सेरेमिक से बुलेट प्रूफ सीट बनाई है जिसे वाहनों पर लगाया जाएगा। रोबोट के हाथ कंप्रेस्ड हवा से मानव हाथों की तरह काम करेंगे, इसे पैटेंट मिल गया है। इसी तरह वनस्पति तेल से डीजल इंजन चलाने का पेटेंट भी संस्थान को मिल गया है। संस्थान इंटेलिजेंट ग्लुकोमीटर भी बना रहा है जो बिना खून

की बूंद लिए एलईडी वेव्स से शुगर लेवल बताएगा। संस्थान ने अल्ट्रावायलेट टावर बनाया है जो किसी भी बंद कमरे में 15 मिनट में वायरस खत्म करता है। कैंपस में प्रयोग के लिए सैनेटाइजर, सैनेटाइजिंग टनल व फेसशील्ड तैयार की गई है। एक यूवी बॉक्स तैयार किया गया है जो उसमें रखी चीजों से वायरस खत्म कर देता है। कैंपस से निकलने वाले वेस्ट से कई तरह के फर्नीचर तैयार किए जाते हैं। संस्थान में विश्वप्रसिद्ध जयपुर कृत्रिम फुट का वजन कम करने व उसकी लास्टिंग बढ़ाने पर शोध हो रहा है तथा कम लागत वाले जयपुर कृत्रिम हैंड का निर्माण भी किया गया है। यहां प्लास्टिक वेस्ट से सड़क बनाने पर भी शोध हो रहा है। यहां पुलिस के लिए ऐसे ड्रोन तैयार किए गए हैं जो 500 मीटर तक एनाउंस करने व 10 किलो वजन वहन करने में सक्षम हैं। इस संस्थान ने सबसे पहले स्वयं का सॉफ्टवेयर तैयार कर ऑनलाइन परीक्षाओं का आयोजन कर परीक्षा परिणाम जारी किए। एमएनआईटी में 85 करोड़ की लागत से एशिया का सबसे बड़ा लेक्चर थिएटर कॉम्पलेक्स बना है जिसके 48 कक्षों में 6700 विद्यार्थी एक साथ पढ़ सकते हैं।

नम्बर दो पर जोधपुर एम्स :- दिल्ली एम्स के बाद जोधपुर एम्स देश में दूसरे नम्बर का बन गया है। गत 8 वर्षों में यह संस्थान 350 डाक्टर्स दे चुका है। कोरोना काल में वायरस से बचाव के लिए पीपीई किट को कास्टमाइज्ड तरीके से डिजाइन किया। मेडिकल स्टाफ के लिए प्रोटेक्टिव बॉक्स व मरीजों के लिए सारथी स्ट्रेचर बनाया। केंद्र सरकार की महत्त्वपूर्ण स्वास्थ्य योजना आयुष की 64 दवाओं का परीक्षण आयुर्वेद यूनिवर्सिटी के साथ यहीं हुआ। यहां मरीजों तक खाना, दवा पहुंचाने वाला रोबोट बनाया गया है। इसने कोरोना से निपटने के लिए 30 लैब्स को आरटी-पीसीआर टेस्ट करना सिखाया तथा 150 मेडिकल आफिसर्स को ट्रेनिंग दी।

आंधियां नहीं पवन ऊर्जा :- राजस्थान में परमाणु, तापीय एवं सौर ऊर्जा के बाद मरुस्थलीय आंधियां अब पवन ऊर्जा का स्रोत बन गई हैं। राष्ट्रीय पवन ऊर्जा संस्थान के अनुसार राजस्थान में 1,27, 756 मेगावाट पवन ऊर्जा की क्षमता है। वर्तमान में इससे 4913.90 मेगावाट बिजली का उत्पादन हो रहा है। राजस्थान की 95 प्रतिशत पवन ऊर्जा का उत्पादन क्षेत्र जैसलमेर है। जैसलमेर को अब पंखों की नगरी कहा जाने लगा है। पवन ऊर्जा उत्पादन में राजस्थान का दूसरा स्थान है। आंध्रप्रदेश में कोडप्पा जिले के गांडिकाटा के बाद जैसलमेर के निकट लोद्रवा में दूसरा पवन ऊर्जा पार्क स्थापित किया गया है। जैसलमेर के अलावा उसके निकटवर्ती सोढ़ा बांधन, पोहरा व अमरसर में तथा हर्ष पर्वत सीकर, बीठडी जोधपुर एवं देवगढ़ प्रतापगढ़ में पवन चक्कियां लगाई गई हैं।

मरुस्थल में तेल की धार :- राजस्थान में बाड़मेर के गुड़ा-मालानी क्षेत्र में सरस्वती तेल क्षेत्र की खोज 2001 में हुई। कई बाधाओं के बाद केयर्न एनर्जी ने 2004 में विशाल तेल भंडार मंगला की खोज की जहां 2009 में उत्पादन शुरू हुआ। केयर्न एनर्जी बाड़मेर में 350 से ज्यादा तेल कुएं खोद चुकी है और 200 कुएं और खोदे जा रहे हैं। वेदांता केयर्न बाड़मेर के 10 और जैसलमेर के 3 ब्लॉक में अन्वेषण कर रही है। बाड़मेर-सांचौर बेसिन से अभी 1 लाख 60 हजार बैरल तेल प्रतिदिन उत्पादित हो रहा है। राजस्थान में देश की आवश्यकता का 23 प्रतिशत उत्पादन हो रहा है। 5 साल में जब 10 और ब्लॉक में कुएं खोद लिए जाएंगे तो राजस्थान बाम्बे हाई के 2 लाख 30 हजार बैरल से आगे निकल जाएगा। जोधपुर-बाड़मेर के बीच पचपदरा में 4500 एकड़ में एचपीसीएल राजस्थान रिफाइनरी बन रही है जिसमें क्रूड को साफ करने की 9

रिफाइनरी, 4 पेट्रोकेमिकल काम्प्लेक्स तथा 13 प्रोसेसिंग यूनिट का निर्माण प्रगति पर है। इस महत्वाकांक्षी योजना का काम पूरा होने पर एक लाख लोगों को रोजगार मिलेगा।

मरुस्थल में मिले गैस-भंडार :- बाड़मेर में सिणधरी के पास कोशलू गांव में जलदाय विभाग के एक सूखे कुएं से आग की लपटों के साथ प्राकृतिक गैस निकलने लगी तो इस क्षेत्र में गैस भण्डारों की खोज शुरू हुई। 1994 में ओएनजीसी (ऑयल एंड नेचुरल गैस कार्पोरेशन) ने गैस आधारित बिजली प्लांट जैसलमेर के रामगढ़ में आरंभ किया था जिसमें अभी 160 मेगावाट बिजली बन रही है। इसके बाद बाड़मेर-सांचोर के गुड़ा-मालानी बेल्ट में 3 ट्रिलियन (3 खरब) घनफीट का गैस भंडार मिला जहां वेदांता कम्पनी के रागेश्वरी गैस टर्मिनल प्लांट से साढ़े पांच करोड़ घनफीट गैस का उत्पादन होने लगा जो गुजरात भेजी जाती है। अब दूसरे प्लांट रामेश्वरी डीप गैस प्लांट का निर्माण पूरा होने वाला है। जिससे गैस का उत्पादन 75 करोड़ घनफीट प्रतिदिन हो जाएगा, तब राजस्थान को भी यहाँ उत्पादित गैस मिलने लगेगी।

बंजर भूमि पर बिजली की खेती :- राजस्थान के बीकानेर, जोधपुर, जालोर, जैसलमेर व बाड़मेर जिले सोलर हब बन रहे हैं। इन जिलों के विभिन्न गांवों की सरकारी और निजी खातेदारों की जमीनों पर सोलर प्लांट लग रहे हैं। जिन खेतों में पानी के अभाव में बमुश्किल खाने भर का अनाज पैदा होता था या खेत बंजर पड़े थे उनमें अब सोलर प्लांट लगने से बिजली की खेती होने लगी है। इन जिलों में 13 प्रोजेक्ट से एशिया का सबसे बड़ा सोलर पार्क बनने जा रहा है जहां 10300 मेगावाट बिजली उत्पन्न होगी। विभिन्न कंपनियों द्वारा भूमि लीज पर लेने से, मिलने वाले भाड़े से किसानों की किस्मत बदल रही है। जैसे कि बाड़मेर के लखासर गांव में 38 खातेदारों को उनकी 3000 बीघा जमीन का 10,000 रुपए प्रति बीघा के हिसाब से भाड़ा मिल रहा है। इसी तरह अन्य गांवों में खातेदारों को लाखों रुपए की वार्षिक आय होने लगी है। यह सोलर ऊर्जा से उत्पन्न बिजली अत्यंत सस्ती भी है, लगभग 2 रुपए प्रति यूनिट।

मरुस्थल में खेती के नये आयाम :- बरसात और पानी की कमी के कारण सूखे की मार झेलने वाला राजस्थान का मरुस्थल मोठ बाजरा, ज्वार जैसे मोटे अनाजों की खेती बमुश्किल कर पाता था, वह अब खेती के नये अध्याय लिख रहा है। जयपुर से महज 35 किमी दूर बसेड़ी, बालोलाई, बेगास और गुढ़ा कुमावतान को मिनी इजराइल कहा जाता है क्योंकि यहां इजराइल की तर्ज पर **पॉली हाउस बनाकर खेती** की जा रही है जिसमें पारंपरिक खेती से हटकर फल और सब्जियां उगाई जा रही हैं जिससे कभी 20 बीघा में खेती से सालभर में 50-60 हजार रुपए कमाने वाले किसान अब केवल तीन-चार महीने में ही 20 लाख तक कमाने लगे हैं। यहां पॉली हाउस में तापमान नियंत्रण और सिंचाई की व्यवस्था सोलर सिस्टम पर आधारित है, बिजली पर निर्भर नहीं है, सोलर पंप लगे हैं और ओस की बूंदों व घर के वेस्ट वाटर को सहेजा जाता है। आज यहां स्ट्राबेरी व जुगनी जैसी विदेशी फसलें उग रही है। जून में शिमला मीर्च और चाइनीज खीरा उगा रहे हैं। बसेड़ी गांव के थाकन परिवार ने अपने खेत के 36 हजार वर्गमीटर क्षेत्र में 22 पॉली हाउस बना रखे हैं। एक पॉली हाउस की फसल से एक करोड़ रुपए तक की कमाई हो जाती है। सभी पॉली हाउस सोलर सिस्टम पर आधारित हैं और 50 लाख लीटर पानी की क्षमता वाले पोण्ड से जुड़े हैं। पॉली हाउसों से बाहर खेत में मलचिंग पद्धति से खेती की जाती है। थाकन परिवार की इस उपलब्धि को अब तक केंद्र और राज्य के कई मंत्रियों अधिकारियों के अलावा 22 देशों के लोग देखने आ चुके हैं। राजस्थान में 700-800 पॉली

हाउस बन चुके हैं जिनमें से आधे जयपुर के निकट उक्त गांवों में हैं।

राजस्थान के 9 रेगिस्तानी जिलों जैसलमेर, बाड़मेर, जोधपुर, बीकानेर, गंगानगर, हनुमानगढ़, जालौर, सिरोही और झुन्झुनू में 2000 हेक्टेयर भूमि में **खजूर की खेती** की जा रही है। जैसलमेर के सरकारी फार्म भोजका में करीब 600 टन खजूर की पैदावार हो रही है। इस फार्म में मेडजूल, बरही, खुनेजी, शीशी, खलास, खदरवी आदि किस्मों के पेड़ लगे हुए हैं। बरही व खुनेजी को ताजे फल के रूप में खाया जाता है, जबकि शेष किस्मों से पिंड खजूर बनाए जाते हैं। बरही 200 रुपए किलो व शेष किस्में 100 रुपए किलो के हिसाब से बिकती हैं। 2008 से 2011 के बीच एक लाख बत्तीस हजार पौधे संयुक्त अरब अमीरात और ब्रिटेन से आयात किए गए थे। लेकिन अब अतुल राजस्थान डेट फार्म लि. द्वारा जोधपुर लैब में टिश्यू कल्चर पौधे तैयार कर किसानों को दिए जा रहे हैं।

श्री गंगानगर में 58 साल पहले 10 पौधों से संतरे के विकल्प रसीले किन्नू की शुरुआत हुई थी और अब 11 हजार हेक्टेयर में **किन्नू के बाग** लगे हैं श्रीगंगानगर, करणपुर, पद्मपुर, सादुलशहर, रायसिंह नगर, विजयनगर, अनूपगढ़, सूरतगढ़ व घड़साना में। ड्रिप सिस्टम से सिंचाई होने से इस गंगानगरी किन्नू की क्वालिटी बेहतर है। इसमें अम्लता कम होने से मिठास है, छिलका पतला है और इसे 25-40 दिन तक स्टोर किया जा सकता है। यह माल्टा व संतरे का विकल्प बन गया है। अंतरराष्ट्रीय बाजार में, इसकी गुणवत्ता के कारण, इतनी मांग होने लगी है कि स्थानीय मांग की पूर्ति कठिनाई से होती है। इसी तरह कोटा का **इजरायली संतरा** भी अब अपनी अलग पहचान बना चुका है। यहां संतरे की 9 प्रजातियां उगाई जा रही है जिनमें इजराइल, अमेरिका और मिडल ईस्ट की प्रजातियां शामिल हैं। इजरायली वैरायटी में रोग लगने की संभावना न के बाराबर है जिससे किसान इसे प्राथमिकता देते हैं। सवाई माधोपुर और टोंक जिलों के **अमरूद** पूरे देश में ही नहीं नेपाल और बांग्लादेश में पसंद किए जा रहे हैं। अकेले सवाईमाधोपुर में अमरूद की 8 किस्मों की पैदावार होती है। यहां हर साल करीब 3 लाख मिट्रिक टन अमरूद का उत्पादन होता है और 8 अरब का कारोबार होता है। टोंक जिले में 8000 हेक्टेयर में अमरूद के बाग हैं जिनसे किसानों को 5 से 10 लाख रुपयों की आय सालाना होती है।

जयपुर के निकट बस्सी के ढिंढोल स्थित सेंटर ऑफ एक्सीलेंस में **अनार** की चार बेहतर नस्लों वंडरफुल, भगवा, सुपर भगवा व मृदुला पर काम हो रहा है। सेण्टर की आठ बरस की मेहनत के बाद बाड़मेर, जालोर, श्रीगंगानगर, हनुमानगढ़, चित्तौड़गढ़, भीलवाड़ा, बूंदी, बारां, जोधपुर, पाली व बीकानेर जिलों में अनार का उत्पादन किया जा रहा है।

रत्नगर्भा अरावली :- राजस्थान में मेवाड़ की भूमि रत्नगर्भा है। जैसे यहां के राणा कुम्भा, राणा सांगा, राणा प्रताप जैसे नररत्न और नारीरत्न मीरांबाई प्रसिद्ध हैं वैसे ही **यहां की खाने संगमरमर, चांदी, सीसा, जस्ता जैसे रत्नों** के लिए प्रसिद्ध हैं। उदयपुर जिले की जावर, राजसमंद जिले का दरीबा व सिंदेसर खूर्द तथा भीलवाड़ा जिले की आगूचा खदानों से निकलने वाले जस्ता, सीसा, चांदी की आपूर्ति दुनिया भर में होती है। देश का 77 प्रतिशत (13.3 मिलियन मीट्रिक टन प्रतिवर्ष) जस्ता-सीसा यहां मिलता है। यहां लगभग 700 टन चांदी सालाना निकलती है। 900-1000 मीटर की गहराई में जस्ता-सीसा-चांदी का उत्खनन हो रहा है। इन खानों से सरकार को 9000 करोड़ रुपयों की रायल्टी सालाना प्राप्त होती है। उदयपुर व

राजसमंद जिलों की 700 खानों से 2000 टन सफेद मार्बल प्रतिदिन निकलता है जहां 45000 श्रमिक कार्यरत हैं। ऋषभदेव का ग्रीन मार्बल तथा सलूंबर का ऑनिक्स मार्बल प्रसिद्ध हैं। राजस्थान में दुनिया की सबसे प्राचीन पर्वतमाला अरावली के मेवाड़ क्षेत्रीय भाग में कभी 150 से अधिक खनिज मिलते थे। इतिहासज्ञ डॉ. श्रीकृष्ण जुगनू के अनुसार आगूचा, दरीबा व जावर खदानों का इतिहास 2500 साल पुराना है। यहां से निकलने वाली चांदी की पहचान यूनान और अरब तक थी। बाहर के लोग सोना देकर भी यहां की उत्तम चांदी खरीदते थे। कुंभलगढ़ और कोटड़ा में पन्ना की खानें थी तथा बांसवाड़ा के भूखिया क्षेत्र में 1500 साल पहले तक सोने की खाने हुआ करती थी। इसी तरह बीकानेर से 56 किमी. दूर कोलायत जहां अपने पवित्र सरोवर के लिए जाना जाता है वहीं यहां से निकलने वाला व्हाइट क्ले इसकी बड़ी पहचान है। कोलायत क्षेत्र की 205 खानों से निकलने वाला व्हाइट क्ले देश के विभिन्न भागों में सप्लाई होता है। बीकानेर जिले में जिप्सम की खाने भी हैं। कोलायत, खाजूवाला, पूगल, बज्जू, दंतौर तथा जामसर की जिप्सम खानों से खान विभाग को प्रतिवर्ष 60-70 करोड़ की आय होती है।

सिरेमिक पाउडर का बड़ा सप्लायर :- राजस्थान के अजमेर, राजसमंद, उदयपुर, डूंगरपुर, पाली, सिरोही, दौसा, बीकानेर, जयपुर, सीकर, भीलवाड़ा, टोंक सहित 20 जिलों में क्वार्टज फेल्सपार अर्थात सिरेमिक पाउडर की इकाइयां लगी हुई हैं। अकेले ब्यावर में ही इसकी 800 इकाइयां स्थापित हैं जिससे ब्यावर को सिरेमिक पाउडर का बड़ा क्लस्टर माना जाता है। चीन विरोधी लहर के कारण भारत और अन्य कई देशों द्वारा चीन से सिरेमिक टाइल्स के आयात में भारी कमी से गुजरात में सिरेमिक टाइल्स की नई इकाइयां लग रही हैं और पुरानी इकाइयों की क्षमता में विस्तार किया जा रहा है। गुजरात की इन इकाइयों को सिरेमिक पाउडर राजस्थान की इकाइयों के द्वारा भेजा जाता है। राजस्थान में सिरेमिक की 4000 इकाइयां हैं जिनमें 80,000 श्रमिकों को रोजगार प्राप्त है। रोजाना प्रत्येक इकाई द्वारा 30 टन पाउडर के औसतन उत्पादन के हिसाब से राजस्थान में सिरेमिक का 3.6 करोड़ टन उत्पादन सालाना होता है और 2000 रु. प्रति टन औसत के हिसाब से सालाना 7,200 करोड़ रुपयों का कारोबार होता है।

दुनिया दीवानी जयपुर के रत्नों-रत्नाभूषणों की :- सोने चांदी की आभूषण कारीगरी के लिए बंगाल और महाराष्ट्र प्रसिद्ध हैं तो रत्नजड़ित आभूषणों व रत्न उत्पादन के लिए राजस्थान प्रसिद्ध है। राजस्थान की राजधानी जयपुर में दुनिया भर के रंग-रंगीले कीमती और अर्धकीमती रत्नों की खरड़ (रफ) लाई जाकर तराशी जाती है। बारीकी से तराशी खरड़ से निकले हीरा, पन्ना, माणक, पुखराज की चमक के दुनिया भर में दीवाने हैं। इन रत्नों को सोना, चांदी, पंचधातु, अष्टधातु की विभिन्न डिजाइनों में जड़कर आभूषण तैयार किये जाते हैं। आजादी से पहले जयपुर राजघराने ने रत्न तराशों और जड़ियों (जड़ित आभूषण के कारीगरों) को जयपुर में बसाया था। इस तरह जयपुर की जेम्स-ज्वैलरी का इतिहास 300 साल पुराना है और अभी डेढ़ लाख कारीगर इस काम में लगे हैं। देश के अलावा अमेरिका, यूरोप, जापान, चीन, हांगकांग, आस्ट्रेलिया, अफ्रीका व खाड़ी देशों में जयपुर की जेम्स ज्वैलरी पसंद की जाती है। गत वित्तीय वर्ष में रंगीन रत्नों और जेम्स ज्वैलरी का निर्यात 4500 करोड़ रुपयों का था।

कपड़े पर प्रिंट : मन मोह ले :- जयपुर के सांगानेर व बगरू में कपड़े पर ठप्पों द्वारा हाथों से छपाई का काम होता है जिसकी दुनिया भर में मांग है। जयपुर में लकड़ी से बने हैंड ब्लॉक से प्रिंटिंग का यह काम 280

वर्ष पुराना है, तब जयपुर बसाने वाले महाराजा जयसिंह (प्रथम) ने यह काम करने वाली छींपा जाति के लोगों को यहां की द्रव्यवती नदी के किनारे बसाया था। अभी लाखों मीटर सफेद कपड़ा रोज रंगा जाता है, तत्पश्चात इस पर देवता, पशुपक्षी, वृक्ष-लतादिक सहित विभिन्न आकर्षक डिजायनों की प्रिंटिंग का काम होता है जो तीन तरह का है-- मशीन प्रिंट, हैंड स्क्रीन प्रिंट और हैंड ब्लॉक या ठप्पा प्रिंट। सालाना 1500-2000 करोड़ रुपयों के इस कारोबार में 3 लाख कारीगर लगे हुए हैं।

जहां न कच्चा माल न कारीगर, फिर भी उद्योगों का गढ़ :- गत 3 दशकों में जोधपुर उद्योगों का गढ़ बन गया है। मजे की बात यह कि यहां के विभिन्न उद्योगों में लगे अधिकांश व्यवसायी जोधपुर के नहीं हैं और कारीगर श्रमिक भी यूपी, बिहार, बंगाल अथवा राजस्थान के दूसरे जिलों के हैं। यही नहीं सभी उद्योग का रा-मैटिरियल भी बाहर से मंगाया जाता है, यहां केवल मैन्यूफैक्चरिंग या प्रोसेसिंग होती है, जिसकी देश भर में खूब मांग है। यहां 30 हजार टन स्टील का पाटा पट्टी बनता है, 10 हजार टन का बर्तन बनता है। लकड़ी यहां नहीं होती, पर यहां का हैण्डीक्राफ्ट विश्व विख्यात है, केरल में चलने वाली नाव यहां बनती है। पूरे देश से कपड़ा यहां हैंड प्रोसेस के लिए आता है और प्रतिदिन 8 लाख मीटर कपड़ा हैंड प्रोसेस होता है। प्लास्टिक, केमिकल व अन्य उद्योगों का कच्चा माल भी बाहर से आता है। यहां उद्योगों की 8651 इकाइयां कार्यरत है जिनका सालाना टर्नओवर 30500 करोड़ रुपए है और इनसे 5,20,000 लोगों को रोजगार प्राप्त है।

.... और यह वस्त्र नगरी :- भारत का मैनचेस्टर कहलाने वाले, राजस्थान के भीलवाड़ा में टेक्सटाइल उद्योग की शुरुआत 1936 में हुई जब मेवाड़ राज्य द्वारा कपास की जिनिंग इकाई की स्थापना पेच एरिया में की गई और फिर 1938 में मेवाड़ टेक्सटाइल मिल की स्थापना हुई जिसमें स्पिनिंग वीविंग के अलावा मेटेक्स बनियान का उत्पादन शुरू हुआ, तब इसका वार्षिक टर्न ओवर 30 लाख रुपये था। 1962 में राजस्थान स्पिनिंग मिल्स की स्थापना हुई जिसकी पहली इकाई सूती वस्त्र की थी। 1970 में धागे के लिए पोलियस्टर विस्कॉस उत्पादन शुरू हुआ और 1975 में भीलवाड़ा सिन्थेटिक्स लि. (बीएसएल) नाम से 24 लूम की पहली शूटिंग इकाई लगी। 1978-80 में तीन, 1984 में 30-35 इकाइयां लगी और फिर 2005-06 से इकाइयों की संख्या तेजी से बढ़ने लगी जिनका सालाना टर्न ओवर 17 हजार करोड़ हो गया है और संबंधित अन्य उद्योगों को जोड़ें तो यह 35 हजार करोड़ तक पहुंच जाता है। 1992-94 में मुम्बई ब्लॉस्ट के बाद यहां सिंथेटिक वस्त्र उद्योग ने गति पकड़ी। 2005-06 में मल्टी फाइबर समझौता समाप्त हो जाने पर भीलवाड़ा अंतरराष्ट्रीय परिदृश्य में ऐसा उभरा कि अब वह वस्त्र नगरी के नाम से विख्यात हो गया है। यहां स्पिनिंग व प्रोसेसिंग की 20-20 और वीविंग की 400 इकाइयां हैं जिनसे एक लाख लोगों को रोजगार मिला हुआ है। यहां से प्रतिवर्ष 1200 करोड़ का धागा 60 देशों में निर्यात हो रहा है। भीलवाड़ा, सूटिंग शर्टिंग में दुनिया में अव्वल है तो डेनिम में देश में दूसरे नम्बर पर है। भीलवाड़ा सूटिंग की बिक्री पूरे भारत के अलावा बांग्लादेश, विएतनाम, श्रीलंका व पश्चिमी एशिया एवं अफ्रीकी देशों में हो रही है जिसका मूल्य सालाना 600 करोड़ रुपए है। कोरोना काल में भीलवाड़ा में वायरस रोधी कपड़े का उत्पादन भी प्रारंभ कर दिया गया है। भीलवाड़ा में 85 हाईस्पीड निटिंग मशीन लगी हैं जिनसे बनियान व टीशर्ट का कपड़ा बनता है। एक मशीन से 500-600 किलो कपड़ा प्रतिदिन उत्पादित होता है। स्वेटर बुनने की तकनीक से उत्पादित इस होजरी गारमेंट कपड़े का 30 प्रतिशत निर्यात होता है। उल्लेखनीय है कि वस्त्र नगरी भीलवाड़ा में प्रति व्यक्ति आय

प्रदेश की प्रति व्यक्ति आय से 34 प्रतिशत अधिक है।

देश का 40 प्रतिशत सरसों तेल राजस्थान से :- देश में सरसों का उत्पादन 75 लाख टन तक है जिसमें से 40 प्रतिशत अर्थात 30 लाख टन का उत्पादन राजस्थान के विभिन्न जिलों में होता है और इसमें से 4 लाख टन का उत्पादन अकेले अलवर जिले में होता है। प्रदेश में लगभग 27 लाख हेक्टेयर में सरसों की बुआई होती है जिसमें से अकेले अलवर में 2.66 लाख हैक्टेयर में बुआई का रकबा है। प्रदेश में लगभग 300 बड़ी और 8000 छोटी इकाइयों के द्वारा 24 लाख टन से ज्यादा सरसों क्रशिंग के साथ 7 लाख टन से ज्यादा सरसों तेल का उत्पादन हो रहा है। इन इकाइयों में डेढ़ लाख लोगों को प्रत्यक्ष और बड़ी तादाद में लोगों को परोक्ष रोजगार मिला हुआ है। राजस्थान से हर साल बंगाल, उ. प्र., बिहार, उड़ीसा, महाराष्ट्र तथा पूर्वी एवं दक्षिण भारतीय राज्यों को पांच लाख टन सरसों तेल की आपूर्ति होती है। प्रदेश से सबसे अधिक आपूर्ति करने वाला जिला अलवर है जहां 50 से अधिक मिलें हैं जिनमें 875 टन सरसों तेल का उत्पादन होता है। अब तो अलवर में निर्मित सरसों तेल बांग्ला देश, श्रीलंका, जापान और खाड़ी देशों को निर्यात भी किया जा रहा है।

रेगिस्तान में इकोफ्रेंडली स्कूल भवन :- थार रेगिस्तान में जैसलमेर के गांव कनोई में 400 बच्चियों के लिए निर्मित इको फ्रेंडली अण्डाकार भवन में 10वीं तक स्कूल, हैंडीक्राफ्ट प्रोशक्शन के लिए को-आपरेटिव तथा एक प्रदर्शनी हॉल है। इस राजकुमारी रत्नावती गर्ल्स स्कूल एण्ड विमन सेंटर के निर्माण में सीआईटीटीए (शैक्षिक फाउंडेशन) के साथ जैसलमेर के पूर्व राज परिवार का सहयोग प्राप्त हुआ है। इस भवन में कमरों की डिजाइन ऐसी है कि दिन में इनके पर्याप्त रोशनदानों से वे अपने आप रोशन रहेंगे और इनमें हवादार झरोखे होने से पंखे लगाने की भी आवश्यकता नहीं है। खास बात यह कि इन झरोखों से हवा के साथ रेत अंदर नहीं आएगी। स्कूल के आंगन में वाटर हार्वेस्टिंग की सुविधा है तथा रूफटॉप व भूमिगत स्ट्रक्चर के अलावा वॉटर कलेक्शन रिजर्वायर बनाए गए हैं। इससे 100 प्रतिशत वर्षाजल एकत्र होगा। छत पर सोलर पैनल लगे हैं जिनसे भवन में खर्च होने वाली पूरी बिजली का उत्पादन होगा। भीषण गर्मी में भी इस भवन में ठंडक रहेगी, इसके निर्माण में स्थानीय पारंपरिक निर्माण सामग्री का इस्तेमाल किया गया है। इस भवन के अनूठे आर्किटेक्चर को, सेस्टेनेबल डिजाइन के कारण एडी 100 एक्सीलेंस अवार्ड (2018-19) मिल चुका है। न्यूयार्क की एवार्ड विनर आर्किटेक्ट डायना ने इस भवन को डिजाइन कर इस प्रोजेक्ट को ऑनलाइन सुपरवाइज भी किया।

... अंत में इस जज्बे को सलाम :- कोविड-19 वैक्सीन की जयपुर के अग्रसेन हास्पिटल में चली क्लीनीकल ट्रायल में डॉ. मनीष जैन ने 1000 लोगों पर ट्रायल के लक्ष्य को पार कर 1160 ट्रायल की, जबकि दूसरे राज्यों में तब सैकड़ों तक भी संख्या नहीं पहुंची थी। ट्रायल में जान जोखिम के उस माहौल में, परिवार के बहुत मना करने पर भी एयरफोर्स से रिटायर 78 वर्षीय श्री शंभु सिंह भी शामिल हुए, कहा-- एयरफोर्स दुश्मनों की हवाइयां उड़ा देती है, फिर मैं स्वदेशी वैक्सीन से कोरोना के छक्के छुड़ाने में पीछे क्यों रहूं। इसी तरह 36 वर्षीय पैरों से दिव्यांग आशा अग्रवाल (बी.काम. एलएलबी) भी ट्रायल में शामिल हुई, कहा-- स्वदेशी वैक्सीन की सफलता की सीढ़ी में एक कदम मेरा भी। सलाम ! इस जज्बे को। जयहिन्द, जय राजस्थान।

- डॉ. बाबूलाल शर्मा

स्वत्वाधिकारी भारतीय विद्या मन्दिर, कोलकाता के लिए सचिव शंकरलाल सोमानी द्वारा कल्याणी प्रिंटर्स, अलखसागर रोड, बीकानेर के लिए कंप्यूटर-एन-मीडिया, 25ए, सी.आर. एवेन्यू, कोलकाता-72 में मुद्रित एवं भारतीय विद्या मंदिर से प्रकाशित। संपादक-डॉ. बाबूलाल शर्मा।

दर्शक दीर्घा में बाएं से- नन्दकिशोरजी जालान,
परमानन्दजी चूड़ीवाल, मूंधड़ाजी एवं रमणलालजी बिन्नाणी।

श्री मूंधड़ा द्वारा ज. गु. शंकराचार्य स्वामी स्वरूपानन्दजी
महाराज का स्वागत, मध्य में प्रो. कल्याणमल लोढ़ा।

संस्था के संस्थापक श्री एम. डी. मूंधड़ा का शाल उढ़ाकर
सम्मान करते हुए कविवर श्री कन्हैयालाल सेठिया (पद्मश्री)।

'मनीषा' संस्था द्वारा मूंधड़ाजी का सम्मान।

प्रसिद्ध ठुमरी गायिका गिरिजादेवी (पद्मभूषण)
द्वारा मूंधड़ाजी का सम्मान।

मूंधड़ाजी की पुस्तक 'रसो वै सः' के लोकार्पण में बाएं से-
भँवरलालजी कोठारी, सत्यनारायणजी पारीक, ले. ज. चिमनसिंहजी
तथा आसनस्थ स्वामी सोमेश्वरानंदजी, मुढ़्ढे पर मूंधड़ाजी।

VAICHARIKI Bi-Monthly • ₹50/- Mar-Apr/May-June 2021 R.N.I. No. 22298/71

From

BHARATIYA VIDYA MANDIR

12/1, Nellie Sengupta Sarani

Kolkata - 700087 *(W.B.)*

TO

नई दिल्ली के डी एल एफ की बहुमंजलीय निर्माणाधीन साइट का निरीक्षण एवं वरिष्ठ इंजीनियरों से परामर्श करते हुए डॉ. बी. डी. मूंधड़ा

भारतीय विद्या मंदिर द्वारा प्रधानमंत्री कौशल विकास प्रशिक्षण योजना के अंतर्गत नई दिल्ली के द्वारिका केंद्र का उद्घाटन करते हुए डॉ. बी. डी. मूंधड़ा एवं कर्नल एन. बी. सक्सेना

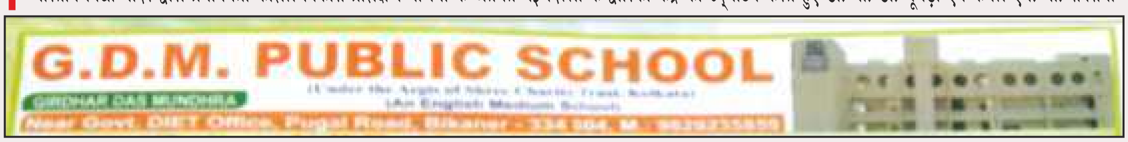

श्री चैरिटी ट्रस्ट बीकानेर के प्रांगण स्थित जी.डी.एम. पब्लिक स्कूल में बच्चों के मध्य डॉ. बी.डी. मूंधड़ा